भारत में उच्च शिक्षण संस्थाओं की दशा

अभिषेक तिवारी

सहायक आचार्य (शिक्षक शिक्षा संकाय)
नेहरू ग्राम भारती डीम्ड टू बी यूनिवर्सिटी,
इलाहाबाद।

भारत में उच्च शिक्षण संस्थाओं का बहुत ही समृद्ध एवं गौरवशाली इतिहास रहा है। जब संसार मे उच्च शिक्षण केन्द्रों की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी, उस वक्त भारत में तक्षशिला, नालन्दा जैसे उच्च शिक्षा के बहुत ही समृद्ध केन्द्र हुआ करते थे।

परन्तु आज भारत में उच्च शिक्षण संस्थाओं का परिदृश्य एकदम विपरीत दिखाई पड़ता है एक समय जहां हम सर्वश्रेष्ठ शिक्षण संस्थान होने पर गर्व करते थे वहीं आज भारत के उच्च शिक्षण संस्थान विश्व स्तर के अनुरूप नहीं हैं। इसके लिये वर्तमान व्यवस्थाएं तथा सरकार की नीतियां दोषी हैं। आज यह विचारणीय प्रश्न है कि उच्च शिक्षण संस्थाओं की उचित निगरानी प्रक्रिया होने के बावजूद यह संस्थाएं इतनी निम्न स्तर की क्यों हैं।

इसके लिये कहीं न कहीं हमारी शिक्षण संस्थाओं की निरीक्षण प्रणाली में ही बहुत बड़ा दोष है जिसको समय रहते दूर करना अत्यन्त आवश्यक है यदि हम देश के उच्च शिक्षण संस्थाओं में सुधार चाहते हैं तो इसके लिये जमीनी स्तर पर कार्य करना चाहिए। नियम ऐसे बनाए जायें जिसका पूरा पालन किया जाये तथा उच्च शिक्षण संस्थाओं की सुधार प्रक्रिया स्पष्ट परिलक्षित होनी चाहिए।

वर्तमान में बहुत से ऐसे महाविद्यालय हैं जहां पर उचित तथा अनिवार्य संसाधन ही नहीं हैं। तथा वह केवल अंकपत्र प्रदान करने वाले केन्द्र के रूप में ही सिमटकर रह गये हैं। फिर भी वे वर्तमान व्यवस्था में अपना अस्तित्व बनाए हुए हैं इससे कहीं न कहीं हमारे छात्रों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। तथा वे सम्बन्धित कोर्स से जुड़े अन्य कार्यक्रमों की कोई जानकारी नहीं रखते हैं। इसका प्रमुख कारण यह है कि उन्हें अपने शिक्षण संस्थाओं में छात्रों के लिये अनिवार्य सुविधाएं नहीं मिल पा रही हैं।

वर्तमान भारत की उच्च शिक्षण संस्थाओं की दुर्दशा का एक प्रमुख कारण यह भी है कि आज भी उच्च शिक्षण संस्थाओं में पुराने एवं परम्परागत कोर्स ही संचालित किये जा रहे हैं। जबकि आज की आवश्यकता व्यवहारिक एवं रोजगार परक कोर्स के संचालन की है। परन्तु इस दिशा में उच्च शिक्षण संस्थाओं के संचालन के लिये जिम्मेदार लोग उचित ध्यान नहीं दे पा रहे हैं, जिसके कारण यह देखा जाता है कि छात्र जब इन परम्परागत विषयों के अध्ययन में रूचि नहीं लेते हैं तब संस्था के वित्तीय संचालन पर इसका सीधा असर पड़ता है। तथा यदि ऐसा

लगातार रहा तो संस्था समय के साथ साथ अपनी उपयोगिता खुद बखुद खत्म कर देगी, तथा वित्तीय संकट के कारण संस्था का विकास प्रभावित हो जाता है।

उच्च शिक्षण संस्थाओं की दुर्दशा का एक प्रमुख कारण यह है कि आज वर्तमान में उच्च शिक्षा प्रदान करने के केन्द्र आश्चर्यजनक रूप से अत्यधिक मात्रा में खुलते जा रहे हैं। तथा इन उच्च शिक्षा केन्द्रों में प्रायः यह देखा जाता है कि उचित गुणवत्ता का ध्यान नहीं रखा जाता तथा प्रायः यह दिखाई पड़ता है कि अयोग्य एवं अप्रशिक्षित शिक्षकों द्वारा अध्यापन कार्य कराया जाता है जिससे कि शिक्षा का स्तर निम्नतम होता जा रहा है यदि योग्य शिक्षक की नियुक्ति की जाती है तो उसे उचित पारिश्रमिक प्रदान नहीं किया जाता है जिससे वह भी अध्यापन कार्य रूचिपूर्वक नहीं करता है। अब यह तो सामान्य वक्तव्य है कि **''असंतुष्ट शिक्षकों से किसी भी संस्था की उन्नति की कल्पना करना दिवास्वप्न के समान है।''** आज हमारे देश के उच्चशिक्षण संस्थाओ के स्तर मे जो गिरावट आई है। उसका असर आज हमे गुरू शिष्य सम्बन्धो पर भी स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है हमारे देश मे गौरवशाली गुरू शिष्य परम्परा का इतिहास रहा है। परन्तु आज वो परम्परा लुप्त सी होती जा रही है। नालंदा तक्षशिला जैस उच्च कोटि के शिक्षण संस्थान देने वाले देश मे वर्तमान उच्च शिक्षण संस्थाओ कि दशा मन को व्यथित करती है और बार–बार यह प्रश्न करती है। कि इतने गौरवशाली इतिहास होने के बाद भी वर्तमान मे हम किस स्थिति मे है, तथा पूरी दुनिया मे हमारा क्या स्थान है।

भारत की उच्च शिक्षण संस्थाओं की दुर्दशा का एक प्रमुख कारण यह भी है कि आज भी उच्च शिक्षण संस्थाओं में पुराने एवं परम्परागत कोर्स ही संचालित किये जा रहे हैं। किसी भी उच्च शिक्षा संस्थाान का महत्व एवं उपयोगिता वहां होने वाले मौलिक शोध कार्यों द्वारा ही होती है। उच्च शिक्षण संस्थानों में शोध कार्य की गुणवत्ता में गिरावट आ गयी है, छात्र मौलिक कार्य करना नहीं चाहते तथा शिक्षक उनसे मौलिक कार्य करवाने में रूचि भी नहीं दिखाते हैं।

आज उच्चशिक्षण संस्थाओ की जो स्थिति है उसमे कहीं न कहीं शिक्षा तथा उसके प्रशासन मे राजनीति व्यवस्था की गैरजरूरी दखलंदाजी है, जिसकी वजह से हमारे उच्च शिक्षण संस्थाओ की दशा सोचनीय होती जा रही है।

आज हमारे उच्चशिक्षण संस्थओ का आलम यह है कि हमारे देश के एक प्रतिष्ठित उच्चशिक्षण संस्था मे देश विरोधी स्वर तक सुनाई पड़ जाते है जबकि एक उच्चशिक्षण संस्था उच्चबैद्विक वर्ग का प्रतिनिधित्त करती है, पारन्तु आज इन संस्थाओ मे जो देश विरोधी कार्य दिखाई पड़ रहे है, उससे सहज ही कल्पना की जा सकती है, कि हमारे उच्च शिक्षण संस्थाओ की स्थिति क्या है, तथा उसमे किस तरह की भावना का विकास हो रहा है। तथा क्या किसी भी देश या सभ्य समाज के लिए स्वीकार्य हो सकता है, कि उसके शिक्षण संस्थाओ मे देश विरोध भावना का जन्म एवं विकास हो यह एक विचारणीय प्रश्न है।

यदि हम संस्था की दृष्टि से देखे तो भारत की उच्चतर शिक्षा व्यवस्था अमेरिका एवं चीन के बाद तीसरे नम्बर पर आती है लेकिन जहॉ तक गुणवत्ता की बात हो तो हमारा कोई

भी संस्थान विश्व के शीर्ष 200 संस्थाओ मे भी शामिल नही है यह स्थिति हमारी उच्च शिक्षण संस्थाओ की दशा को स्पष्ट रूप से रेखांकित करती है।

उच्च शिक्षण संस्थाओ की बिगड़ती दशा का एक प्रमुख कारण जनसंख्या के अनुपात मे पर्याप्त मात्रा मे गुणवत्ता पूर्ण उच्चशिक्षण संस्थान नही है, और जो है भी उनमे से अधिकांश मे समय से शिक्षको कि नियुक्ति नहीं कि जाती है, जिससे कि तय मानक से कम शिक्षको द्वारा ही संस्था का संचालन किया जाता है इससे संस्थाओ की गुणवत्ता प्रभावित होती है तथा छात्रो को उचित मार्गदर्शन नहीं मिल पाता है और इस निम्न गुणवत्ता की वजह से ही योग्य व्यक्तियो को उनकी योग्यता के बराबर का कार्य नही मिल पाता है।

अब यदि चतुर्थ श्रेणी की नौकरी के लिए बी0टेक0, एम0बी0ए0 पी0एच0डी0 जैसे कोर्स किये हुये छात्र आवेदन कर रहे है तो यह सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि हमारे देश की वर्तमान उच्च शिक्षण संस्थाओ की दशा एवं गुणवत्ता का क्या आलम है

उच्च शिक्षण संस्थाओ की महत्ता को समझते हुये राधाकृष्णन विश्वविद्यालय आयोग ने इन्हे किसी राष्ट्र के आन्तरिक जीवन के लिये महत्वपूर्ण माना है इससे स्पष्ट होता है कि उच्च शिक्षा तथा उच्च शिक्षण संस्थान राष्ट्रीय चेतना के लिये कितना महत्वपूर्ण अंग है उच्च शिक्षा जो की राष्ट्र की आधारशिला होती है उसमे गुणवत्ता एक महत्वपूर्ण तत्व है जिसे किसी भी हालत मे अनदेखा नही किया जा सकता है।

उच्च शिक्षा के गुणवत्ता के संदर्भ मे होने वाले विभिन्न शोधों मे यह बात स्पष्ट रूप से निकल कर आई है कि हमारे उच्च शिक्षा प्राप्त नौवजावनो मे से 70 प्रतिशत से अधिक अकुशल है जो कि आधुनिक तकनीकि के अनुरूप कार्य करने मे सक्षम नही है यह हमारे देश कि उच्च शिक्षा संस्थाओ कि गुणवत्ता एवं दशा को स्पष्ट रूप से उजागर कर देती है।

किसी भी उच्च शिक्षा संस्थाान का महत्व एवं उपयोगिता वहां होने वाले मौलिक शोध कार्यों द्वारा ही स्पष्ट होती है इस नजरिये से देखें तो हमारे उच्च शिक्षण संस्थाओं की स्थिति संतोषजनक नहीं कही जा सकती आज हम देख रहे हैं कि देश के उच्च शिक्षण संस्थानों में शोध कार्य की गुणवत्ता में गिरावट आ गयी है, छात्र मौलिक कार्य करना नहीं चाहते हैं तथा शिक्षक उनसे मौलिक कार्य करवाने में रूचि भी नहीं दिखाते हैं। इसके विपरीत छात्र एवं शिक्षक अपनी अपनी समस्याओं का समाधान तलाशने के बजाय उस पर राजनीति करते हैं आज उच्च शिक्षण संस्थाएं अपने अध्ययन के कारण नहीं बल्कि अन्य कारणों से चर्चा में रहती हैं, इससे कहीं न कहीं इन संस्थाओं की दशा का स्पष्ट ज्ञान हो जाता है।

हमारे देश में उच्च शिक्षण संस्थाओं के संचालन के लिये कई कठोर नियम नहीं हैं परन्तु उन नियमों का पूर्णतः पालन किया जाना जब तक सुनिश्चित नहीं होगा तब तक हमारे देश की उच्च शिक्षण संस्थाओं की स्थिति में सुधार की उम्मीद नहीं की जा सकती है। उच्च शिक्षण संस्थाओं को मान्यता प्रदान करने वाली तथा उनकी निगरानी करने वाली संस्थाओं में व्याप्त भ्रष्टाचार भारत में उच्च शिक्षण संस्थाओं की वर्तमान दुर्दशा के लिये उत्तरदायी है।

उच्चतर माध्यमिक स्तर पर सरकारी एवं गैर सरकारी विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण का तुलनात्मक अध्ययन

कृपा शंकर यादव

असिस्टेन्ट प्रोफेसर
बी0 एड0 विभाग
रघुवीर महाविद्यालय
थलोई, भिखारीपुर कलॉ जौनपुर

शिक्षा मानवीय समाज का आधारभूत तत्व होता है। किसी भी व्यक्ति या समाज को देखकर हम उसकी शिक्षा व्यवस्था का आकलन कर सकते हैं। शिक्षा को सदैव से ही समाज तथा राष्ट्र की प्रगति के एक महत्वपूर्ण तथा शक्तिशाली साधन के रूप में स्वीकार किया जाता है। यही कारण है कि प्राचीनकाल से लेकर आधुनिक काल तक सदैव ही शिक्षा को सामाजिक तथा राष्ट्रीय विकास की दृष्टि से एक सम्मानजनक स्थान दिया जाता रहा है। शिक्षा ही किसी समाज की दिशा निर्देशक, सुधारक एवं पथ प्रदर्शक होता है। समाज की आवश्यकता के अनुरूप ही शिक्षा व्यवस्था का निर्धारण किया जाता है। किसी समाज का उद्देश्य उसकी शिक्षा के उद्देश्य में परिलक्षित होता है। शिक्षा के उद्देश्य से समाज के उद्देश्यों की पूर्ति होती है। देशकाल परिस्थिति जन्य शिक्षा के उद्देश्यों में परिवर्तन होता रहता है। शिक्षा ही वह माध्यम है जो व्यक्ति के अन्तर्मन में उपस्थित अविद्या रूपी अंधकार को दूर करके उसे ज्ञान रूपी प्रकाश की ओर ले जाती है।

व्यापक अर्थ में शिक्षा आजीवन चलने वाली प्रक्रिया है। व्यक्ति जन्म से मृत्यु तक जो कुछ सीखता है और अनुभव करता है वह सब शिक्षा है। इस अर्थ में सम्पूर्ण संसार शिक्षा का क्षेत्र है, प्रकृति एवं सभी सामाजिक संस्थाएं तथा प्रत्येक प्राणी शिक्षक है। प्रत्येक प्राणी का सम्पूर्ण जीवन काल शिक्षा है। प्राचीन काल में शिक्षा की विषय वस्तु दार्शनिक आधार पर ही निर्धारित की जाती थी। लेकिन मनोविज्ञान के उद्भव के बाद शिक्षण प्रक्रिया में अभूतपूर्व परिवर्तन हुआ। शिक्षण प्रक्रिया में मनोवैज्ञानिक और सामाजिक आधार को महत्व मिला। वर्तमान में समस्त शिक्षण प्रक्रिया में तीन चीजें शामिल होती हैं– शिक्षक, शिक्षार्थी और पाठ्यक्रम। इन सबके साथ–साथ अब एक चौथा तत्व भी अति महत्वपूर्ण हो गया है वह है शैक्षिक वातावरण। इनमें से किसी एक की भी अनुपस्थिति शिक्षण प्रक्रिया को प्रभावित करती है तथा रोक सकती है।

आधुनिक शिक्षा व्यवस्था में शिक्षण प्रक्रिया को कई स्तरों में बांटा गया है। जैसे प्राथमिक स्तर, जूनियर स्तर, माध्यमिक स्तर, उच्चतर माध्यमिक स्तर और उच्च स्तर आदि। माध्यमिक स्तर की शिक्षा भी तीन भागों में बांटी गयी है– पुर्व माध्यमिक, माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक। 6 से 12 कक्षा तक की शिक्षा इस वर्ग में आती है।

शिक्षा का प्रमुख कार्य और उद्देश्य व्यक्ति को उसके वास्तविक स्वरूप से परिचित कराना है। उचित लोकतंत्र का विकास, सभ्य नागरिकों को निर्माण, राष्ट्रीयता की भावना का विकास, व्यक्ति के आत्मविश्वास, स्वाभिमान को जागृत करना, उसे आत्मनिर्भर बनाना, सामाजिकता के गुणों का विकास करना, आदि शिक्षा के प्रमुख कार्य है।

शिक्षा का कोई भी स्तर इससे अछूता नही है। क्योंकि शिक्षा मानव समाज की मूल आवश्यकता है, इसलिए इस व्यावसायिक दौड़ में यदि बालक का समुचित विकास अति आवश्यक है। यह तभी संभव है। जब बालक को उचित पारिवारिक और शैक्षिक वातावरण मिले। विद्यालय का शैक्षिक वातावरण बालक के व्यक्तित्व विकास में महती भूमिका निभाता है। माध्यमिक स्तर पर निजी क्षेत्र के और सरकार द्वारा पोषित विद्यालय बड़ी संख्या में उपलब्ध हैं। अलग–अलग स्थानों पर इनके शैक्षिक वातावरण के बारे में लोगों के भिन्न–भिन्न मत हैं। ऐसे में निजी क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों एवं सरकार द्वारा पोषित माध्यमिक विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण का तुलनात्मक अध्ययन अति महत्वपूर्ण और प्रासंगिक है।

प्राचीनकाल से लेकर आधुनिक काल तक सदैव ही शिक्षा को सामाजिक तथा राष्ट्रीय विकास की दृष्टि से एक सम्मानजनक स्थान दिया जाता रहा है। शिक्षा ही किसी समाज की दिशा निर्देशक, सुधारक एवं पथ प्रदर्शक होता है। समाज की आवश्यकता के अनुरूप ही शिक्षा व्यवस्था का निर्धारण किया जाता है। किसी समाज का उद्देश्य उसकी शिक्षा के उद्देश्य में परिलक्षित होता है। शिक्षा के उद्देश्य से समाज के उद्देश्यों की पूर्ति होती है।

शिक्षा की आवश्यकता को पूरा करने के लिए सरकार ने निजी प्रयासों द्वारा विद्यालय स्थापित करने की नीति को प्रोत्साहित किया। इसका परिणाम भारी संख्या में विद्यालयों की स्थापना के रूप में सामने आया है। कई एकड़ क्षेत्रफल के विद्यालय से लेकर दो कमरों के विद्यालय भी स्थापित हो गये हैं। सरकार द्वारा पोषित विद्यालय में भारी असमानता दिखाई पड़ता है। कुछ विद्यालय अधिक साधन सम्पन्न हैं। कुछ की आर्थिक दशा सोचनीय है। चूंकि ये विद्यालय अपने शुल्क द्वारा ही पोषित होते हैं। अतः इसके प्रबन्धतंत्र का हर सम्भव प्रयास अत्यधिक धन उगाही पर रहता है। इतनी विषमताओं में अध्ययन करने के परिणाम स्वरूप छात्रों के शैक्षिक विकास पर क्या प्रभाव पड़ता है, सोचनीय प्रश्न है। हर गली मुहल्ले में हमें ऐसे विद्यालय देखने को मिल जाते हैं, वहीं अनुदानित विद्यालयों में एकरूपता पाई जाती है। ये सरकार के मानकों के अनुरूप होते हैं। गैर सरकारी विद्यालय झूठे तथ्य प्रस्तुत कर मान्यता प्राप्त कर लेते हैं। ऐसे व्यावसायिक दौड़ में कहीं विद्यालय का शैक्षिक वातावरण तो प्रभावित नहीं हो रहा है, यह विचारणीय प्रश्न है। शिक्षा के वातावरण के सम्बन्ध में हक्सले महोदय का कथन उल्लेखनीय है। उनके शब्दों में ''शिक्षा का पर्यावरण शिक्षालय द्वारा निर्धारित होता है जिसमें कि माली रूपी शिक्षकों की देखरेख में बालक रूपी पौधे विकसित होते हैं। फलस्वरूप वातावरण ही सब कुछ है।'' इस कथन से शैक्षिक वातावरण का महत्व स्वयं स्पष्ट हो जाता है। ऐसे में इस प्रत्यय पर अध्ययन की आवश्यकता को नकारा नहीं जा सकता है।

अध्ययन का शीर्षक–

उच्चतर माध्यमिक स्तर पर सरकारी एवं गैर सरकारी विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण का तुलनात्मक अध्ययन।

अध्ययन का उद्देश्य–

अध्ययन के विशिष्ट उद्देश्यों को निम्न प्रकार के वर्गों में वर्गीकृत किया है।

1. उच्च माध्यमिक स्तर पर सरकारी एवं गैर सरकारी बालक विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण का तुलनात्मक अध्ययन।
2. उच्च माध्यमिक स्तर पर सरकारी एवं गैर सरकारी बालिका विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण का तुलनात्मक अध्ययन।
3. उच्च माध्यमिक स्तर पर सरकारी बालक बालिका विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण का तुलनात्मक अध्ययन।
4. उच्च माध्यमिक स्तर पर गैर सरकारी बालक बालिका विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण का तुलनात्मक अध्ययन।
5. उच्च माध्यमिक स्तर पर सरकारी तथा गैर सरकारी के बालक एवं बालिका विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण का तुलनात्मक अध्ययन।

अध्ययन की परिकल्पनाएँ

प्रस्तुत अध्ययन में शून्य परिकल्पना निम्नवत है–

1. उच्च माध्यमिक स्तर पर सरकारी एवं गैर सरकारी बालक विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
2. उच्च माध्यमिक स्तर पर सरकारी एवं गैर सरकारी बालिका विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
3. उच्च माध्यमिक स्तर पर सरकारी बालक बालिका विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
4. उच्च माध्यमिक स्तर पर गैर सरकारी बालक बालिका विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
5. उच्च माध्यमिक स्तर पर सरकारी तथा गैर सरकारी के बालक एवं बालिका विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

अध्ययन प्रविधि–

प्रस्तुत शैक्षिक अध्ययन में सर्वेक्षण विधि अथवा वर्णनात्मक विधि का प्रयोग किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन में अध्ययनार्थी को उच्च माध्यमिक स्तर के सरकारी एवं गैर सरकारी विद्यालयो के शैक्षिक वातावरण का अध्यय करना था जिसके लिए उसने इलाहाबाद महानगर के चार विद्यालयों, जिसमें दो सरकारी और दो गैर सरकारी थे, का चयन किया। दो सरकारी विद्यालयों में एक बालक विद्यालय तथा दूसरा बालिका विद्यालय थे। इसी तरह दो गैर सरकारी विद्यालयों में एक बालक विद्यालय तथा दूसरा बालिका विद्यालय था। प्रस्तुत अध्ययन का प्रतिदर्श या न्यादर्श 200 का है। जो सरकारी तथा गैर सरकारी उच्च माध्यमिक विद्यालय के दो समूह में विभाजित है। छात्रो व छात्राओ का चयन उनकी कक्षा के आधार पर किया गया है। समस्त प्रतिदर्श में 11 वीं और 12 वीं कक्षा के छात्र छात्राओं को सम्मिलित किया गया। प्रत्येक

विद्यालय से 50 बच्चो का चुना गया। उपकरण के रूप में **एम.एल. शाह एवं अमिता शाह** द्वारा निर्मित है जिसे Academic climate desecription Questionneire (संक्षेप में ACDQ) का प्रयोग किया गया है। आँकड़ों के विश्लेषण हेतु क्रान्तिक–अनुपात का प्रयोग किया गाय है।

परिकल्पनाओं का परीक्षण–

H_1 = उच्च माध्यमिक स्तर पर सरकारी एवं गैर सरकारी बालक विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण में अन्तर है।

H_{01} = उच्च माध्यमिक स्तर पर सरकारी एवं गैर सरकारी बालक विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण में अन्तर नही है।

सारणी सं0– 1

उच्च माध्यमिक स्तर पर सरकारी एवं गैर सरकारी बालक विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण का मध्यमान, मानक विचलन एवं क्रान्तिक अनुपात

प्रशिक्षण संस्थान	छात्र सं0	मध्यमान	मानक विचलन	मानक त्रुटि	क्रान्तिक अनुपात	निष्कर्ष
सरकारी	50	123.60	6.69	1.72	3.06	सार्थक
गैर सरकारी	50	128.85	10.17			

सारणी संख्या 1 देखने पर ज्ञात होता है कि उच्चतर माध्यमिक स्तर पर सरकारी एवं गैर सरकारी बालक विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण के मध्यमान के मध्य परिगणित क्रान्तिक–अनुपात का मान 3.06 है जो कि .05 सार्थकता स्तर पर स्वतंत्रता अंश 98 के लिए दिये गये सारणी मान 1.98 से अधिक है अतः मध्यमान का अन्तर उक्त सार्थकता स्तर पर सार्थक है और शून्य परिकल्पना अस्वीकृत होती है तथा शोध परिकल्पना स्वीकृत होती है।

H_2 = उच्च माध्यमिक स्तर पर सरकारी एवं गैर सरकारी बालिका विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण में अन्तर है।

H_{02} = उच्च माध्यमिक स्तर पर सरकारी एवं गैर सरकारी बालिका विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण में अन्तर नही है।

सारणी सं0– 2

उच्च माध्यमिक स्तर पर सरकारी एवं गैर सरकारी बालिका विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण का मध्यमान, मानक विचलन एवं क्रान्तिक अनुपात

प्रशिक्षण संस्थान	छात्र सं0	मध्यमान	मानक विचलन	मानक त्रुटि	क्रान्तिक अनुपात	निष्कर्ष
सरकारी	50	124.42	10.98	2.13	2.69	सार्थक
गैर सरकारी	50	130.14	10.26			

सारणी संख्या 2 देखने पर ज्ञात होता है कि उच्चतर माध्यमिक स्तर पर सरकारी एवं गैर सरकारी बालिका विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण का मध्यमान मे मध्य परिगणित

क्रान्तिक–अनुपात का मान 2.69 है जो कि .05 सार्थकता स्तर पर स्वतंत्रता अंश 98 के लिए दिये गये सारणी मान 1.98 से अधिक है अतः मध्यमान का अन्तर उक्त सार्थकता स्तर पर सार्थक है और शून्य परिकल्पना अस्वीकृत होती है तथा शोध परिकल्पना स्वीकृत होती है।

H_3 = उच्च माध्यमिक स्तर पर सरकारी बालक–बालिका विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण में अन्तर है।

H_{03} = उच्च माध्यमिक स्तर पर सरकारी बालक–बालिका विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण में अन्तर नही है।

सारणी सं0– 3

उच्च माध्यमिक स्तर पर सरकारी बालक–बालिका विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण का मध्यमान, मानक विचलन एवं क्रान्तिक अनुपात

प्रशिक्षण संस्थान	छात्र सं0	मध्यमान	मानक विचलन	मानक त्रुटि	क्रान्तिक अनुपात	निष्कर्ष
बालक विद्यालय	50	123.60	6.69	1.82	0.45	असार्थक
बालिका विद्यालय	50	124.42	10.98			

सारणी संख्या 3 देखने पर ज्ञात होता है कि उच्चतर माध्यमिक स्तर पर सरकारी बालक–बालिका विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण का मध्यमान के मध्य परिगणित क्रान्तिक–अनुपात का मान 0.45 है जो कि .05 सार्थकता स्तर पर स्वतंत्रता अंश 98 के लिए दिये गये सारणी मान 1.98 से कम है अतः मध्यमान का अन्तर उक्त सार्थकता स्तर पर असार्थक है और शून्य परिकल्पना स्वीकृत होती है तथा शोध परिकल्पना अस्वीकृत होती है।

H_4 = उच्च माध्यमिक स्तर पर गैर सरकारी बालक–बालिका विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण में अन्तर है।

H_{04} = उच्च माध्यमिक स्तर पर गैर सरकारी बालक–बालिका विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण में अन्तर नही है।

सारणी सं0– 4

उच्च माध्यमिक स्तर पर गैर सरकारी बालक–बालिका विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण का मध्यमान, मानक विचलन एवं क्रान्तिक अनुपात

प्रशिक्षण संस्थान	छात्र सं0	मध्यमान	मानक विचलन	मानक त्रुटि	क्रान्तिक अनुपात	निष्कर्ष
बालक विद्यालय	50	128.86	10.17	2.04	0.63	असार्थक
बालिका विद्यालय	50	130.14	10.26			

सारणी संख्या 4 देखने पर ज्ञात होता है कि उच्चतर माध्यमिक स्तर पर गैर सरकारी बालक–बालिका विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण के मध्यमान के मध्य के परिगणित क्रान्तिक–अनुपात का मान 0.63 है जो कि .05 सार्थकता स्तर पर स्वतंत्रता अंश 98 के लिए दिये गये सारणी मान 1.98 से कम है अतः मध्यमान का अन्तर उक्त सार्थकता स्तर पर असार्थक है और शून्य परिकल्पना स्वीकृत होती है तथा शोध परिकल्पना अस्वीकृत होती है।

H_5 = उच्च माध्यमिक स्तर पर सरकारी एवं गैर सरकारी बालक–बालिका विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण में अन्तर है।

H_{05} = उच्च माध्यमिक स्तर पर सरकारी एवं गैर सरकारी बालक–बालिका विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण में अन्तर नही है।

सारणी सं0– 5

उच्च माध्यमिक स्तर पर सरकारी एवं गैर सरकारी बालक–बालिका विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण का मध्यमान, मानक विचलन एवं क्रान्तिक अनुपात

प्रशिक्षण संस्थान	छात्र सं0	मध्यमान	मानक विचलन	मानक त्रुटि	क्रान्तिक अनुपात	निष्कर्ष
सरकारी	100	124.01	9.06	1.36	4.03	सार्थक
गैर सरकारी	100	129.50	10.18			

सारणी संख्या 5 देखने पर ज्ञात होता है कि उच्चतर माध्यमिक स्तर पर सरकारी एवं गैर सरकारी बालक–बालिका विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण के मध्यमान के मध्य परिगणित क्रान्तिक–अनुपात का मान 4.03 है जो कि .05 सार्थकता स्तर पर स्वतंत्रता अंश 98 के लिए दिये गये सारणी मान 1.98 से अधिक है अतः मध्यमान का अन्तर उक्त सार्थकता स्तर पर सार्थक है और शून्य परिकल्पना अस्वीकृत होती है तथा शोध परिकल्पना स्वीकृत होती है।

निष्कर्ष–

शोधकर्ता ने निम्नलिखित परिणाम प्राप्त किये।

1. उच्चतर माध्यमिक स्तर के सरकारी और गैर सरकारी बालक विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण में सार्थक अन्तर है अर्थात् गैर सरकारी बालक विद्यालयों की शैक्षिक वातावरण सरकारी बालक विद्यालयों की अपेक्षा उच्च पाया गया।
2. उच्चतर माध्यमिक स्तर के सरकारी और गैर सरकारी बालिका विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण में सार्थक अन्तर है अर्थात् गैर सरकारी बालिका विद्यालयों की शैक्षिक वातावरण सरकारी बालिका विद्यालयों की अपेक्षा उच्च पाया गया।
3. उच्चतर माध्यमिक स्तर के सरकारी बालक एवं बालिका विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण में कोई सार्थक अन्तर नही है।
4. उच्चतर माध्यमिक स्तर के गैर सरकारी बालक एवं बालिका विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण में कोई सार्थक अन्तर नही है।
5. उच्चतर माध्यमिक स्तर के सरकारी एवं गैर सरकारी बालक एवं बालिका विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण में सार्थक अन्तर है अर्थात् गैर सरकारी बालक–बालिका विद्यालयों के

शैक्षिक वातावरण सरकारी बालक–बालिकाओं विद्यालयों की शैक्षिक वातावरण की अपेक्षा उच्च पाया गया।

संदर्भ ग्रन्थ सूची –

1. गुप्ता, एस0पी0, आधुनिक मनोविज्ञान, शारदा पुस्तक भवन इलाहाबाद, 2010।
2. भटनागर, डॉ0 आर0पी0 एवं मीनाक्षी : शिक्षा अनुसंधान लायल बुक डिपो मेरठ 2007
3. राय, पारसनाथ : अनुसन्धान परिचय, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल आगरा 2007
4. शर्मा, आर0ए0 : शिक्षा अनुसंधान, आर लाल बुक डिपो मेरठ 2003
5. शाह, एम0एल0 एवं अमिता : Academic climate Description Questionnaire (ACDQ) Lucknow, Ankur Psychological Agency 1988
6. कुमार, सुबोध, विभिन्न संकायों में अध्ययनरत कक्षा 11वीं के छात्रों के पर्यावरणीय सजगता का तुलनात्मक अध्ययन, एम0एड0 लघु शोध प्रबन्ध, दयानन्द महिला प्रशिक्षण महाविद्यालय, कानपुर, 2008
7. राय, सुशील, ने कानपुर शहर के कक्षा 8 में अध्ययनरत् हिन्दी व अंग्रेजी के विद्यार्थियों की पर्यावरण सम्बन्धी जागरूकता का तुलनात्मक अध्ययन, एम0एड0 लघुशोध प्रबन्ध, शिक्षा संस्थान, कल्याणपुर, कानपुर

प्राथमिक स्तर पर अध्यापनरत् शिक्षकों की कार्य संतुष्टि एवं पारिवारिक वातावरण का सहसम्बन्धात्मक अध्ययन

अवधेश कुमार

शोध छात्र (शिक्षाशास्त्र)
नेहरू ग्राम भारती डीम्ड टू बी यूनिवर्सिटी,
इलाहाबाद।

प्रस्तावना–

किसी भी देश की शिक्षा प्रणाली की सफलता अधिकांशतः उस देश के शिक्षकों की गुणवत्ता एवं प्रभावशीलता पर निर्भर करती है। शिक्षकों का उत्तरदायित्व कक्षा में पाठ्य या विषय–वस्तु का शिक्षण ही नहीं वरन् राष्ट्र की चिंतनधारा को बदलने की शक्ति, व्यवसाय, चुनाव, सामाजिक जागरूकता, समाज व देश का विकास पाठ्य सहगामी क्रियाएं नवीन तकनीक की जानकारी देना भी उसका कर्तव्य है।

वर्तमान समय में शिक्षित बेरोजगारी बढ़ने तथा अन्य विकल्प न मिलने पर विवश होकर व्यक्ति अध्यापन कार्य करने लगे हैं। विवशतावश शिक्षक बन जाने पर भी उनके सामने कुछ ऐसे कारक उत्पन्न हो जाते हैं, जिससे उनकी शिक्षण प्रभावशीलता प्रभावित होती है। उनकी योग्यता क्षमतानुसार उचित पद, सेवा सुरक्षा, वेतन, कार्य दशाएं प्राप्त साधन–सुविधाएं, वातावरण, संगठन का अभाव, सहयोगियों, प्रधानाचार्य, प्रबन्धकों के साथ उचित मानवीय सम्बन्धों के अभाव आदि के कारण शिक्षक कुंठित रहते है। परिणामस्वरूप वह अपने शिक्षण कार्य के साथ चाहकर भी न्याय नहीं कर पाते है। अतः उचित पर्यावरण एवं सहयोगात्मक व्यवहार न मिलने से शिक्षकों में अनेक मनोवैज्ञानिक समस्यायें उत्पन्न हो जाती है। ऐसी परिस्थितियों में शिक्षक प्रभावपूर्ण शिक्षण करने में सक्षम नहीं हो पाते है। वे अपने कर्तव्यों एवं उत्तरदायित्वों का पालन उचित प्रकार से नहीं कर सकेंगे साथ ही शिक्षक विद्यार्थियों को उनके परिवार, समाज व देश के प्रति दायित्वों की जानकारी प्रदान करने में सक्षम नहीं हो सकेंगे, जिसका प्रभाव पूरे शिक्षण एवं राष्ट्र पर पड़ता है। इसलिए एक कुशल एवं प्रभावपूर्ण शिक्षक के लिए अपने व्यवसाय के प्रति संतुष्टि का होना अति आवश्यक है।

कार्य सन्तुष्टि का दूसरा आधार भौतिकता है। आधुनिक युग में भौतिक सुख एवं समृद्धि को सन्तोष का कारक माना गया है। यह मत विवादास्पद हो सकता है। क्योंकि इस अर्थ–प्रधान समाज में व्यक्ति सबसे अधिक असन्तुष्ट दिखाई पड़ता है। अमेरिकी समाज में अधिकांशतः यह देखने को मिलता है कि जो भौतिक रूप से सर्वाधिक सम्पन्न है वह मानसिक रूप से सर्वाधिक असन्तुष्ट है। लेकिन भौतिकता का सन्तोष से अटूट रिश्ता है। सन्तुष्टि के लिए आवश्यक है, मनुष्य रोटी, कपड़ा, मकान अथवा आने वाले कल की भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति केवल भौतिक स्तर पर ही सम्भव है।

संक्षेप में कार्य सन्तुष्टि मुख्यतः दो आधारों पर प्राप्त हो सकती है। व्यक्ति को उसकी प्रकृति, स्वभाव, रूचि अथवा इच्छा के अनुरूप कार्य मिला हो तथा दूसरा उसको अपने व्यवसाय से कम से कम इतनी धन सुविधाएं अथवा वेतन मिलता हो जो उस समाज में औसतन स्तर के व्यक्ति अथवा परिवार के जीवन–यापन के लिए आवश्यक हो।

उचित पर्यावरण एवं सहयोगात्मक व्यवहार न मिलने से शिक्षकों में अनेक मनोवैज्ञानिक समस्यायें उत्पन्न हो जाती है। ऐसी परिस्थितियों में शिक्षक प्रभावपूर्ण शिक्षण करने व अपने कर्तव्यों एवं उत्तरदायित्वों का पालन उचित प्रकार से नहीं कर पाते साथ ही शिक्षक विद्यार्थियों को उनके परिवार, समाज व देश के प्रति दायित्वों की जानकारी प्रदान करने में सक्षम न होने से, इसका प्रभाव पूरे शिक्षण एवं राष्ट्र पर पड़ता है। इसलिए एक कुशल एवं प्रभावपूर्ण शिक्षक के लिए अपने व्यवसाय के प्रति संतुष्टि का होना अति आवश्यक है।

प्राथमिक स्तर के शिक्षकों की कार्य–संतुष्टि एवं पारिवारिक वातावरण के बीच सहसम्बन्ध होता हैं। प्राथमिक स्तर पर नियुक्त शिक्षकों को कभी–कभी अन्तर्राजनपदीय विद्यालयों में पढ़ाने के भेज दिया जाता है, तो कभी शिक्षकों की नियुक्ति उनके ही जिले में होती है लेकिन घर से इतनी दूर की वे आने–जाने में एवं शिक्षण कार्य में सारा समय लग जाता है जिससे वे अपने परिवार की तरफ ध्यान नही दे पाते है। कुछ अन्य कारणों जैसे पति–पत्नी दोनों शिक्षक होने की दशा में अलग–अलग जिले में नियुक्ति होने पर भी उनके कार्य–संतुष्टि एवं पारिवारिक वातावरण के बीच नकारात्मक सहसम्बन्ध होता है।

अतः अध्ययनकर्त्ता द्वारा इस विषय पर अध्ययन कर दोनों के बीच सम्बन्ध को देखने का प्रयास किया है।

समस्या कथन–

''प्राथमिक स्तर पर अध्यापनरत् शिक्षकों की कार्य संतुष्टि एवं पारिवारिक वातावरण का सहसम्बन्धात्मक अध्ययन''।

अध्ययन का उद्देश्य

निम्नलिखित उद्देश्यों का अध्ययन किया गया है–

1. प्राथमिक स्तर पर शिक्षणरत शिक्षक–शिक्षिकाओं के कार्य संतुष्टि एवं पारिवारिक वातावरण के मध्य सहसम्बन्ध का अध्ययन करना।
2. प्राथमिक स्तर पर शिक्षणरत शिक्षकों के कार्य संतुष्टि एवं पारिवारिक वातावरण के मध्य सहसम्बन्ध का अध्ययन करना।
3. प्राथमिक स्तर पर शिक्षणरत शिक्षिकाओं की कार्य संतुष्टि एवं पारिवारिक वातावरण के मध्य सहसम्बन्ध का अध्ययन करना।

परिकल्पनाएँ

प्रस्तुत अध्ययन में निम्नलिखित परिकल्पनाओं का परीक्षण किया किया है–

1. प्राथमिक स्तर पर शिक्षणरत शिक्षक–शिक्षिकाओं के कार्य संतुष्टि एवं पारिवारिक वातावरण के मध्य सहसम्बन्ध है।

2. प्राथमिक स्तर पर शिक्षणरत शिक्षकों के कार्य संतुष्टि एवं पारिवारिक वातावरण के मध्य सहसम्बन्ध है।
3. प्राथमिक स्तर पर शिक्षणरत शिक्षिकाओं की कार्य संतुष्टि एवं पारिवारिक वातावरण के मध्य सहसम्बन्ध है।

शोध प्रविधि–

प्रस्तुत अध्ययन में शोध विधि के रूप में वर्णनात्मक सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है। न्यादर्श के चयन उद्देश्यपरक विधि से प्राथमिक विद्यालयों का चयन किया गया है तत्पश्चात् न्यादर्श में कुल 100 शिक्षक–शिक्षिकाओं का चयन किया यादृच्छिक विधि से कर जिसमें से 50 शिक्षक एवं 50 शिक्षिकाएँ सम्मिलित किया गया है। शिक्षकों की कार्य सन्तुष्टि को मापने के लिए डॉ0 मीरा दीक्षित द्वारा निर्मित कार्य सन्तुष्टि मापनी (Job Satisfaction Scale) तथा हरप्रीत भाटिया एवं एन.के. चढ्ढा द्वारा निर्मित पारिवारिक वातावरण मापनी का प्रयोग किया गया है। आँकड़ों के विश्लेषण के लिए पियर्सन आघूर्ण सहसम्बन्ध गुणांक का प्रयोग किया गया है।

आँकड़ों का विश्लेषण एवं व्याख्या–

उद्देश्य–1 प्राथमिक स्तर पर शिक्षणरत शिक्षक–शिक्षिकाओं के कार्य संतुष्टि एवं पारिवारिक वातावरण के मध्य सहसम्बन्ध का अध्ययन करना।

H_{01} प्राथमिक स्तर पर शिक्षणरत शिक्षक–शिक्षिकाओं के कार्य संतुष्टि एवं पारिवारिक वातावरण के मध्य कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।

तालिका 1

प्राथमिक स्तर पर शिक्षणरत शिक्षक–शिक्षिकाओं के कार्य संतुष्टि एवं पारिवारिक वातावरण के मध्य सहसम्बन्ध का मान

क्रमांक	समूह	सहसम्बन्ध गुणांक का मान	स्वतंत्र्यांश (N-2)	सार्थकता स्तर
1.	शिक्षक–शिक्षिकाओं	0.3216	98	सार्थक

यह प्राक्कल्पित किया गया कि 'प्राथमिक स्तर पर शिक्षणरत शिक्षक–शिक्षिकाओं के कार्य संतुष्टि एवं पारिवारिक वातावरण के मध्य कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।' तालिका 1 से स्पष्ट है कि प्राथमिक स्तर पर शिक्षणरत शिक्षक–शिक्षिकाओं के कार्य संतुष्टि एवं पारिवारिक वातावरण के मध्य सहसम्बन्ध गुणांक का मान 0.2836 है जो 98 स्वतंत्र्यांश के लिए 0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु आवश्यक मान 0.197 से अधिक है। यह मान 0.05 स्तर पर सार्थक है व शून्य परिकल्पना अस्वीकार्य है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि प्राथमिक स्तर पर शिक्षणरत शिक्षक–शिक्षिकाओं के कार्य संतुष्टि एवं पारिवारिक वातावरण के मध्य सार्थक एवं धनात्मक सहसम्बन्ध पाया गया।

शिक्षक–शिक्षिकाओं के कार्य संतुष्टि एवं पारिवारिक वातावरण के मध्य सार्थक एवं धनात्मक सहसम्बन्ध पाया यह दर्शाता है कि दोनों की शिक्षण के प्रति अभिवृत्ति, अभिक्षमता, दक्षता एवं वेतन में समानता होना इस का कारण हो सकता है।

उद्देश्य–2 प्राथमिक स्तर पर शिक्षणरत शिक्षकों के कार्य संतुष्टि एवं पारिवारिक वातावरण के मध्य सहसम्बन्ध का अध्ययन करना।

H_{02} प्राथमिक स्तर पर शिक्षणरत शिक्षकों के कार्य संतुष्टि एवं पारिवारिक वातावरण के मध्य कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।

तालिका 2

प्राथमिक स्तर पर शिक्षणरत शिक्षकों के कार्य संतुष्टि एवं पारिवारिक वातावरण के मध्य सहसम्बन्ध का मान

क्रमांक	समूह	सहसम्बन्ध गुणांक का मान	स्वतंत्र्यांश (N-2)	सार्थकता स्तर
1.	शिक्षक	0.2836	58	सार्थक

यह प्राक्कल्पित किया गया कि 'प्राथमिक स्तर पर शिक्षणरत शिक्षकों के कार्य संतुष्टि एवं पारिवारिक वातावरण के मध्य कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।' तालिका 2 से स्पष्ट है कि प्राथमिक स्तर पर शिक्षणरत शिक्षकों के कार्य संतुष्टि एवं पारिवारिक वातावरण के मध्य सहसम्बन्ध गुणांक का मान 0.2836 है जो 58 स्वतंत्र्यांश के लिए 0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु आवश्यक मान 0.273 से अधिक है। यह मान 0.05 स्तर पर सार्थक है व शून्य परिकल्पना अस्वीकार्य है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि प्राथमिक स्तर पर शिक्षणरत शिक्षकों के कार्य संतुष्टि एवं पारिवारिक वातावरण के मध्य सार्थक एवं धनात्मक सहसम्बन्ध पाया गया।

प्राथमिक स्तर पर शिक्षणरत शिक्षकों के कार्य संतुष्टि एवं पारिवारिक वातावरण के मध्य सार्थक एवं धनात्मक सहसम्बन्ध पाये जाने का कारण उनकी शिक्षण अवधि का कम होना एवं व्यवसायिक कार्य के साथ अपने परिवार को ज्यादा से ज्यादा समय देना उनके सम्बन्ध का कारण हो सकता है।

उद्देश्य–3 प्राथमिक स्तर पर शिक्षणरत शिक्षिकाओं की कार्य संतुष्टि एवं पारिवारिक वातावरण के मध्य सहसम्बन्ध का अध्ययन करना।

H_{03} प्राथमिक स्तर पर शिक्षणरत शिक्षिकाओं की कार्य संतुष्टि एवं पारिवारिक वातावरण के मध्य कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।

तालिका 3

प्राथमिक स्तर पर शिक्षणरत शिक्षिकाओं की कार्य संतुष्टि एवं पारिवारिक वातावरण के मध्य सहसम्बन्ध का मान

क्रमांक	समूह	सहसम्बन्ध गुणांक का मान	स्वतंत्र्यांश (N-2)	सार्थकता स्तर
1.	शिक्षक	0.3619	58	सार्थक

यह प्राक्कल्पित किया गया कि 'प्राथमिक स्तर पर शिक्षणरत शिक्षिकाओं की कार्य संतुष्टि एवं पारिवारिक वातावरण के मध्य कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।' तालिका 3 से स्पष्ट है कि प्राथमिक स्तर पर शिक्षणरत शिक्षिकाओं की कार्य संतुष्टि एवं पारिवारिक वातावरण के मध्य सहसम्बन्ध गुणांक का मान 0.3619 है जो 58 स्वतंत्र्यांश के लिए 0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु आवश्यक मान 0.273 से अधिक है। यह मान 0.05 स्तर पर सार्थक है व शून्य परिकल्पना अस्वीकार्य है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि प्राथमिक स्तर पर शिक्षणरत शिक्षिकाओं की कार्य संतुष्टि एवं पारिवारिक वातावरण के मध्य सार्थक एवं धनात्मक सहसम्बन्ध पाया गया।

दोनों चरों के मध्य सार्थक एवं धनात्मक सहसम्बन्ध का पाया जाना इस बात को इंगित करता है शिक्षिकाएँ अपने व्यवसाय से सन्तुष्टि होने के साथ–साथ अपने परिवार को भी पूरा समय देना एवं उनके परिवारिक सामंजस्य उच्च होना।

निष्कर्ष–

प्रस्तुत अध्ययन में निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुये–

- प्राथमिक स्तर पर शिक्षणरत शिक्षक–शिक्षिकाओं के कार्य संतुष्टि एवं पारिवारिक वातावरण के मध्य सार्थक एवं धनात्मक सहसम्बन्ध पाया गया।
- प्राथमिक स्तर पर शिक्षणरत शिक्षकों के कार्य संतुष्टि एवं पारिवारिक वातावरण के मध्य सार्थक एवं धनात्मक सहसम्बन्ध पाया गया।
- प्राथमिक स्तर पर शिक्षणरत शिक्षिकाओं की कार्य संतुष्टि एवं पारिवारिक वातावरण के मध्य सार्थक एवं धनात्मक सहसम्बन्ध पाया गया।

संदर्भ ग्रन्थ सूची –

1. गुप्ता, नदीम एवं अन्य (2013). स्टडी ऑफ पर्सनालिटी एडजेस्टमेन्ट एण्ड जॉब सेटिसफेक्शन ऑफ रूरल एवं अर्बन सेकेण्डरी स्कूल टीचर, स्टैण्डर्ड जर्नल ऑफ एजुकेशन एण्ड एसे, वाल्यूम–1(1), पृ0 25–28, online http://standrsjournals.org
2. सरिता राय (1984–85). ''बी0एड0 प्रशिक्षाणार्थियों का सामाजिक आर्थिक स्तर एवं उनका पारिवारिक सम्बन्ध'' एम0एड0 डिजर्टेशन, डी0ई0आई0 डीम्ड यूनिवर्सिटी दयालबाग, आगरा, 1984–85।
3. सक्सेना, निर्मल (1990). शिक्षण व्यवसाय में कृत्य–संतोष को प्रभावित करने वाले कारकों का अध्ययन, पी–एच0डी0, एजुकेशन, आगरा विश्वविद्यालय, एम0बी0 बुच, फोर्थ सर्वे ऑफ रिसर्च इन एजुकेशन, पृ0 1479
4. सिंह, डॉ0 गजब एवं दीक्षित, नीलम (2013). महाविद्यालयों में शिक्षणरत् अध्यापकों एवं अध्यापिकाओं का व्यवसाय संतोष का तुलनात्मक अध्ययन, जर्नल ऑफ एकेडेमी रिसर्च, A Multidiciplinary Peer-Reviewed Journal, ISSN (O) 2395-1311
5. सिंह, अरुन कुमार (2010), ए स्टडी ऑफ एकेडेमी रिकार्ड, एडजेस्टमेन्ट एण्ड एटीट्यूड एस कोरिलेट्स ऑफ जॉब सेटिसफेक्शन एमंग द सेन्ट्रल स्कूल टीचर्स ऑफ इर्स्टन यू0पी0, इण्डियन एजूकेशनल रिव्यू, वाल्यूम–47, नं0 2, पृ0 101–114

गुप्तोत्तर कालीन अभिलेखों में श्रीलक्ष्मी प्रसंग

डॉ0 ज्योत्सना पाण्डेय

असिस्टेन्ट प्रोफेसर
प्राचीन इतिहास विभाग
ब्राइट कैरियर गर्ल्स डिग्री कालेज
लखनऊ (उ0प्र0)

या देवी सर्वभूतेषु लक्ष्मीरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै, नमो नमः।।

जो देवी सब प्राणियों में लक्ष्मी रूप में स्थित है, उनको नमस्कार है, उनको नमस्कार है, उनको बारम्बार नमस्कार है। श्रीलक्ष्मी को समृद्धि, सौभाग्य व सौन्दर्य का प्रतीक माना गया है। 'लक्ष्यति इति लक्ष्मी' अर्थात् लक्ष्मी वह है जो स्वयं को लक्षित करती है। 'लक्ष्मी सम्पत्ति शोभ्यो' अर्थात् लक्ष्मी शोभा तथा सम्पत्ति देने वाली है। प्राचीनकाल में श्रीलक्ष्मी का वर्णन व अंकन साहित्यिक ग्रंथों, सिक्कों, मूर्तियों, मुद्राओं के साथ ही साथ अभिलेखों में भी हुआ है।

गुप्तोत्तर

गुप्तोत्तर काल के अभिलेखों में भी श्री अथवा लक्ष्मी वर्णन मिलता है। आदित्यसेन के तिथिविहीन अपसढ़ अभिलेख, में, जो 1850 ई0 में बिहार के गया जिले से पन्द्रह मील दूर प्राप्त किया है, लक्ष्मी प्रसंग है। अभिलेख की भाषा संस्कृत तथा लिपि सातवीं शती के उत्तरार्द्ध की कुटिल अक्षरों वाली भारतीय ब्राह्मी है। परवर्ती गुप्त वंशीय नरेश आदित्यसेन के इस अभिलेख का उद्देश्य भगवान विष्णु का मंदिर बनवाये जाने का उल्लेख करना है। अभिलेख की चौथी पंक्ति में वर्णन आया है कि ''जो (हर्षगुप्त) उचित समय पर सरलतापूर्वक अवनत किए हुए दृढ़ धनुष से घोर बाण वर्षा करता था, जिसे पति के रूप वरणकर साक्षात लक्ष्मी उसके साथ रहती थी, जो लक्ष्मी के वासस्थान से परांगमुख एवं विमूढ़ (शत्रुओं) द्वारा अश्रुपूर्ण नेत्रों से देखा जाता था ....।'' दूसरी पंक्ति में भी वर्णन है कि ''जिसने राजाओं में चन्द्रमा के समान श्री ईशानवर्मा की सेना रूपी दुग्ध–समुद्र को, जो लक्ष्मी (राज्यलक्ष्मी) सम्प्राप्ति का हेतु थी...।''

इसी अभिलेख की सोलहवीं पंक्ति में लक्ष्मी के साथ सरस्वती का वर्णन मिलता है। प्रसंग है कि धन के संग्रह तथा दान में उत्कृष्ट लोगों में श्रेष्ठ लक्ष्मी सत्य तथा सरस्वती का कुलगृह एवं धर्म दृढ़ सेतु था। उन्नतीसवीं (29) पंक्ति में लक्ष्मी विष्णु के साथ वर्णित है। ''जब तक चन्द्रकला हर (शिव) के मस्तक पर तथा लक्ष्मी विष्णु के वक्षस्थल तथा सरस्वती ब्रह्मा के मुख में ... तब तक आदित्यसेन धवल कीर्ति प्रकाशित करते रहेगें...।''

मौखरि

मौखरि वंश का प्रथम शक्तिशाली शासक ईशानवर्मा के हरहा अभिलेख (मालवा सं0 611) में लक्ष्मी वर्णन अनेक बार किया गया है। ईशानवर्मा का काल आर0सी0 मजूमदार ने 550

से 576 ई0 के मध्य माना है। यह अभिलेख उत्तर प्रदेश के बाराबंकी जिले के हड़हा स्थल से प्राप्त किया गया है। इस अभिलेख की सत्रहवीं पंक्ति में लक्ष्मी तथा सरस्वती का वर्णन मिलता है।

उसमें उल्लेख आया है कि उसमें (यशोवर्मन) लक्ष्मी कीर्ति तथा सरस्वती आदि ईर्ष्यापूर्वक उसी भाँति निवास करती हैं, जिस प्रकार, रसिक प्रेमी के लिए प्रियांगनायें अत्यन्त अभिलाषा दिखाती है।

ईशानवर्मा के अभिलेखों में प्रायः लक्ष्मी वर्णन मिलता है, परंतु उपमा के अर्थ में। हरहा अभिलेख की अठारहवीं पंक्ति में भी लक्ष्मी लाक्षणिक अर्थ में प्रयुक्त हुई है, जिसमें वर्णन आया है कि ''जब तक प्रवृद्ध कलियुग अपने बल के द्वारा सदाचार को दबा लेता था, कामदेव अपने बाणों के द्वारा कान्ताओं के शरीर को घायल कर देता था, असमय भंग के डर से लक्ष्मी अन्य व्यक्तियों का आश्रय नहीं लेती थी उस समय तक विधाता ने उसके लोकप्रिय वपु का निर्माण नहीं किया था।''

मौर्यकालीन अभिलेखों में लक्ष्मी का संदर्भ श्री, शोभा, सौन्दर्य, कांति, सम्पन्नता, समृद्धि के रूप में हुआ है वहीं गुप्तोत्तर काल तक आते–आते लक्ष्मी लक्षणा व उपमा के संदर्भ में प्रयुक्त होने लगीं। स्पष्ट है कि लक्ष्मी का संदर्भ श्री, सम्पत्ति से अलग हटकर उन गुणों पर निर्भर हो गया जिनके त्याग से राजादि भी राज्यलक्ष्मी व धनलक्ष्मी से वंचित हो जाते हैं।

हरहा अभिलेख की उन्नीसवीं पंक्ति में भी लक्ष्मी का वर्णन मिलता है। यहाँ पर भी लक्ष्मी का उपमा के अर्थ में प्रयोग किया गया है। वर्णन आया है कि उसने (ईशानवर्मा) शत्रु–देश की कुच–ग्रहण के भय से भ्रमित नयन वाली लक्ष्मी की तलवार की ज्योति से सुशोभित अपनी बाहों के द्वारा अपने वक्षस्थल से उसी तरह आवेश पूर्वक लगा लिया था, जिस तरह चतुर प्रेमी भ्रमित लोचना कान्ताओं के मनोभाव को जानकर उनका प्रगाढ़ आलिंगन करता है जिससे वे अन्य व्यक्तियों के पास कामभाव से जाने की इच्छा का परित्याग कर दें।

वर्धन

हर्षवर्धन के बाँसखेड़ा दानपत्र (628 ई0) में भी लक्ष्मी प्रसंग आया है। यह अभिलेख उत्तर प्रदेश के शाहजहाँपुर जिले से पच्चीस मील दूर स्थित बांसखेड़ा ग्राम से प्राप्त हुआ है। अभिलेख की तेरहवीं पंक्ति में वर्णन आया है कि बिजली और जल के बुलबुले के समान चंचला लक्ष्मी का फल दान देना और दूसरों के यश की रक्षा करना है प्राणियों के लिये मन, वचन और कर्म से हित करना कर्तव्य है। धर्मार्जन का यह उत्तम (उपाय) हर्ष ने बताया है।

चालुक्य

बादामी के चालुक्य वंशीय पुलकेशी द्वितीय के ऐहोल अभिलेख जो 634–635 ई0 का है, में लक्ष्मी का वर्णन है। यह अभिलेख दक्षिण भारत के महत्वपूर्ण अभिलेखों में से एक है। बीजापुर जिले के हुगुण्ड तालुके में ऐहोल नामक स्थान पर एक प्राचीन मंदिर में एक पाषाण खंड पर उत्कीर्ण है। चौदहवीं पंक्ति में 'लक्ष्म्या किलाभि' वर्णन है अर्थात् जो नहुष के समान प्रभावशाली तथा लक्ष्मी के द्वारा अभिलषित था। इक्कीसवीं पंक्ति में वर्णन है कि ''उस

(पुलकेशी) ने पश्चिमी समुद्र की लक्ष्मी रूपा पुरी का मतवाले हाथियों के समूह रूपी सैकड़ों नावों से मर्दन किया..... ।'' अभिलेख में यदा–कदा लक्ष्मी प्रसंग मिलता है।

पूर्व मध्यकालीन

पूर्व मध्यकालीन राजवंशों के अभिलेखों में लक्ष्मी प्रायः उपमा के सन्दर्भ में दिखाई देती है। धंगदेव का खजुराहो अभिलेख जो विक्रम संवत 1011 ई0 का है, खजुराहो, छतरपुर (म0प्र0) से प्राप्त हुआ है। इस अभिलेख की भाषा संस्कृत तथा इसकी लिपि कुटिल देवनागरी है। अभिलेख की तीसरी पंक्ति में वर्णित है कि ''जिस पर संभ्रमपूर्वक चंचल, लक्ष्मी के कटाक्षपातों की शोभा पड़ी ..... ।'' उन्नीसवीं पंक्ति में लक्ष्मी तथा सरस्वती के साथ होने का वर्णन है, ''जहाँ लक्ष्मी सरस्वती के साथ, पराक्रम नीति से युक्त है ..... ।''

राजा भोज की ग्वालियर प्रशस्ति में लक्ष्मी वर्णन आया है कि ''अमृततुल्य अनन्य गति वाले वृद्धि को प्राप्त गुणों में रक्षित जिस लक्ष्मी ने धर्म (धर्मपाल) के पुत्र (देवपाल) का वरण कर लिया था, वही बाद में नीति से भोज की पुर्नभू हो गयी।'' यह अभिलेख सागरताल, ग्वालियर (म0प्र0) से मिला है जिसकी भाषा संस्कृत तथा लिपि उत्तर भारतीय ब्राह्मी है।

राष्ट्रकूट

राष्ट्रकूट नरेश अमोघवर्ष प्रथम का संजन ताम्रलेख में भी लक्ष्मी का यदा–कदा वर्णन मिलता है। संजन नामक स्थान से थाने जिले के महाराष्ट्र राज्य से प्राप्त हुआ है। इस अभिलेख की तिथि शक संवत 793 (781 ई0) तथा भाषा संस्कृत तथा लिपि ब्राह्मी है। इस अभिलेख की चौदहवीं पंक्ति में वर्णन आया है ''जिसने गंगा यमुना नदियों के मध्य गौड़ नरेश को नष्टकर उसके श्वेत छत्र तथा लक्ष्मी के लीला कमलों का हरण कर लिया।'' इक्कीसवीं पंक्ति में भी उल्लेख आया है कि ''अपनी नीतियों से राजाओं को वश में करते हुये स्वामिभक्त सामन्त समूह से युक्त राज्यलक्ष्मी का विस्तार करते हुए .... ।''

पाल

पालवंशीय धर्मपालदेव के खालिमपुर ताम्रपत्र में श्रीलक्ष्मी लाक्षणिक अर्थ में प्रयुक्त हुई है। इसका प्राप्ति स्थान खालिमपुर जिला मालदा पश्चिमी बंगाल है, जिसकी तिथि नौवीं शती है तथा भाषा संस्कृत एवं लिपि उत्तर भारतीय लिपि का मगध प्रकार है। इस अभिलेख की पंचम पंक्ति में लक्ष्मी वर्णन उल्लिखित है ''जिस प्रकार चंद्र को रोहिणी, अग्नि को स्वाहा, शिव को शर्वाणि, कुबेर को भद्रा, इन्द्र को शची तथा विष्णु को लक्ष्मी उसी प्रकार राजा के लिए उसकी पत्नी आनंददायिनी हुई .... ।'' दसवीं तथा सत्रहवीं पंक्ति में भी लक्ष्मी सांकेतिक अर्थ में वर्णित है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि जहाँ मौर्यकालीन अभिलेखों में लक्ष्मी का संदर्भ श्री, शोभा, सौन्दर्य, कांति, सम्पन्नता, समृद्धि के रूप में हुआ है वहीं गुप्तोत्तर काल तक आते–आते लक्ष्मी लक्षणा व उपमा के संदर्भ में प्रयुक्त होने लगीं। स्पष्ट है कि लक्ष्मी का संदर्भ श्री, सम्पत्ति से अलग हटकर उन गुणों पर निर्भर हो गया जिनके त्याग से राजादि भी राज्यलक्ष्मी व धनलक्ष्मी से वंचित हो जाते हैं। ऐसे कार्यों पर जोर दिया गया जिनके करने से लक्ष्मी प्रसन्न होती हैं, एवं ऐसे कार्यों की अवहेलना की गयी जिनसे लक्ष्मी प्रस्थान कर जाती हैं ताकि राजा हो या

मनुष्य नैतिकता के पथ पर ही चलें कभी अपने कर्तव्य मार्ग से च्युत ना हों। श्रीलक्ष्मी उन्हीं का वरण करती हैं जो वीर, साहसी, सच्चे, कर्तव्यनिष्ठ एवं धर्मनिष्ठ होते हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची –

1. श्रीराम गोयल–गुप्तकालीन अभिलेख इन्सक्रिप्शन मौखरि–पुष्यभूति–चालुक्य युगीन अभिलेख।
2. राजबली पाण्डेय–हिस्टोरिकल एण्ड लिटरेरी इन्सक्रिप्शन, वाराणसी, 1962।
3. जे0एफ0 फ्लीट–इन्सक्रिप्शन ऑफ दि अर्ली गुप्त किंग्स, लंदन, 1888।
4. वी0वी0 मिराशी– इन्सक्रिप्शन ऑफ दि अर्ली गुप्त किंग्स, भाग–1, उटकमण्ड, 1955।
5. जी0एस0पी0 मिश्र– भारतीय अभिलेख संग्रह, खंड–3, जयपुर, 1974।
6. एच0के0 शास्त्री–साउथ इंडियन इन्सक्रिप्शन भाग–2, मद्रास, 1924–26।
7. डी0सी0 सरकार– सेलेक्ट इन्सक्रिप्शन विअरिंग ऑन इण्डियन हिस्ट्री एण्ड सिविलाइजेशन, कलकत्ता, 1965।

बुद्धिवादी युग के इतिहास दार्शनिक : एक नवीन मूल्याँकन

डॉ. विनीत कुमार गुरू

अतिथि प्राध्यापक – इतिहास
शासकीय महाविद्यालय बिजावर
जिला – छतरपुर (म.प्र.)
मेल आईडी. – vineetgooru@gmail.com

18वीं सदी की विचार दृष्टि नये वैज्ञानिक विचारों से प्रेरित और प्रोत्साहित हो रही थी। अब विद्वता के स्थान पर व्याख्या और चिन्तन के स्थान पर आलोचना का महत्त्व बढ़ने लगा। परम्परा के प्रति विरक्ति और प्रज्ञा के प्रति अनुरक्ति बढ़ने लगी। अनेक महत्त्वपूर्ण अन्वेषणों एवं अनुसंधानों के कारण लोगों की बौद्धिक जिज्ञासा में अपार वृद्धि हुई। गैलिलियो और न्यूटन ने इस वैचारिक क्रांति को गंभीर रूप से प्रभावित किया। न्यूटन ने वे सिद्धांत प्रस्तुत किए जिनसे यह स्पष्ट हो रहा था कि जगत में एक व्यवस्था है तथा वैज्ञानिक सिद्धांत सभी कालों, देशों और परिस्थितियों में प्राकृतिक नियम की तरह काम करते हैं। इसी समय देकार्त ने विश्लेषणात्मक पद्धति का आरंभ करके आधुनिक विज्ञान का प्रवर्तन किया। इन परिवर्तनों ने इतिहासकारों को भी प्रभावित किया, जिससे इतिहास लेखन में परिवर्तन आया। अब इतिहासकार तिथिपरक वृतान्त की अपेक्षा मानव सभ्यता की पूर्णता में रूचि लेने लगे। इस प्रकार इतिहास लेखन के क्षेत्र में बुद्धिवादी चरण का आरंभ हुआ। अब इतिहास में विविध घटनाओं की बुद्धिपरक व्याख्या की जाने लगी। इसके साथ ही साथ इतिहास का क्षेत्र भी बढ़ गया। अब इतिहासकार राजनीतिक एवं धार्मिक पहलुओं की तरह सामाजिक एवं सांस्कृतिक पहलुओं पर भी ध्यान देने लगे। प्रस्तुत शोधपत्र में बुद्धिवादी युग के प्रतिनिधि इतिहास दार्शनिकों का मूल्यांकन किया जा रहा है।

वॉल्टेयर को इतिहास दर्शन का जन्मदाता माना जाता है। सर्वांगीण रूचि इस युग की विशेषता थी और वॉल्टेयर ने इसका दो महत्त्वपूर्ण रूपों में प्रयोग किया। उसने अपने ''लुई चौदहवें का युग'' के इतिहास में सांस्कृतिक तत्वों को राजनैतिक तत्वों से अधिक महत्त्व दिया। दूसरे वॉल्टेयर पहले यूरोपीय हैं जिन्होनें एशियाई संस्कृति को गंभीर रूप से लिया है।[1] उनका सबसे महत्त्वपूर्ण योगदान यह है कि उच्च आदर्शों को अतीत की समाधि से निकालकर भविष्य के गर्भ में आरोपित किया। उन्होनें यह स्पष्ट किया कि मानव समृद्धि में प्रत्येक पीढ़ी तथा युग का योगदान होता है। काल की गति के साथ साथ मानव प्रगति पथ पर निरंतर अग्रसर है। प्रगति इतिहास की निश्चित प्रवृत्ति है। इस विकासशील इतिहास का आरंभ वॉल्टेयर से होता है। उन्हें प्रबुद्ध युग का सच्चा प्रतिनिधि कहा जा सकता है।[2] भारतीय इतिहास विश्लेषण के दृष्टिकोण से भी वॉल्टेयर के ये विचार महत्त्वपूर्ण हैं।

मॉन्टेस्क्यू का जन्म एक विख्यात फ्रांसीसी वकील के घर में 1689 ई. में हुआ था। 66 वर्ष की आयु में 1755 ई. में उनका देहावसान हुआ। वे अपनी रचनाओं विशेषकर ''The sprit of Laws '' के कारण विद्वत समाज में सदैव के लिए अमर हो गए। इस पुस्तक की अभूतपूर्व सफलता का एक प्रधान कारण उसकी पद्धति थी। उन्होनें अनुभूतिमूलक दृष्टिकोण तथा निरीक्षण पर आधारित वैज्ञानिक ऐतिहासिक पद्धति को अपनाया। वह ऐतिहासिक घटनाओं के विश्लेषण के द्वारा निष्कर्ष निकालकर इतिहास से उनको पुष्ट करते थे।[3] वास्तव में मॉन्टेस्क्यू ने सर्वप्रथम यह बतलाया कि सामाजिक संस्थाओं की श्रेष्ठता का निर्णय लोगों द्वारा अपनाए जाने के आधार पर किया जा सकता है। उसने ऐतिहासिक विकास के विभिन्न कारकों का समन्वय प्रस्तुत किया। यद्यपि यह अपरिभाषित है तथापि ऐतिहासिक प्रणाली में एक निश्चित प्रगति का सूचक था। मॉन्टेस्क्यू ने राज्य के लिए वाणिज्य और वित्तीय गतिविधियों के महत्त्व पर बल दिया।[4] उनका मानना है कि कानूनों का उदभव एवं उनकी प्रकृति अथवा स्वरूप सबसे पहले वहाँ के निवासी जिस मिट्टी एवं जलवायु में रहते हैं उससे निश्चित होता है, और तब शारीरिक क्षमताओं, आर्थिक स्थिति, सरकार, धर्म, नैतिकता और वहाँ के लोगों के तौर तरीके इन्हें प्रभावित करते हैं।[5] वास्तव में यह जानते हुए कि नितांत साम्राज्यवाद अंततः स्वेच्छाचारी शासन की ओर बढ़ने लगता है। मॉन्टेस्क्यू ने तीनों प्रकार की मिश्रित सरकार का अनुमोदन किया जिसमें साम्राज्यवाद, कुलीनवाद और जनतंत्र तीनों हों। इससे उनका सबसे शक्तिशाली प्रस्ताव –''नियंत्रण और संतुलन का तंत्र अवतरित हुआ जो शक्तियों के पृथक्करण (सरकार में वैधानिक, कार्यकारी एवं न्यायिक शक्तियों की पृथकता) पर आधारित है। इसकी प्रेरणा उन्हें इंग्लेण्ड से प्राप्त हुई थी। मॉन्टेस्क्यू का प्रभाव काफी अधिक था। गिब्बन, ब्लेकस्टोन और बर्क उनकी स्पिरिट ऑफ लॉज तथा कन्सिडरेशन से बहुत लाभान्वित हुए। फ्रेडरिक महान और कैथरीन महान ने कई बार उनसे परामर्श लिया। अमेरिकी संविधान निर्माताओं ने मॉन्टेस्क्यू से न केवल सरकार की शक्तियों के विभाजन के सिद्धांत को अपनाया बल्कि कांग्रेस से केबिनेट के सदस्यों को अलग रखने का विचार भी लिया। द स्पिरिट ऑफ लॉज फ्रेंच क्रांति के उदार नेताओं के लिए लगभग बाईबिल बन गई थी। फांगुट के अनुसार ''सभी महान आधुनिक विचारों की शुरूआत मॉन्टेस्क्यू से हुई है।[6]

रूसो आदर्शवाद के बजाय यथार्थवाद को स्वीकार करते थे तथा जनसमूदाय को निरंकुशता से मुक्त करना चाहते थे। वह एक प्रख्यात दार्शनिक और क्रांतिकारी विचारों के प्रणेता, शिक्षाशास्त्री, आदर्शवादी, मानववादी और युग निर्माता रचनाकार थे। सर्वव्यापी सामान्य इच्छा के सिद्धांत द्वारा उसने स्थायी सावयवी समाज की कल्पना व मानव स्वतंत्रता पर विशेष बल दिया।

एड्वर्ड गिब्बन (1737–1794ई.) इस युग का एक महत्त्वपूर्ण इतिहासकार था। उसकी क्लासिकल और ऐतिहासिक साहित्य में विशेष रूचि थी। जब वह 1764 ई. में रोम गया और वहाँ केपीटॉल के भग्नावेशेषों को देखते देखते विचारमग्न बैठ गया। यहीं पर उसने रोम के अपकर्ष और पतन का इतिहास लिखने का निश्चय कर लिया। जून 1787 ई. में उसके इस ग्रंथ

''हिस्ट्री ऑफ दि डिक्लायन एण्ड फॉल ऑफ दि रोमन एम्पायर'' का लेखन पूर्ण हुआ। उसकी यह कृति इतिहास की अमूल्य निधि स्वीकार की जाती है। इस ग्रंथ में गिब्बन ने रोमन साम्राज्य के पतन का समय कोमोडस (180ई.) के सिंहासन पर बैठने से आरंभ हुआ माना है। ईसाईयत के प्रति बिना खुले तौर पर विरोध में होते हुए लेखक का दृढ़ मत है कि उस धर्म ने रोमन साम्राज्य के पतन में सहयोग दिया। जिस राज्य को धर्म ने सहारा दिया एवं पवित्र बना दिया, उसी धर्म ने ही राज्य का महत्व घटा दिया।[7] जहाँ वॉल्टेयर ने सांस्कृतिक इतिहास पर ध्यान दिया था तो वहीं गिब्बन ने उसे पूरी तरह अलग कर दिया। उसके अनुसार युद्ध और जन साधारण के झगडों को सुलझाना इतिहास के मुख्य विषय रहे हैं। जब समाज की सर्जनात्मक शक्ति क्षीण हो जाती है तो उसका ह्रास आरंभ हो जाता है। इस दृष्टि से रोमन साम्राज्य का अपकर्ष एवं पतन रोमन समाज की निष्क्रियता और सुषुप्ति का परिणाम था।[8]

रूसो का जन्म 1712 ई. में जिनेवा में हुआ तथा 1779 ई. में उनकी मृत्यु हुई। सामाजिक संविदा के विचारकों में रूसो का एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। उनके साथ बुद्धिवादी परम्परा में पुनः परिवर्तन आया। वास्तव में रूसो के साथ बुद्धिवाद की जगह स्वच्छंदतावाद का आगमन हुआ। अतः रूसो को बुद्धिवाद और स्वच्छंदतावाद के बीच के संक्रमण काल का प्रतिनिधि माना जाता है। रूसो आदर्शवाद के बजाय यथार्थवाद को स्वीकार करते थे तथा जनसमूदाय को निरंकुशता से मुक्त करना चाहते थे। वह एक प्रख्यात दार्शनिक और क्रांतिकारी विचारों के प्रणेता, शिक्षाशास्त्री, आदर्शवादी, मानववादी और युग निर्माता रचनाकार थे। सर्वव्यापी सामान्य इच्छा के सिद्धांत द्वारा उसने स्थायी सावयवी समाज की कल्पना पर बल दिया। उन्होनें मानव स्वतंत्रता पर विशेष जोर दिया। उनका कथन है कि मानव जन्म से स्वतंत्र है पर सर्वत्र सामाजिक और राजनीतिक बंधनों में जकड़ा हुआ है। उनके अनुसार राज्य का आर्थिक स्वास्थ्य तभी बना रह सकता है जब न कोई नागरिक इतना धन सम्पन्न हो कि वह दूसरों को खरीद ले और न इतना गरीब और साधनहीन हो कि वह स्वयं को ही बिक जाने दे। रूसो के इन विचारों से समाज की भयावह विषमताओं के प्रति उसकी घृणा प्रकट होती है। हमें यह मानने में कोई असुविधा नहीं होती कि वह आर्थिक समानता चाहता था।[9] रूसो ने चर्च की परम्परागत शिक्षाओं का विरोध किया तथा एक धर्मनिरपेक्ष समाज की स्थापना पर बल दिया। उनके अनुसार यदि मनुष्य को अपनी स्वतंत्र अस्तित्व का ज्ञान हो जाए तभी वह अपनी स्वतंत्रता को सुरक्षित रख सकता है।

विको एक विशिष्ट प्रतिभा संपन्न व्यक्ति था। इतिहास पर उसने महत्वपूर्ण कृति ''The New Science'' लिखी। विको ने आग्रहपूर्वक कहा कि इतिहास का ज्ञान प्रकृति के ज्ञान से भिन्न है। जबकि प्रकृति ईश्वर की रचना है, इतिहास का रचियता मनुष्य है। अतएव मनुष्य प्रकृति की अपेक्षा इतिहास को अधिक स्पष्ट रूप में जान सकता है। विको का दूसरा महत्त्वपूर्ण सिद्धांत यह था कि इतिहास आत्म प्रकाशनीय है अर्थात यह कि इसका अपना विशिष्ट अर्थ होता है जिसे किन्हीं बहिर्भूत प्रतिमानों की सहायता के बिना प्रत्यक्ष अध्ययन द्वारा समझा जाना चाहिए। विको की अपनी विधि के अनुसार किसी भी प्रदत्त समाज के स्वरूप का सूत्र उसकी भाषा का विश्लेषण था।[10]

जर्मन आदर्शवादी दर्शन के प्रवक्ता इमानुअल काण्ट का जन्म 1724 ई. में जर्मनी के कोनिग्सवर्ग प्रदेश में हुआ था और 1804 ई. में उनका देहावसान हुआ। कान्ट ने ही सर्वप्रथम व्यक्तिवादी विचारधारा द्वारा प्रसारित नैतिकवाद का विरोध किया और भौतिक शक्ति की अपेक्षा अध्यात्मिक शक्ति को अधिक महत्त्वपूर्ण बतलाया। उसने विवेक को अनुभूति से उच्च बतलाया और विशुद्ध विवेक को सत्य और असत्य अनुभूतियों को पहचानने का साधन माना। कान्ट ने सार्वभौमिक नैतिक विधि और स्वतंत्रता की कल्पना की। आधुनिक युग का वही पहला विचारक था जिसने विश्व राज्य की कल्पना की। कान्ट के राजनीतिक विचारों के कारण जर्मनी में उदारवादी विचारकों की उन्नति हुई, सामंतवाद को आधात पहुंचा और राष्ट्रीय एकता की भावना को प्रोत्साहन मिला। राईट के इस कथन में कोई अतिशयोक्ति नहीं दिखाई देती कि ''सन् 1781 से अब तक प्रत्येक महत्त्वपूर्ण दार्शनिक किसी न किसी प्रकार स्वीकारात्मक रूप में या नकारात्मक रूप से जाने या अनजाने में कान्ट के ऋणी रहे हैं।''[11] कान्ट के अनुसार इतिहास वास्तव में आंतरिक विकास की एक प्रक्रिया है। कान्ट के इतिहास दर्शन की चार विशेषताएँ हैं–

ज्ञानोदय काल के इतिहासकारों ने एक अति हिंसक और एक तरफा धर्म विरोधी मत धारण कर लिया था। उनके लिए धर्म, पादरी, मध्ययुग और बर्बरता ऐतिहासिक या सामाजिक वैज्ञानिक अर्थ रखने वाले शब्द नहीं परंतु गालियां थीं। उन्हें यह बात समझ नहीं आई कि ''धर्म और बर्बरता'' मानव समाज में सकारात्मक कार्य हेतु भावनात्मक महत्त्व रखते हैं।

(1) इतिहास सार्वजनिक और विश्वजनीय प्रक्रिया है।
(2) इसमें प्रगति की एक योजना है।
(3) इसकी मौलिक प्रकृति बौद्धिकता और नैतिकता का विकास है। तथा
(4) यह विकास अज्ञान, स्वार्थ और वासना आदि पर निर्भर तामसिक वृति की क्रीड़ा का परिणाम है।[12]

यदि बुद्धिवादी युग के ऐतिहासिक लेखन का विश्लेषण करें तो स्पष्ट होता है कि इस युग के ऐतिहासिक लेखन की एक मुख्य विशेषता अधिकाधिक संख्या में विश्व इतिहास की रचना है। पाठ्य आलोचना का भी विकास हुआ। ऐतिहासिक कालबद्धता एक दूसरी विशेषता थी। जिसे आज भी मान्यता प्राप्त है। मानव इतिहास को दो भागों गैर ईसाई पुरातन युग और इसाई युग में विभक्त करने की परम्परा त्याग दी गई। अब इसकी जगह इतिहास को प्राचीन काल, मध्यकाल और आधुनिक काल में बांटा जाने लगा। प्राचीन काल का इतिहास सृष्टि से कान्स्टेटाईन तक और मध्यकालीन इतिहास कान्स्टेटाईन से 1453 ई. में कुस्तुन्तुनिया के पतन तक बतलाया गया। आधुनिक काल का शुभारंभ 1453 ईं से माना गया।[13] आर्थर मारविक ने इस युग के इतिहास लेखन की तीन कमजोरियों पर प्रकाश डाला है। उनके अनुसार गिब्बन और वॉल्टेयर के काल के इतिहास में तीन और आधारभूत कमजोरियाँ थीं। पहली और सबसे महत्त्वपूर्ण कमजोरी यह है कि वह मानव विकास और परिवर्तन बोध से असाधारण ढंग से अछूता है। दूसरी कमजोरी थी एक साथ हो रहे पाण्डित्यपूर्ण और व्याख्यापरक कार्यों में तालमेल की कमी। अठारहवीं सदी में इतिहास की तीसरी कमजोरी यह थी कि राजकुमारों और

राजनीतिज्ञों के महलों को छोड़कर अभी भी इतिहास का एक बौद्धिक अनुशासन के रूप में कहीं कुशल ढंग से अध्यापन नहीं होता था।[14] इसी तरह कलिंगबुड का मत था कि ज्ञानोदय काल के इतिहासकारों ने एक अति हिंसक और एक तरफा धर्म विरोधी मत धारण कर लिया था। उनके लिए धर्म, पादरी, मध्ययुग और बर्बरता ऐतिहासिक या सामाजिक वैज्ञानिक अर्थ रखने वाले शब्द नहीं थे, परंतु गालियां थीं। उन्हें यह बात समझ नहीं आई कि ''धर्म और बर्बरता'' मानव समाज में सकारात्मक कार्य हेतु भावनात्मक महत्त्व रखते हैं।[15]

निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि बुद्धिवादी युग के इतिहास लेखन एवं चिन्तन की निम्न विशेषताएँ सामने आतीं हैं –

1. 18 वीं. सदी की विचार दृष्टि वैज्ञानिक विचारों से प्रेरित और प्रोत्साहित हुई। अब विस्तृत व्याख्या और आलोचना के माध्यम से विषयों का विश्लेषण किया जाने लगा।
2. इन नवीन विचारों से इतिहासकार भी प्रभावित हुए। अब इतिहास में विविध घटनाओं की बौद्धिक व्याख्या की जाने लगी। इसके साथ ही इतिहास का क्षेत्र भी विस्तृत हुआ। अब राजनीतिक एवं धार्मिक पहलुओं के साथ ही साथ सामाजिक और सांस्कृतिक पहलुओं पर भी ध्यान दिया जाने लगा।
3. वॉल्टेयर को इतिहास दर्शन का जन्मदाता माना जा सकता है। उन्होनें सर्वप्रथम राजनैतिक तत्वों की तुलना में सांस्कृतिक तत्वों को अधिक महत्त्व दिया। दूसरी ओर उन्होनें पहली बार एशियाई संस्कृति के महत्त्व को समझा।
4. वॉल्टेयर ने यह स्पष्ट किया कि मानव संस्कृति में प्रत्येक युग या पीढ़ी का योगदान होता है। भारतीय इतिहास विश्लेषण की दृष्टि से भी यह बिन्दु महत्त्वपूर्ण है। वास्तव में यदि गंभीर विश्लेषण करें तो स्पष्ट होता है कि भारतीय इतिहास में भी प्रत्येक युग चाहे वह प्राचीन हो, मध्ययुगीन हो या आधुनिक युग तीनों का विशिष्ट योगदान रहा है।
5. मॉन्टेस्क्यू ने अनुभूतिमूलक दृष्टिकोण तथा निरीक्षण पर आधारित वैज्ञानिक ऐतिहासिक पद्धति को अपनाया था। उनका कहना था कि मानव संस्कृति के विविध पक्षों पर उनके पर्यावरण का प्रभाव पड़ता है।
6. मॉन्टेस्क्यू ने सरकार के संचालन के लिए वैधानिक कार्यकारी एवं न्यायिक शक्तियों के पृथक्करण का सिद्धांत प्रस्तुत किया। जिसका आगे आने वाले समय पर गंभीर प्रभाव पड़ा।
7. गिब्बन ने रोमन साम्राज्य के अपकर्ष एवं पतन के माध्यम से इतिहास विश्लेषण प्रस्तुत किया। उन्होनें रोमन साम्राज्य के पतन के लिए ईसाई धर्म को उत्तरदायी माना। उनके अनुसार इतिहास का प्रमुख विषय युद्ध और झगड़े ही रहे हैं। तथा जब समाज की सर्जनात्मक शक्ति क्षीण हो जाती है तो उसका ह्रास हो जाता है।
8. रूसो अपने सामाजिक संविदा के सिद्धांत के लिए प्रसिद्ध रहे हैं। वे आर्दशवाद के बजाय यथार्थवाद को स्वीकार करते थे तथा जन साधारण को निरंकुशता से मुक्त करना चाहते थे। उन्होंने समाज की भयानक आर्थिक विषमताओं का तीव्र विरोध किया। उनके अनुसार वही सरकार श्रेष्ठ है जो इन विषमताओं को मिटाने के लिए कार्य करती है।

9. विको के अनुसार इतिहास का रचियता मनुष्य है अतः वह प्रकृति की अपेक्षा इतिहास को अधिक स्पष्ट रूप से जान सकता है। उनका दूसरा महत्त्वपूर्ण सिद्धांत यह था कि प्रत्येक इतिहास का अपना विशिष्ट अर्थ होता है जिसे प्रत्यक्ष अध्ययन द्वारा समझा जाना चाहिए।
10. इमॉनुअल कान्ट ने अपने इतिहास विश्लेषण में ''भौतिक शक्ति'' की अपेक्षा ''आध्यात्मिक शक्ति'' को अधिक महत्त्वपूर्ण माना। उन्होनें ''विवेक'' को ''अनुभूति'' में अधिक महत्त्वपूर्ण बतलाया। उन्होनें इतिहास को एक प्रगति की योजना स्वीकार किया।
11. यदि बुद्धिवादी युग के ऐतिहासिक अवदान का विश्लेषण करें तो स्पष्ट होता है कि इस काल के इतिहास लेखन की एक मुख्य विशेषता – अधिकाधिक संख्या में विश्व इतिहास की रचना है। इस युग की दूसरी विशेषता ऐतिहासिक कालबद्धता थी। अब इतिहास को प्राचीन, मध्य एवं आधुनिक में बांटा जाने लगा।
12. इस काल के इतिहास लेखन की तीन मुख्य कमजोरियाँ थीं –
    (1) उसका मानव विकास तथा परिवर्तनबोध से अछूता होना।
    (2) एक साथ हो रहे पाण्डित्यपूर्ण एवं व्याख्यात्मक कार्यों में तालमेल की कमी। तथा
    (3) इतिहास का एक बौद्धिक अनुशासन के रूप में कहीं भी अध्ययन एवं अध्यापन न होना।

संदर्भ ग्रन्थ सूची –

1. पाण्डेय, गोविन्द चंद्र, इतिहास स्वरूप और सिद्धांत, जयपुर, 1991, पृ. 6
2. चौबे, झारखंडे, इतिहास दर्शन, वाराणसी, 1984, पृ. 54
3. शर्मा, प्रभुदत्त, पाश्चात्य राजनीतिक विचारों का इतिहास, जयपुर, 2010, पृ. 269
4. राय, कौलेश्वर, इतिहास दर्शन, इलाहाबाद, 2005, पृ. 114
5. श्रीधरन, ई., इतिहास लेख एक पाठ्य पुस्तक (अनुवाद मनजीत सिंह सलूजा), हैदराबाद, 2010, पृ. 97
6. वही, पृ. 98
7. वही, पृ. 104
8. राधेशरण, इतिहास और इतिहास लेखन, भोपाल, 2003, पृ. 148
9. शर्मा, प्रभुदत्त, पूर्वोल्लिखित, पृ. 358
10. पाण्डेय, गोविन्द चंद्र, पूर्वोल्लिखित, पृ. 7
11. शर्मा, प्रभुदत्त, पूर्वोल्लिखित, पृ. 471
12. चौबे, झारखंडे, पूर्वोल्लिखित, पृ. 55
13. राय, कौलेश्वर, पूर्वोल्लिखित, पृ. 115
14. मारविक, आर्थर, इतिहास का स्वरूप (अनुवादक लाल बहादुर वर्मा), दिल्ली, 2003, पृ. 32
15. श्रीधरन,ई., पूर्वोल्लिखित, पृ.. 108

सामाजिक विज्ञान के अन्तर्गत इतिहास और नागरिक शास्त्र उपलब्धि पर भग्नाशा एवं समायोजन के विभिन्न पक्षों का संयुक्त तथा सापेक्षिक योगदान का अध्ययन

डॉ0 प्रेम पाल सिंह

असिस्टेन्ट प्रोफेसर, शिक्षा विभाग,
एम0जे0पी0 रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय,
बरेली, उ0प्र0।

सारांश :

शिक्षा से प्रगति के द्वार में प्रवेश होता है जिससे व्यक्ति का सर्वांगीण विकास होता है, इसीलिये शिक्षा विकास का स्तम्भ है। माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की सामाजिक विज्ञान के अन्तर्गत इतिहास और नागरिक शास्त्र उपलब्धि पर भग्नाशा एवं समायोजन के विभिन्न पक्षों का संयुक्त तथा सापेक्षिक योगदान का अध्ययन हेतु न्यायदर्श के रूप में उत्तर प्रदेश के जनपद बरेली के नगर क्षेत्र बरेली में स्थित माध्यमिक विद्यालयों के कक्षा 10 में अध्ययनरत 941 विद्यार्थियों को सम्मिलित किया गया है आंकड़ो के संकलन हेतु दीक्षित एवं श्रीवास्तव (1997) द्वारा निर्मित भग्नाशा प्रतिक्रिया मापनी और सिन्हा एवं सिंह (2007) द्वारा निर्मित विद्यालयों बालकों की समायोजन अनुसूची (AISS) का प्रयोग किया गया है। सामाजिक विज्ञान उपलब्धि परीक्षा में कठिनाई स्तर 0.4–0.6 के मध्य और विभेदीकरण क्षमता 0.3 से अधिक वाले प्रश्नो का ही चयन किया है। ''आंकड़ो के संख्यिकी विश्लेषण एवं विवेचन के पश्चात पाया गया कि माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की सामाजिक विज्ञान के अन्तर्गत इतिहास और नागरिक शास्त्र उपलब्धि पर भग्नाशा एवं समायोजन के विभिन्न पक्षों का संयुक्त तथा सापेक्षिक योगदान सार्थकता के 0.01 स्तर पर सार्थक है।

प्रस्तावना :

शिक्षा से प्रगति के द्वार में प्रवेश होता है जिससे व्यक्ति का सर्वांगीण विकास होता है इसीलिये शिक्षा विकास का स्तम्भ है। प्रत्येक व्यक्ति समाज की मुख्य धारा से जुड़कर समाज एवं राष्ट्र में अहम् योगदान देने के लिए तत्पर रहता है। यह कार्य शिक्षा के माध्यम से ही सम्भव है। शिक्षा से से ही ज्ञान की धारा प्रस्फुटित होती है। जब उददेश्य प्राप्ति में बाधा उत्पन्न होती है तो उस समय निराशा की स्थिति को भग्नाशा कहा जाता है। भग्नाशा के सम्बन्ध मे गुड (1959) ने कहा है कि किसी इच्छा या आवश्यकता में अवरोधक आ जाने से उत्पन्न संवेगात्मक तनाव भग्नाशा है। स्किनर (2004) ने समायोजन के सम्बन्ध में कहा हैकि सामूहिक क्रिया कलापों में स्वस्थ तथा उत्साहमय ढंग से भाग लेना ,समय पड.ने पर नेतृत्व का उत्तरदायित्व लेना और स्वंय को किसी भी प्रकार से धोखो देने से बचने की कोशिश करना। शैक्षिक उपलब्धि से तात्पर्य शिक्षा के क्षेत्र में प्राप्त परिणामों से है। ड्रीबन (1968) के अनुसार उपलब्धि का अर्थ क्रिया और प्रवीणता है जहॉ व्यक्ति वातावरण पर प्रभाव डालता है तथा

श्रेष्ठता के किसी मानक के साथ प्रतिस्पर्धा करता है। शर्मा (1973) ने युवावस्था पर निराशा की प्रतिक्रिया का अध्ययन किया। अध्ययन में पाया कि आक्रामक व्यवहार, आज्ञा की अवहेलना और परतंत्रता जैसी परिस्थतियां भी भग्नाशा उत्पन्न करती है। पंडित (1973) ने अपने अध्ययन का उद्देश्य प्रतिभाशाली विद्यार्थियों की समायोजन सम्बन्धी समस्याओं पर था। अपने अध्ययन निष्कर्ष में पाया कि प्रतिभाशाली विद्यार्थी की समायोजन सम्बन्धी समस्यायें सामान्य विद्याार्थियों से कम थीं। घनश्याम (1975) ने अपना शोध विद्यार्थियों के सामाजिक आर्थिक स्तर तथा उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर किया। अपने निष्कर्ष में पाया कि सामाजिक–आर्थिक स्तर का प्रभाव उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर पड़ता है। उपरोक्त शोध अध्ययनों में ऐसा कोई भी अध्ययन नही हुआ जो सामाजिक विज्ञान के अन्तर्गत इतिहास और नागरिक शास्त्र उपलब्धि पर भग्नाशा एवं समायोजन के विभिन्न पक्षों का संयुक्त तथा सापेक्षिक योगदान का अध्ययन किया गया हो। अतः यह अध्ययन इस अभाव की पूर्ति करेगा।

प्रत्येक व्यक्ति समाज की मुख्य धारा से जुड़कर समाज एवं राष्ट्र में अहम् योगदान देने के लिए तत्पर रहता है। यह कार्य शिक्षा के माध्यम से ही सम्भव है। शिक्षा से से ही ज्ञान की धारा प्रस्फुटित होती है। जब उददेश्य प्राप्ति में बाधा उत्पन्न होती है तो उस समय निराशा की स्थिति को भग्नाशा कहा जाता है।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की सामाजिक विज्ञान के अन्तर्गत इतिहास उपलब्धि पर भग्नाशा एवं समायोजन के विभिन्न पक्षों का संयुक्त तथा सापेक्षिक योगदान का अध्ययन करना।
2. माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की सामालिक विज्ञान के अन्तर्गत नागरिक शास्त्र उपलब्धि पर भग्नाशा एवं समायोजन के विभिन्न पक्षों का संयुक्त तथा सापेक्षिक योगदान काअध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पनायें :

1. माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की सामाजिक विज्ञान के अन्तर्गत इतिहास उपलब्धि पर भग्नाशा एवं समायोजन के विभिन्न पक्षों का संयुक्त तथा सापेक्षिक योगदान सार्थक नही है।
2. माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की सामाजिक विज्ञान के अन्तर्गत नागरिक शास्त्र उपलब्धि पर भग्नाशा एवं समायोजन के विभिन्न पक्षों का संयुक्त तथा सापेक्षिक योगदान सार्थक नही है।

प्रदत्तों का विश्लेषण ,विवेचन एवं निष्कर्ष :

तालिका संख्या 01 : माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की सामाजिक विज्ञान के अन्तर्गत इतिहास उपलब्धि पर भग्नाशा एवं समायोजन के विभिन्न पक्षों का संयुक्त तथा सापेक्षिक योगदान सम्बन्धी विश्लेषण को प्रदर्शित करती तालिका

चर	**b**-भारांक	संचयी **R**	सार्थकता स्तर

संवेगात्मक समायोजन	–0.128	0.131	0.01
प्रतिगमन भग्नाशा स्तर	0.90	0.160	0.01
शैक्षिक समायोजन	–0.086	0.182	0.01
आक्रामकता भग्नाशा स्तर	0.065	0.193	0.05

नियतमान = 13.140

उपरोक्त तालिका संख्या 01 दर्शाती है कि संचयी बहुचर सह सम्बन्ध 0.193 है जो सार्थकता के 0.01 स्तर पर सार्थक है। यह दिखाता है कि इतिहास उपलब्धि के कुल प्रसरण में से कुल 3.7% प्रसरण का योगदान संवेगात्मक समायोजन, प्रतिगमन भग्नाशा स्तर, शैक्षिक समायोजन, आक्रामकता भग्नाशा स्तर के द्वारा हो रहा है। इनमें से संवेगात्मक समायोजन के द्वारा 1.7%, प्रतिगमन भग्नाशा स्तर के द्वारा 0.9%, शैक्षिक समायोजन के द्वारा 0.7% और आक्रामकता भग्नाशा स्तर के द्वारा 0.4% प्रसरण का योगदान हो रहा है। तालिका सं0–01 के आधार पर सामाजिक विज्ञान के अन्तर्गत इतिहास उपलब्धि के पूर्वानुमान हेतु समीकरण को मूल प्राप्तांक के रूप में निम्न प्रकार से लिखा जा सकता है–

Y′ = 13.140–0.128 Emo. Adj.+0.90 Regg. Fras.–0.086 Edu. Adj.+0.065 Agg. Frus.

उपरोक्त समीकरण यह दर्शाता है कि सामाजिक विज्ञान के अन्तर्गत इतिहास उपलब्धि का पूर्वानुमान लगाने के लिए संवेगात्मक समायोजन, प्रतिगमन भग्नाशा स्तर, शैक्षिक समायोजन आक्रामकता भग्नाशा स्तर के मूल प्राप्ताकों को उसके साथ दिये गये b-भारांक से गुणा करके चिन्ह (+या–) का ध्यान रखते हुए नियतमान को जोड़ देना होगा। निष्कर्ष रुप में कहा जा सकता है कि सामाजिक विज्ञान के अन्तर्गत इतिहास उपलब्धि के पूर्वानुमान लगाने में संवेगात्मक समायोजन, प्रतिगमन भग्नाशा स्तर, शैक्षिक समायोजन और आक्रामकता भग्नाशा स्तर की सार्थक भूमिका है। अतः प्रस्तुत परिणाम के आधार पर परिकल्पना नं0 01 अस्वीकृत की जाती है।

''माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत् विद्यार्थियों की नागरिक शास्त्र उपलब्धि पर भग्नाशा एवं समायोजन के विभिन्न पक्षों के संयुक्त तथा सापेक्षिक योगदान का अध्ययन''।

अध्ययन का उद्देश्य नागरिक शास्त्र उपलब्धि का भग्नाशा तथा समायोजन के आधार पर पूर्वानुमान लगाने हेतु यह कार्य पदवार प्रतिगमन विश्लेषण द्वारा सम्पन्न किया गया है भग्नाशा का नागरिक शास्त्र उपलब्धि के साथ सह सम्बन्ध सार्थक नहीं हैं। विश्लेषण के परिणाम को तालिका सं0–02 में दर्शाया गया है।

तालिका संख्या 02 : माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की सामाजिक विज्ञान के अन्तर्गत नागरिक शास्त्र उपलब्धि पर समायोजन के विभिन्न पक्षों का संयुक्त तथा सापेक्षिक योगदान सम्बन्धी विश्लेषण को प्रदर्शित करती तालिका

चर	b – भरांक	संचयी R	सार्थकता स्तर
संवेगात्मक समायोजन	–0.211	0.226	0.01

शैक्षिक समायोजन	−0.095	0.245	0.01

नियतमान = 13.733

उपरोक्त तालिका सं0−02 दर्शाती है कि संचयी बहुचर सहसम्बनध 0.245 है जो सार्थकता के 0.01 स्तर पर सार्थक है। यह दर्शाता है कि सामाजिक विज्ञान के अन्तर्गत नागरिक शास्त्र उपलब्धि के कुल प्रसरण में से 6% प्रसरण का योगदान संवेगात्मक समायोजन और शैक्षिक समायोजन के द्वारा हो रहा है। इनमें से भी देखा जाय तो संवेगात्मक समायोजन के द्वारा 5.1% और शैक्षिक समायेाजन के द्वारा 0.9% प्रसरण का योगदान हो रहा हैं। तालिका सं0−02 के आधार पर नागरिक शास्त्र उपलब्धि के पूर्वानुमान हेतु समीकरण को मूल प्राप्तांक के रुप में निम्न प्रकार से लिखा जा सकता है−

$$y' = 13.733 - 0.211Emo.Adj. - 0.095\ Edu.Adj.$$

जहाँ,

y' = पूर्वानुमानित नागरिक शास्त्र उपलब्धि प्राप्तांक

उपरोक्त समीकरण यह दर्शाता है कि सामाजिक विज्ञान के अन्तर्गत नागरिक शास्त्र उपलब्धि का पूर्वानुमान लगाने के लिए संवेगात्मक समायोजन और शैक्षिक समायोजन के मूल प्राप्तांको को उसके साथ दिये गये b-भारांक से गुणा करके चिन्ह (+या−) का ध्यान रखते हुए नियतमान को जोड देना होगा। निष्कर्ष रुप में कहा जा सकता है कि सामाजिक विज्ञान के अन्तर्गत नागरिक शास्त्र उपलब्धि के पूर्वानुमान लगाने में संवेगात्मक समायोजन और शैक्षिक समायोजन की सार्थक भूमिका है। अतः प्रस्तुत परिणाम के आधार पर परिकल्पना नं0 02 माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की सामाजिक विज्ञान के अन्तर्गत नागरिक शास्त्र उपलब्धि पर भग्नाशा एवं समायोजन के विभिन्न पक्षों का संयुक्त तथा सापेक्षिक योगदान सार्थक नहीं है−अस्वीकृत की जाती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची −

1. Good, C.V. (1959). *Dictionary of Education*. London : Mc. Graw Hill Book company 1 NC.
2. Skinner, C.E. (2004) : *Educational Psychology* (IVth Edition). New delhi: Prentice Hall of India Pvt. Ltd.
3. Dreeban, R. (1968). *on what is learned in school*. Addision : Wesley Publishing Co.
4. Sharma, C.M. (1973). Reachion of frustration among adolescents in school situation. Unpublished Ph.D. Thesis (Edu.) Rajasthan University Jaipur.
5. Pandit, K.M. (1973) : The adjustment problem of the gifted children and their reactions to frustration unpublished Ph.D. Thesis (Psy) M.S. university, Baroda.

वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में मूल्यपरक शिक्षा की आवश्यकता

अमित कुमार दूबे (स्वर्ण पदक प्राप्त)

शोध छात्र (शिक्षक प्रशिक्षण विभाग)
श्री गांधी पी0जी0 कालेज मालटारी
आजमगढ़ (उ0प्र0)

मानव जीवन को सफल और सुखमय बनाने में शिक्षा का स्थान महत्वपूर्ण है। मनुष्य जीवन पर्यन्त शिक्षा की प्राप्ति विविध रूपों में करता है और अपने ज्ञान को उत्तरोत्तर बढ़ाने के लिए इसका सहारा लेता है। मूल्यपरक शिक्षा के लिए प्राथमिक शिक्षा से लेकर विश्वविद्यालय स्तर तक की शिक्षा को परस्पर जोड़ना होगा। आज भारतीय समाज तीव्र आर्थिक व सामाजिक रूपान्तरण के कारण संक्रमण के दौर से गुजर रहा है। आज परिवारों में संयुक्त परिवार का प्रचलन समाप्त होने के कगार पर है इसका सबसे बड़ा कारण परिवार के सदस्यों में मूल्यो का पतन, अभिमानी एवं अकर्मण्यता जैसे दुर्गुणों का समावेश होना तथा अपने स्वार्थ के लिए किसी भी हद तक जाना यह बताता है कि परिवार के सदस्यों में मूल्यपरक शिक्षा की कमी है।

मूल्यपरक शिक्षा में विद्यालय की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। पाठ्यक्रम को पूरा करवाने के अतिरिक्त शिक्षक का यह नैतिक व मानवीय कर्तव्य होता है कि वह विद्यार्थियों में सदाचार, नैतिकता, अनुशासन, भाई–चारा, अहिंसा, शान्ति, सहयोग, सर्व–धर्म समभाव व ईमानदारी जैसे मानवीय मूल्यों को आरोपित करें। इस सन्दर्भ में समय–समय पर गठित विभिन्न आयोगों ने भी सुझाव प्रस्तुत किये है–

राधाकृष्णन आयोग (1948–49) ने मूल्य शिक्षा को पाठ्यक्रम का अभिन्न अंग माना है और कहा है कि विद्यार्थियों को महान व्यक्तित्व की जीवनियॉ, नैतिक व धार्मिक सिद्धान्तों को व्यक्त करने वाली कहानियाँ पढ़ाई जाय। **मुदालियर आयोग (1952–53)** विद्याालयों में सामूहिक प्रार्थना और प्रेरक प्रसंगो को भी महत्व दिया जाय । परिवार समाज और विद्यालय का परिवेश बालकों के नैतिक एवं चरित्र विकास में सहायक होता है। **श्री प्रकाश समिति (1959)** ने सुझाव दिया है कि विद्यार्थियों को सभी धर्मों के आधारभूत विचारों की शिक्षा तुलनात्मक विधि से दी जाय। पाठ्य सहगामी क्रियाओं के रूप से समाज सेवा की भावना का विकास किया जाय। **शिक्षा आयोग (1964–66)** ने विद्यालय स्तर पर सत्य, ईमानदारी, दया, बुजुर्गो के प्रति सम्मान, सहानुभूति आदि मूल्यों को विद्यालयों में कार्यक्रमों का अभिन्न अंग बनाया जाय तथा मूल्य शिक्षा के लिए समय तालिका में प्रति सप्ताह कुछ घण्टे निर्धारित किया जाना चाहिए।

विश्वविद्यालय स्तर पर छात्रों को व्यक्ति के सम्मान, समानता, न्याय और कल्याणकारी राज्य आदि की शिक्षा दी जानी चाहिए। प्रथम वर्ष में महान धार्मिक नेताओं की जीवनियाँ पढ़ाई जानी चाहिए। द्वितीय वर्ष में संसार के धार्मिक ग्रन्थों में से सार्वजनिक महत्व के चुनें हुए भागों को पढ़ाया जाय तथा तृतीय वर्ष में धर्म–दर्शन की मुख्य समस्याओं का अध्ययन किया जाना

चाहिए। **राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986)** के अनुसार, मूल्य शिक्षा कथा व पाठ्यचर्या तक ही सीमित नहीं रहना चाहिए बल्कि स्कूल और समुदाय के बीच संयोजन की स्थापना करनी चाहिए।

शिक्षा का सामाजिक एवं नैतिक दायित्व यह है कि विद्यार्थियों में ऐसे गुणों का अवलम्बन करें जिससे चरित्र का विकास हो व समाज हित में उनमें संचेतना विकसित हो। मूल्यपरक शिक्षा विद्यार्थियों को समाजिक, नैतिक, चारित्रिक, अध्यात्मिक तथा आर्थिक रूप से समृद्ध बनाती है। जिसकी आज परम् आवश्यकता है। आज हमें उस शिक्षा की आवश्यकता है जिससे चरित्र का निर्माण हो, मस्तिष्क की शक्ति उन्नत हो तथा जिससे व्यक्ति अपने पैरों पर खड़ा हो सके। **डा0 राधाकुमुद मुखर्जी** ने मूल्य की परिभाषा देते हुए कहा है कि ''जो कुछ इच्छित है वही मूल्य है'' अर्थात मानवीय व्यवहार में मूल्य शब्द का अर्थ सहज जीवन, शुद्ध आचरण, आत्मसंयम, इन्द्रियनिग्रह, आत्मशुद्धि से है तथा शील, सन्तोष, सत्य, प्रेम, अहिंसा, नैतिकता, लोकमंगल एवं लोककल्याण की भावना भी मानवीय मूल्यों में सन्निहित होती है।

मूल्यपरक शिक्षा के लिए शिक्षक कोई भागीरथी नही है जो शिक्षा में मूल्यों की गंगा को पृथ्वी पर ला सके। शिक्षक होना एक बड़ी साधना है शिक्षक वही है जो प्रसुप्त समस्याओं को जगा देता है और विद्यार्थियों के जिज्ञासा की प्रवृत्ति को जागृत कर देता है तथा विद्यार्थियों को उनके स्वयं के अनुसंधान के लिए साहस भरता है। शिक्षक ही सभ्यता का दीपक जलाये रखने में सक्षम है।

स्वामी विवेकानन्द ने कहा है कि ''मनुष्य की अन्तर्निहित पूर्णता को अभिव्यक्ति प्रदान करने वाली प्रक्रिया का नाम शिक्षा है।'' शिक्षा के क्षेत्र में यह सर्वमान्य तथ्य है कि बच्चें अपने परिवेश से खुद सीखते है वशर्ते कि उन्हें स्वच्छ व समृद्ध परिवेश मिलाना चाहिए। शिक्षा का तात्पर्य मूलतः व्यक्तित्व के संतुलित एवं समग्र विकास से है। आज की शिक्षा व्यवस्था में मूल्यपरक शिक्षा की महती आवश्यकता इसलिए भी है कि हम उन मूल्यों को प्राथमिकता देना सीख ले जो मानव कल्याण की दृष्टिकोण से सबसे अधिक मूल्यवान है। ऐसी शिक्षा में सभी धर्मों के अच्छे मूल्य समाहित होते है। आज हमें ज्ञान तथा संस्कृति और विज्ञान तथा आध्यात्मिकता के संयोजन की आवश्यकता है।

वर्तमान में शिक्षा का उद्देश्य अधिकाधिक प्रशिक्षित मानव शक्ति का विकास करने के साथ ही साथ चरित्र निर्माण में भी इसकी महत्वपूर्ण भूमिका है। भूमण्डलीकरण के इस युग में अवसरों के साथ–साथ आकांक्षाएँ भी बढ़ी है। यह बात व्यक्ति और समाज दोनों के लिए सच है, वस्तुतः मूल्य आधारित शिक्षा अपनाकर ही हम कठिन से कठिन परिस्थितियों का सामना करते हुये राष्ट्र की उन्नति का मार्ग प्रशस्त कर सकते है और व्यक्तित्व विकास भी कर सकते है।

मेरा यह मानना है कि प्रारम्भिक से लेकर उच्च शिक्षा के परिदृश्य को बदलने के लिए सकारात्मक सोच, भावनात्मक जुड़ाव और मानवीय नजरिये को विकसित करना चाहिए तथा साथ ही साथ समय के साथ कदम ताल करने और विश्व पटल पर भारत को महाशक्ति बनकर उभरने के लिए मूल्यपरक शिक्षा की आवश्यकता है।

शिक्षा का मूल उद्देश्य 'शिक्षते उपदीयते विद्यामया सा शिक्षा' अर्थात जिसके द्वारा ज्ञान उपादान किया जाये वह शिक्षा है। शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति को एक अच्छा मनुष्य बनाना है जो श्रेष्ट जीवन मूल्यों से युक्त हो, उसमें ''वसुधैव कुटुम्बकम्'' की भावना तथा द्रुतगति से बदलते युग के साथ मानव कल्याण और उसके व्यक्तित्व विकास के लिए सदा तत्पर रहने की क्षमता से हो। **महर्षि वाल्मीकि** का कहना है कि श्रेष्ठ पुरूष दूसरे पापाचारी प्राणियों के पाप को ग्रहण नही करता उन्हें अपराधी मानकर उनसे बदला नही लेना चाहता। इस नैतिकता एवं मूल्यपरकता की सदा रक्षा करनी चाहिए। हमारे ऋषि एवं आचार्य ने जब कहा कि 'आचारः परमो धर्मः तो इसका यही अर्थ रहा है कि नैतिकता व मूल्यपरकता सबसे बड़ा धर्म है।

वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में मूल्यों का स्तर गिरता जा रहा है। सभी प्रकार के मानवीय मूल्यों के घटनें में चरित्र पतन सबसे बड़ा कारण है। हमारा चरित्र आज क्यों भ्रष्ट एवं नष्ट हो रहा है यह ज्वलंत विचारणीय प्रश्न है। आज मूल्यपरक शिक्षा का पतन हो रहा है तथा शिष्टाचार, सदाचार व शिलाचार आदि सब कुछ धराशायी होकर समाज के उच्च आदर्शो और मूल्यों से दूर होते जा रहें है।

आज भष्टाचार का एकतंत्र राज्य फैल चुका है जो हमारे संस्कार को न केवल पल्लवित होने देते है और न अंकुरित ही तथा समाज एक भटकी हुई अमानवीयत के पथ पर चल रहा है, जहाँ किसी प्रकार से जीवन को न तो शान्ति, न विश्वास, न आस्था, न मिलाप, न सौहार्द्ध और न सहानुभूति ही मिलती है। पूरा जीवन मूल्य–विहिन रेत का नीरस और तृण
सा वेदम हो रहा है और आश्चर्य की बात यह कि भारत नैतिकता एवं मूल्यपरकता जैसे गुणो से युक्त राष्ट्र रहा है जैसे–

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुखःभाग भवेत्।।

अब कहाँ हमारा यह दृष्टिकोण सबके सुख और शान्ति के लिए है ? यह कौन बता सकता है ? अतः मैं कह सकता हूँ कि शिक्षा प्राप्ति की एक सुविचारित नीति होनी चाहिए तथा विद्यार्थियों को शुरू से ही यह जानकारी देनी चाहिए कि जीवन में आगे चलकर आप को किन समस्याओं से जुझना होगा व विद्यार्थी भी जान सके कि जीवन जीने के मार्ग अनेक है तथा उस मार्ग को ही चुनना श्रेयस्कर है जो व्यक्ति विशेष के स्वभाव के अनुकूल हो। मूल्यपरक शिक्षा का मतलब यह नही है कि विद्यार्थियों को सत्य, क्षमा, दया, कर्तव्यनिष्ठा, अहिंसा और ईमानदारी का व्याख्यान दें और इस व्याख्यान से कुछ हासिल नही होता यदि हम इन ऊँची–ऊँची बातों को जीवन में उतारने का बालकों को अवसर न प्रदान करें। विद्यार्थियों की सहज बुद्धि में प्रयोगात्मक सच्चाइयाँ अधिक सहजता से प्रवेश करती है अगर कोरे उपदेश उन्हें प्रभावित कर सकते तो आज समाज में इतनी बेईमानी एवं भ्रष्टाचार न फैला होता।

अन्त में मैं यह कह सकता हूँ कि मूल्यपरक शिक्षा के लिए शिक्षक को जागना होगा। इसके अतिरिक्त कोई भागीरथी नही है जो शिक्षा में मूल्यों की गंगा को पृथ्वी पर ला सके। शिक्षक होना एक बड़ी साधना है शिक्षक वही है जो प्रसुप्त समस्याओं को जगा देता है और विद्यार्थियों के जिज्ञासा की प्रवृत्ति को जागृत कर देता है तथा विद्यार्थियों को उनके स्वयं के अनुसंधान के लिए साहस भरता है। शिक्षक ही सभ्यता का दीपक जलाये रखने में सक्षम है।

हमारे देश के निर्माण में शिक्षक का बहुमूल्य योगदान रहा है और अभी भी रह सकता है यदि वे अतीत की परम्पराओं का पालन कर मनुष्य, समाज, और राष्ट्र के उत्थान पर ध्यान दें। यह बहुत बड़ा उत्तरदायित्व है, यदि शिक्षक इसे पूरा कर सकेगा तो नये जीवन मूल्य और एक नई मनुष्यता का जन्म हो सकता है। इन सभी तथ्यों में अहम् प्रश्न यह है कि जिस शिक्षा प्रणाली की परिधि में मानव समाज का निर्माण हो रहा है वहीं प्रदूषण व्याप्त है। जिस प्रकार गंगा का उद्गम हिमालय से होता है, अगर हिमालय पर ही प्रदूषण व्याप्त हो जाये तो नीचे के स्तर पर कितना भी प्रयत्न किया जायेगा तो गंगा को प्रदूषण मुक्त किया जाना सम्भव नही है।

मूल्यपरक शिक्षा एक अमूर्त सम्प्रत्यय है। इसका सम्बन्ध मनुष्य के भावनात्मक पक्ष से होता है, जो व्यवहार को निर्देशित एवं नियंत्रित करता है। विद्यार्थियों में सामाजिक, आध्यात्मिक, चारित्रिक एवं नैतिक मूल्यों का विकास करना शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य है। आज के भौतिकवादी युग में भी मूल्यपरक शिक्षा चरित्र निर्माण तथा व्यक्ति के सर्वांगीण एवं संतुलित व्यक्तित्व विकास के लिए आवश्यक है और इस पर जोर देने की महती आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची –

1. दूबे, सत्यनारायण (शरतेन्दु): प्राचीन भारत में शिक्षा, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद।
2. कुलश्रेष्ट, एस0पी0: इमर्जिंग वैल्यू पैन्टर्स ऑफ टीचर एण्ड न्यू ट्रेड्स आफ एजूकेशन इन इण्ड़िया, नई दिल्लीः लाइट एण्ड लाइफ पब्लिशर्स।
3. एजूकेशन इन एन्सिएन्ट इण्ड़िया, ए0एस0 अल्टेकर।
4. भारत सरकार (1986): राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986, भारत सरकार नई दिल्ली।
5. रूहेला, सत्यपालः शिक्षा का समाजशास्त्र, आर्य बुक डिपो, नई दिल्ली।
6. पाण्डेय, रामसकलः उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा।
7. लाल रमन विहारीः शिक्षा के समाजशास्त्रीय व दार्शनिक आधार, रस्तोगी पब्लिकेशन, मेरठ।
8. देवराजः दर्शन धर्म–अध्यात्म और संस्कृति, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली

साहित्य में मार्क्सवाद की प्रासंगिकता

शिखा तिवारी

शोध छात्रा
हिन्दी तथा आधुनिक भारतीय भाषा विभाग
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ
ई–मेल : shikhat521@gmail.com

मार्क्सवाद की मान्यता है कि उत्पादन के साधन तथा समाज की यथार्थ परिस्थितियाँ ही मनुष्य के सांस्कृतिक, राजनैतिक, साहित्यिक जीवन क्रम को संचालित करती है इसलिए कला व साहित्य भी मानव जीवन के हेतु है।

समाज दो वर्गों में विभाजित है–

1. सर्वहारा / शोषित
2. पूँजीपति / शोषक

मार्क्स के अनुसार – साहित्य इस सामाजिक संघर्ष को तीव्र करने का महानतम अस्त्र है। हिन्दी का प्रगतिवादी साहित्य भी मार्क्सवादी अनुगँज से प्रभावित है। हिन्दी में ऐसे लेखकों का एक बड़ा हिस्सा है जो वर्तमान व्यवस्था के सामंती और एकाधिकार पूँजीवादी चरित्र का आलोचक तथा उसके द्वारा हो रहे फासिस्टी दमन का कुछ विरोधी है। यह और बात है कि वह वैज्ञानिक समाजवाद के विकल्प को अभी स्वीकार नहीं कर पाया है या उन लेखकों के साथ एकजुट होने के लिए तैयार नहीं जो उनमें विश्वास रखते है।

मार्क्सवादी साहित्य–सिद्धान्तों के अनुसार साहित्य का काम समाज के गतिशील यथार्थ का कलात्मक अंकन, सामाजिक अंतर्विरोधी और अंतः सम्बन्धों की व्याख्या और परितर्वनकारी अग्रगामी प्रगतिशील शक्तियों के सामाजिक परिवर्तन हेतु किए जाने वाले संघर्ष की पृष्ठभूमि तैयार करना। मार्क्सवादी दृष्टिकोण से साहित्य का काम सामाजिक परिवर्तन के प्रति विश्वास और आस्था उत्पन्न करना है। यही मार्क्सवाद की साहित्य–दृष्टि की क्रांतिकारी भूमिका है।

प्रगतिशील लेखकों ने अपनी विचारधारात्मक प्रेरणा मार्क्सवाद से ग्रहण की। **'1936 में प्रगतिशील लेखक संघ'** की स्थापना के बाद हिन्दी–उर्दू के ही नहीं, बल्कि दूसरी भाषाओं के भी अधिकांश परिवर्तनकारी लेखक इसके साथ जुड़े, क्योंकि उन्हें यह महसूस हो रहा था कि देश को औपनिवेशिक दासता से मुक्त कराने के लिए और दुनिया को फासीवाद के खतरे से बचाने के लिए उन्हें भी संगठित होना चाहिए जैसे कि किसान मजदूर और विद्यार्थी हो रहे है। प्रगतिशील लेखक संघ की (1936) की अध्यक्षता करते हुए **'मुंशी प्रेमचन्द'** ने **'साहित्य का उद्देश्य'** नामक भाषण पढ़ते हुए कहा– **'मैं उस साहित्य को श्रेष्ठ समझता हूँ जो मनुष्य को सुलाये नहीं जगाये क्योंकि अत्यधिक सोना मृत्यु का लक्षण है।**

'आदिम सभ्यता – साम्यवाद' जिसे मार्क्स सभ्यता की प्रथम सीढ़ी कहते हैं और जिसमें **'जियो और जीने दो'** की अभिव्यक्ति हुई है यदि साहित्य में इस सिद्धान्त को देखा जाये तो इसकी अभिव्यक्ति भक्तिकाल में 'रामभक्ति शाखा' के महाकवि 'तुलसीदास जी' की रचनाओं में देखा जा सकता है–

''**मुखिया मुख सो चाहिए, खान–पान सो एक।**
पालै–पोषै सकल अंग, तुलसी सहित विवेक।।''

मार्क्सवाद **'औद्योगिक पूँजीवाद'** में उत्पादन एवं उसके शक्तियों (पूँजीवाद) की बात करते है। इसमें मार्क्स पूँजीवादियों के उत्पादन के नैतिकता पर बात करते है। मैटेरियल (खान–पान, रहन–सहन) जिस पर आधुनिक परिप्रेक्ष्य का प्रभाव है का उत्पादन पूँजीवादी अपने मुनाफे (लाभ) के लिए करते है, वे यह नहीं देखते है कि वह हमारे लिए लाभदायक है कि नहीं। 'मार्क्स' के इस सिद्धान्त की अभिव्यक्ति **महाप्राण सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'** की पंक्तियों में स्पष्ट कर सकते हैं–

भेद वो खुल जाय, जो सूरत तुम्हारे दिल में है।
देश को मिल जाय, जो पूँजी तुम्हारे मिल में है।।

पूँजीवाद के विरोध में और इसका यथार्थ अंकन करते हुए 'मुक्तिबोध जी कहते हैं–

वर्तमान समाज चल नहीं सकता।
पूँजी से जुड़ा हृदय बदल नहीं सकता।।

मार्क्स,वर्ग संघर्ष को अत्यन्त महत्वपूर्ण मानते है उनका मानना है कि विरूद्ध मतों से ही नये मतों का सृजन या जन्म होता है। समाज के दो वर्ग धनी एवं श्रमिक में संघर्ष के फलस्वरूप ही तो नवीन समाज का जन्म होता है। प्रगतिवादी कवि चाहते हैं कि ऐसे समाज का निर्माण हो जहाँ वर्ग भेद न हो, प्रगतिवादी कवि उस व्यवस्था को नष्ट करना चाहते है जिसमें अमीरों के कुत्ते तो सुविधाएँ भोग रहे हैं और गरीबो के बच्चे भूख से मर रहे हैं। **'दिनकर'** की पंक्ति उल्लेखनीय है–

श्वानों को मिलता दूध भात, भूखे बच्चे अकुलाते है,
माँ की हड्डी से चिपक, ठिठुर जाड़े की रात बिताते हैं[1]

मार्क्स धार्मिक सिद्धान्तों की बात करते है जिसमें किसी के आस्था पर प्रश्न चिन्ह नहीं लगाते बल्कि रूढ़ियों को व पुरानी उन परम्पराओं का विरोध करता है जो समाज को खोखला बना रही है। धर्मान्धता पर व्यंग्य भी प्रगतिवादी कवियों की पहचान है **'केदारनाथ अग्रवाल'** ने **'चित्रकूट के यात्री'** नामक कविता में भारतीयों की धर्मान्धता पर व्यंग्य करते हुए लिखते हैं–

चित्रकूट के बौड़म यात्री।
सतुआ गुड़ गठरी में बांधे।।
गठरी को लाठी पर साधे।
लाठी को कांधे पर टांगे।।[2]

अतिरिक्त मूल्य के सिद्धान्त में मार्क्स स्पष्ट करते हैं कि यह दोनों मूल्यों का अन्तर है जिन्हें मजदूर पैदा करता है और वसूलता है और इसी को हड़प कर पूँजीपति धनी बन जाते है। मार्क्स अतिरिक्त मूल्यों को जो मजदूर के बजाये पूँजीपति हड़प लेते हैं, उस मूल्य को

समाज व मजदूर श्रमिक वर्ग के कल्याण के लिए लगाने के पक्षधर है। प्रगतिवादी कवि भी इस सामाजिक विषमता को दूर करने पर विशेष बल देता है। **'निराला' पूँजीवादियों को समाज का शोषक बताते हुए** अपनी कविता **कुकुरमुत्ता** में प्रतीकों के माध्यम से लिखते हैं–

''अबे सुन बे गुलाब
भूल मत जो पाइ तूने खुशबू रंगों आब
खून चूसा खाद का तूने अशिष्ट
डाल पर इतरा रहा कैपेटलिस्ट''[3]

प्रकृति के सुकुमार कवि 'सुमित्रानन्दन पंत्र जी का दृष्टिकोण **'युगवाणी'** में मार्क्सवादी विचारधारा से प्रभावित प्रतीत होता है। **'ताज'** नामक कविता में वे स्पष्ट घोषणा करते है कि– जब लोग भूखे, नंगे और आवासविहीन हो तब **'ताजमहल'** जैसे स्मारक बनाने की आवश्यकता नहीं है।

हाय मृत्यु का ऐसा अमर अपार्थिव पूजन।
जब विषण्ण निर्जीव पड़ा हो जग का जीवन।।[4]

मार्क्सवाद सम्पूर्ण विश्व के श्रमिकों का हित एक है ऐसा मानता है, वह समग्रता व शिष्टता पर विचार करता है। **'निराला'** के गीतों में युग–युग से प्रताड़ित, प्रवंचित एवं पीड़ित दलितो के प्रति करूणा है। वे प्रभु से प्रार्थना करते है–

दलित जन पर करो करूणा
दीनता पर उतर आए
प्रभु तुम्हारी शक्ति अरूण[5]

'तोड़ती पत्थर' नामक कविता में उस मजदूरनी का चित्रण है जो तपती दोपहरी में भारी हथौड़े से धूप में बैठी पत्थर तोड़ रही है–

'वह तोड़ती पत्थर देखा मैने उसे इलाहाबद के पथ पर'

इस कविता का मूल स्वर मार्क्सवादी है। कवि यह बताना चाह रहा है कि श्रमिकों की दशाएँ अत्यन्त सोचनीय है। जेठ की तपती दोपहरी में बैठकर वह पत्थर तोड़ रही है जबकि पूँजीपति विलास के साधनों से सम्पन्न है।

मार्क्सवादी दर्शन से प्रोत्साहित **'पन्त', 'दिनकर', 'निराला'** आदि कवियो की रचनाओं में इस बदलती मनःस्थिति का स्पष्ट स्वर परिलक्षित होता है। हिन्दी साहित्य में प्रगतिवादी आलोचना ने जो सबसे महत्वपूर्ण कार्य किया वह था साहित्य से पारम्परिक और प्रभावादी आलोचना पद्धति का निष्कासन। प्रगतिवाद के लिए साहित्य एक सामाजिक कृति है और उसका मूल्यांकन भी सामाजिक कृति है और उसका मूल्यांकन भी सामाजिक उपयोगिता की दृष्टि से ही करना चाहिए। प्रगतिवादी समीक्षा की दृष्टि से वही साहित्य उत्कृष्ट होता है, जिसमें समाज के शोषित वर्ग का समर्थन हो और जिसमें वर्गहीन समाज की स्थापना पर जोर दिया गया हो। **'अमृतराय'** मार्क्सवादी आलोचना की परिभाषा देते हुए लिखते हैं–

''यदि हम मार्क्सवादी आलोचना की कोई परिभाषा देना चाहे तो कहेंगे कि मार्क्सवादी आलोचना साहित्य की वह समाजशास्त्रीय आलोचना है, जो साहित्य के अन्योन्याश्रय तथा गतिशील सम्बन्ध का उद्‌घाटन करती है और सचेतन रूप से समाज को बदलने वाले साहित्य

की सृष्टि की ओर लेखक का ध्यान आकर्षित करती है।''[6]

साहित्य सामाजिक संघर्ष को तीव्र करने का महानतम अस्त्र है। साहित्य का काम समाज के गतिशील यथार्थ का कलात्मक अंकन, सामाजिक अंतर्विरोधी और अंतः सम्बन्धों की व्याख्या और परितर्वनकारी अग्रगामी प्रगतिशील शक्तियों के सामाजिक परिवर्तन हेतु किए जाने वाले संघर्ष की पृष्ठभूमि तैयार करना है। मार्क्सवादी दृष्टिकोण से साहित्य का काम सामाजिक परिवर्तन के प्रति विश्वास और आस्था उत्पन्न करना है।

प्रगतिवादियों के अनुसार लोक–जीवन के गहरे और व्यापक यथार्थ को उद्घाटित करने से ही साहित्य के सौन्दर्य की सृष्टि होती है।

''प्रगतिवादियों ने सौन्दर्य को जीवन के बीच देखा है। प्रगतिवादी ने समाज के तथाकथित छोटे, अनपढ़, गंवार मनुष्यों और उनके जीवन के अंधेरे में पड़ी समस्याओं और पीड़ाओ को उद्घाटित कर सच्चे अर्थों में यथार्थवादी का रूप अवलोकित किया। दृष्टि बदल गयी थी, अतः सौन्दर्य भी वहाँ–वहाँ दिखायी पड़ने लगा जहाँ–जहाँ अभी तक किसी की नजर नहीं गयी थी। प्रकृति भी गाँवों के जीवन सन्दर्भ में देखी जाने लगी। उसका भी वही रूप दिखायी पड़ा जो जन–जीवन के संघर्षमय जीवन से जुड़ा हुआ था।[7]

प्रगतिवादी समीक्षा ने साहित्य को सामाजिक क्रांति का हथियार अवश्य माना किन्तु साहित्य की भावात्मक या अनुभूत्यात्मक स्थिति को नकारा नहीं इसके अनुसार साहित्य का लक्ष्य परिवर्तनकारी क्रांतिकारी ताकतों को बल प्रदान करना है, किन्तु उसकी प्रक्रिया मानव अनुभवों की है। इन अनुभवों के बिना तो साहित्य की कल्पना ही नहीं की जा सकती। छायावाद ने आत्मानुभूति की बात की तो प्रगतिवादी ने सामाजिक अनुभूति की जो मार्क्सवाद का सबसे सबल पक्ष था। हिन्दी में इस समीक्षा प्रणाली का पर्याप्त विकास हुआ। डॉ0 रामविलास शर्मा, शिवदान सिंह चौहान, प्रकाशचन्द्र गुप्त, अमृतराय, नामवर सिंह, शिवकुमार मिश्र, रांगेय राघव आदि ने प्रगतिवादी ढंग पर साहित्य का मूल्यांकन किया है।

विशाल भारत (मार्च 1937) ई0 में 'श्री शिवदान सिंह चौहान– ने 'भारत में प्रगतिशील साहित्य की आवश्यकता' नामक एक महत्वपूर्ण लेख लिखा था। इसमें प्रगतिशील साहित्य की विशेषता बतायी गयी है, अन्त में प्रगतिशील साहित्य रचना की आवश्यकता पर बल दिया गया है। हिन्दी के किसी घोषित प्रगतिवादी आलोचक द्वारा प्रगतिवादी दृष्टिकोण से साहित्यिक विषय पर लिखा गया यह संभवतः प्रथम लेख है। 'चौहान' के अध्ययन पर नहीं परन्तु इनके साहित्यिक रूचि पर उस समय संदेह होता है जब वे हिन्दी साहित्य के विषय में सम्मतियाँ देते हुए बिल्कुल एकतरफा हैं– **''भक्तिकाल में भी केवल आत्मसमर्पण, भक्ति में तल्लीनता आदि भाव ही सूर, तुलसी आदि के साहित्य में भर पाये उनके बाद रीति–काल में विचारधारा तो दूर, हमारे कवि कविता बद्ध कोकशास्त्र लिखने लगे। उनसे अधोगति के अलावा उम्मीद ही क्या की जा सकती है और वर्तमान में भी किसी स्वस्थ विचारधारा का नाम नहीं।''[8]**

लेखक ने इन तीन पंक्तियों में हिन्दी साहित्य के चारों कालों को ध्वस्त कर दिया। कैसे माना जा सकता है कि **चौहान** ने **पं0 रामचन्द्र शुक्ल** के **'हिन्दी साहित्य का इतिहास'** को पढ़कर यह लिखा था। **'प्रेमचन्द'** को वे पूँजीवादी–यथार्थवादी का लेखक मानते है लेकिन यह

नहीं बताते की लेखक अपने युग की सीमाओं से सीमित होता है। 'पूँजीवादी' यथार्थवाद पूँजीवाद या सामान्तवाद की अपेक्षा प्रगतिशील है। उनका सबसे खेद जनक और चिन्त्य वक्तव्य 'छायावाद' के बारे में है। **'जयशंकर प्रसाद', 'पन्त', 'निराला', 'महादेवी'** का नामोल्लेख करते समय वे लिखते हैं– **''इनमें से कुछ स्वभावतः प्रगतिशील भी हैं, लेकिन उनकी कविताएँ प्रगतिशील न होकर प्रतिक्रियावादी होती है, इस छायावाद की धारा ने हिन्दी साहित्य को जितना धक्का पहुँचाया उतना शायद ही हिन्दू महासभा या मुस्लिम लीग ने भारत को पहुँचाया हो।''**[9] निश्चय ही 'चौहान' के ध्यान में ये पंक्तियाँ लिखते समय 'निराला' के **'बादल राग', 'विधवा'** और 'पन्त' के **'युगान्त', 'युगवाणी'** जैसी कविताएँ नहीं थीं।

प्रगतिवाद के सामाजिक यथार्थवादी दृष्टिकोण के कारण कविता में जितना परिवर्तन हुआ, उतना कहानी, उपन्यास के क्षेत्र में नहीं हुआ। इसका कारण है कि प्रेमचन्द के युग से ही उपन्यास में यथार्थवादी प्रवृत्ति का उदय हो गया था। अपनी कहानियों में मध्यवर्गीय भद्र–पुरूषों का, यथार्थ जीवन का चित्रण किया था। 'प्रेमचन्द' के समय किस तरह परिस्थितिवश किसान, मजदूर बनने के लिए विवश हो गया था, इसे भी उन्होंने 'गोदान' में अच्छी तरह दिखा दिया था। कविता, कहानी, उपन्यास इत्यादि के क्षेत्र में प्रगतिशील दृष्टि से रचना कार्य किया, उसे आलोचना के क्षेत्र में भी इसी तरह भरपूर सम्मान मिला। प्रगतिवादी विचारों से युक्त प्रतिभाशाली आलोचकों का एक तेजस्वी समूह उभर कर आया। प्रगतिवादी समीक्षा ने साहित्य को सामाजिक क्रांति का हथियार अवश्य माना किन्तु साहित्य की भावात्मक व अनुभूत्यात्मक स्थिति को नकारा नहीं इसके अनुसार साहित्य का लक्ष्य परिवर्तनकारी ताकतों को बल प्रदान करना है।

'मार्क्सवाद' का सबसे क्रांतिकारी पक्ष समाज के विषमताओं को दूर करने का था, जिसके लिए उसने मनुष्य को केन्द्र में रखा अतः 'मार्क्सवाद' की यह अभिव्यक्ति पूर्णतः साहित्य में हुई है, क्रांतिकारी ताकतों को बल प्रदान करना साहित्य का लक्ष्य है और उसकी प्रक्रिया मानव अनुभवों की है। अंततः स्पष्ट है कि मार्क्सवाद साहित्य में प्रासंगिक बना हुआ है, क्योंकि मार्क्सवादी सामाजिक सुधार के लिए जो प्रयत्न किये है, जिनको केन्द्र में रखा है उसके बिना साहित्य की कल्पना ही नहीं की जा सकती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

1. प्रतियोगिता साहित्य, डॉ0 अशोक तिवारी, पृष्ठ सं0– 100
2. वही, पृष्ठ सं0–104
3. वही, पृष्ठ सं0–100
4. वही, पृष्ठ सं0–79
5. वही, पृष्ठ सं0–81
6. हिन्दी आलोचना की पारिभाषिक शब्दावली, डॉ0 अमरनाथ पृष्ठ सं0–266
7. वही, पृष्ठ सं0–266
8. हिन्दी आलोचना, विश्वनाथ त्रिपाठी, 14 संस्करण, पृष्ठ सं0–179
9. वही, पृष्ठ सं0–179

हिन्दी साहित्य में शिवप्रसाद सिंह के कहानी साहित्य का यथार्थ चित्रण

अरविन्द यादव

शोध छात्र
सी. वी. पटेल आर्ट्स कालेज,
नडियाद गुजरात

कहानीकार शिवप्रसाद सिंह आंचलिक कहानीकारों में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। हिन्दी साहित्य के इतिहास में विशेष रूप से कहानी साहित्य में आपका योगदान सराहनीय रहा है। कहानीकार शिवप्रसाद सिंह प्रेमचंद की परंपरा को अग्रसित करने में सफल रहे एवं ग्राम्य जीवन की विसंगतियों को भी अपने कथानक का मुख्य आधार बनाया। हिन्दी साहित्य में कहानीकार शिवप्रसाद सिंह का जन्म 19 अगस्त, 1928 को बनारस के जलालपुर गांव में एक जमींदार परिवार में हुआ था। उनके विकास में दादी माँ, पिता और माँ का विशेष योगदान रहा, इस बात की चर्चा वे प्रायः करते थे। उनकी पहली कहानी भी 'दादी माँ' थी, जिससे हिन्दी कहानी को नया आयाम मिला। 'दादी माँ' कहानी से नई कहानी का प्रवर्तन स्वीकार किया गया, यही वह कहानी थी जिसे पहली आंचलिक कहानी होने का गौरव प्राप्त हुआ तब तक रेणु का आंचलिकता के क्षेत्र में आविर्भाव नहीं हुआ जब तक शिवप्रसाद सिंह ने आंचलिकता के जो प्रयोग किए वह प्रेमचंद और रेणु से पृथक था, एक तरफ दोनों का मध्यम मार्ग था और यही कारण था कि उनकी कहानियां पाठकों को अधिक आकर्षित कर सकी थीं। इस तरह से शिवप्रसाद सिंह के कहानियों के कथावस्तु से नई धारा के प्रवर्तन का श्रेय मिला हो, हिन्दी साहित्य में उस समय कहानी विधा में अनेक आन्दोलन का दौर रहा। लेकिन शिवप्रसाद सिंह अपने को किसी आन्दोलन से नहीं जोड़ा वे एक स्वतंत्र कहानीकार के रूप में अनेक कहानियों के लेखन में सफल रहे।

शिवप्रसाद सिंह भारत को गाँवों में बसा मानते हैं और यही कारण है कि उनकी कहानियों में ग्रामीण कथाकार को लेखक अपनी कहानी को धारा देते हैं। आपकी कहानियाँ मानवीय मूल्यों की परख की एक रूपरेखा तैयार करने में सफल रही है। शिवप्रसाद सिंह ने अपनी कहानियों को दोहती गुत्थी चुटिया के रूप में प्रस्तुत किया है। शिवप्रसाद सिंह के तत्कालीन समाज में यथार्थ का चित्रण 'वेहया' नामक कहानी में देखने को मिलता है। विधवा सुभागी अपने–प्रणय प्रस्ताव की अस्वीकृति के उपरान्त केशो ठाकुर अपनी काम–क्षुधा, उसकी किशोरी बेटी के साथ बलात्कार करके शान्त करता है सुभागी, केशों ठाकुर से इस कृत्य का बदला उसके बेटे को पथभ्रष्ट करके चुकाती है। इस कहानी में लेखक ने विधवा समस्या एवं जाति प्रथ का क्रूर रूप दिखाने का प्रयास किया है।

'आँखें' कहानी में कहानीकार शिवप्रसाद सिह एक माँ के प्रति एक बेटी के लगाव का चित्रण यथार्थ रूप में प्रस्तुत किया है। इस कहानी की मुख्यपात्र गुलाबो जो अपनी बूढ़ी माँ के लिए अपने पति को छोड़कर पान की दुकान कर लेती है और अपने समाज की दृष्टि से बेहया बन जाती है। इस कहानी के माध्यम से एक आदर्श पुत्री होने की शिक्षा मिलती है और समाज आज वर्तमान समय में जिस प्रकार से अपने बुजुर्गों को उपेक्षित कर रहा है, उसका चित्रण इस कहानी के माध्यम से शिवप्रसाद सिंह ने किया है। 'आँखें' कहानी की तरफ 'दादी माँ' कहानी में एक माँ की ममता का दृष्टिपात होता है।

शिवप्रसाद सिंह मनुष्य के प्रति प्रतिबद्ध हैं, उनकी कहानियां व्यक्ति की संवेदना का बारीकी के साथ चित्रण, सजीव पात्रों की दृष्टि, जीवन के प्रति आवश्यक, आश्वासन, अनास्था के बीच आस्था आदि विषमताएं दृष्टिगोचर होती है। आपकी कहानियां ग्रामीण जीवन के अन्तर्विरोध के साथ–साथ मानवीय संवेदना की झलक की स्पष्ट छाप दृष्टिगत होती है। शिवप्रसाद सिंह कहानी साहित्य के माध्यम से जीवन के यथार्थ को समझाने में सफल रहे हैं।

कहानीकार शिवप्रसाद सिंह की कहानी 'कर्मनाशा की हार' विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इस कहानी में व्यतीत–संघर्ष के विषय में बड़ा मार्मिक चित्र खींचा गया है, इस कहानी में मनुष्य की स्वार्थपरकता एवं जीवन मोह से उत्पन्न कायरता का रूप सामने आता है। लोगों की मान्यता थी कि कर्मनाशा का पानी तभी नीचे उतरेगा जब किसी के प्राणों की बली दी जायेगी। इस कहानी में ग्रामीण जीवन में परम्पराएं, रूढ़ियां तथा अंधविश्वास पूरी तरह व्याप्त है लेकिन इसी कहानी में वर्तमान समाज की गतिशीलता का परिचय मिलता है। इस कहानी का एक पात्र 'भैरो पाण्डेय जी' मुखिया से कहता है, मेरी राय पूंछते हो मुखिया जी तो सुनों कर्मनाशा की बाढ़ दूध मुहें बच्चे और एक अबला की बलि देने से नहीं रूकेगी।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि कहानी में समाज की गतिशीलता, परम्परा एवं अंधविश्वास का आपस में विरोध का स्वर सुनाई देता है।

'नन्हों' शिवप्रसाद सिंह की सशक्त कहानी है, जिसमें नारी के अनन्य प्रेम का चित्रण है। 'नन्हो' माँ–बाप द्वारा निश्चित भाग्य को भाग्य मान लेती है, 'नन्हो' शादी के कुछ दिन बाद विधवा हो जाती है। इस कहानी में एक विधवा समस्या को उजागर किया गया है।

'इन्हें भी इन्तजार है' कहानी में भी लेखक ने वर्ग–वैषम्य पर ग्रामीण जीवन यथार्थ को उजागर करने का प्रयास किया है। इस कहानी में डोम जाति की यथास्थिति का वर्णन बडी गंभीरता के साथ किया गया है। इस कहानी में शिव प्रसाद सिंह वर्ग वैषम्य का जो रूप सामने रखते है वह सोचनीय है किस प्रकार नीची जातियां उपेक्षित हैं, उनके विकास में सरकार ध्यान नहीं दे रही है।

शिवप्रसाद सिंह शिल्प और भाषा की दृष्टि से बहुत ज्यादा प्रभावित नहीं करते है फिर भी आपने भाषा के ऐसे रूप प्रयोग किए हैं, जो सामान्य जन आसानी से समझ सकते हैं एवं सरल शब्द का प्रयोग साहित्य के वास्तविक रूप को प्रदर्शित किया है। आपने चित्रित समाज और वर्ग की भाषा अर्थात भेजपुरी के साथ–साथ अरबी–फारसी भाषा के शब्दों का प्रयोग किया

है। लेकिन शिल्पगत सौंदर्य की उपेक्षा होती है। फिर भी आपकी भाषा, शैली भागम्य सरल एवं सहज है।

शिवप्रसाद सिंह मनुष्य के प्रति प्रतिबद्ध हैं, उनकी कहानियां व्यक्ति की संवेदना का बारीकी के साथ चित्रण, सजीव पात्रों की दृष्टि, जीवन के प्रति आवश्यक, आश्वासन, अनास्था के बीच आस्था आदि विषमताएं दृष्टिगोचर होती है। आपकी कहानियां ग्रामीण जीवन के अन्तर्विरोध के साथ–साथ मानवीय संवेदना की झलक की स्पष्ट छाप दृष्टिगत होती है। शिवप्रसाद सिंह ने अपने कहानी साहित्य के माध्यम से जीवन के यथार्थ को समझाने में सफल रहे हैं।

अंततः शिवप्रसाद सिंह के कहानी साहित्य के अध्ययन द्वारा तत्कलीन समाज के अर्न्तसंबंधों को समझ सकेंगे तो दूसरी ओर इन सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक, ऐतिहासिक तथा सांस्कृतिक संदर्भों एवं प्रभावों से परिचित हो जायेंगे। शिवप्रसाद सिंह के कहानी साहित्य की विषयवस्तु कथ्य एवं शिल्प के कारण अलग–अलग धरातल पर आधारित है और यहीं उनकी विशिष्टता कही जा सकती है। आज गाँव–गाँव की भाषा, गाँव की शैली जान–बूझकर गायब की जा रही है। फिर भी अंधविश्वास, बाह्यआडम्बर, यौन शोषण, धर्माडम्बर के चलते भाषा, व्यवहार सब बदल रहा है।

<u>संदर्भ ग्रन्थ सूची</u>–

1. मूल ग्रंथ या आधार ग्रंथ
2. कहानी संग्रह
   I. खेरा पीपल कभी न डोले
   II. कर्मनाशा की हार
   III. आर–पार की माला
   IV. इन्हें भी इन्तजार है
   V. खेरा पीपल कभी न डोल

राजकीय एवं स्ववित्तपोषित माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों की शैक्षिक अभिप्रेरणा का तुलनात्मक अध्ययन

सुरेन्द्र कुमार यादव

शोधछात्र (शिक्षाशास्त्र)
शिक्षक–शिक्षा संकाय
नेहरू ग्राम भारती डीम्ड टू बी यूनिवर्सिटी,
इलाहाबाद।

प्रस्तावना :

शिक्षा ही वह साधन है जिसके द्वारा मानव की पाशविक प्रवृत्तियाँ परिवर्तित एवं समायोजित होती हैं। आदिकाल से लेकर आधुनिककाल तक यह कार्य शिक्षा प्रक्रिया द्वारा ही समपन्न हो रहा है। शिक्षा के सम्बन्ध में प्रसिद्ध अर्थशास्त्री लॉक ने कहा था कि ''जिस प्रकार पौधों का विकास कृषि द्वारा होता है उसी प्रकार बालक का विकास शिक्षा होता है।'' **जॉन डी0वी0** ने भी शिक्षा के बारे में इसी प्रकार मत व्यक्त करते हुए का है कि ''शिक्षा एक गत्यात्मक प्रक्रिया है यह जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त चलती रहती है।'' इसी प्रकार अरविन्द ने शिक्षा के सम्बन्ध में अपना मत व्यक्त किया है– ''शिक्षा मानव के मस्तिष्क और आत्मा की शक्तियों का निर्माण करती है और उसमें ज्ञान, चरित्र और संस्कृति को जाग्रत करती है।'' इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए शिक्षा के सभी साधन सहायता करते हैं जिनमें प्रमुख साधन विद्यालय हैं। शिक्षा संस्थाओं का निर्माण समाज द्वारा इसी कारण किया गया है कि समाज के सदस्यों को आदर्श एवं कुशल नागरिक बनाया जा सके।

शिक्षा एवं संस्थाओं के कार्य के विषय में यूनेस्को की मूलभूत शिक्षा में कहा गया है कि– शिक्षा संस्थाओं का कार्य वे समाज के पुरूषों और स्त्रियों को पूर्ण एवं सुखद जीवन में सहायता करें। प्रसिद्ध शैक्षिक समाजशास्त्री **ओटावे के अनुसार**– ''विद्यालय को समाज की आवश्यकता को पूरा करने के लिए सामाजिक अधिकार समझा जाना चाहिए।'' वास्तव में विद्यालय समाज की देन है क्योंकि वे सामाजिक जीवन की आवश्यकता की पूर्ति करते हैं, इसलिए विद्यालय को लघु समाज कहा गया है।

प्राचीनकाल से लेकर आधुनिक समय तक विद्यालयों का अपना इतिहास है। वैदिककाल में विद्यालयी अध्ययन संस्कार के पश्चात् प्रारम्भ होती थी। प्राचीन काल के शिक्षा के केन्द्र आश्रम व गुरूकुल होते थे, जहाँ प्रबुद्ध शिक्षक शिक्षा देने का कार्य करते थे। इन आश्रमों व गुरूकुलों की व्यवस्था दान पर आधारित होती थी। मध्यकाल में शिक्षा का अर्थ बहुत संकुचित हो गया। मुस्लिम शासकों ने शिक्षा को धर्म से जोड़कर मकतब और मदरसों की व्यवस्था राज्य द्वारा होती थी। अंग्रेजों के शासनकाल में विद्यालयी शिक्षा को समुन्नत बनाने का प्रयास किया गया। 1854ई0 के वुड घोषणा पत्र के बाद क्रमवार विद्यालय स्थापित किये गये। स्वतंत्र भारत

में विद्यालयी शिक्षा पर विशेष बल दिया गया। हमारे देश में शिक्षा की व्यवस्था के लिए अनेक संस्थायें कार्यरत हैं। प्रत्येक राज्य में शिक्षा प्रचार एवं प्रसार के लिए सरकारी विद्यालयों के अतिरिक्त अनेक अराजकीय विद्यालय जैसे– राजकीय, स्ववित्तपोषित विद्यालयों आदि। राजकीय एवं स्ववित्तपोषित में छात्र एवं छात्राओं की शैक्षिक अभिप्रेरणा के अनुसार विषयगत प्रश्न शोधकर्त्ता को यह जानने के लिये उत्साहित करते हैं कि वह यह देखे कि इस प्रकार के विद्यालयों में शैक्षिक अभिप्रेरणा होती है कि नहीं।

शिक्षा मानव के मस्तिष्क और आत्मा की शक्तियों का निर्माण करती है और उसमें ज्ञान, चरित्र और संस्कृति को जाग्रत करती है। इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए शिक्षा के सभी साधन सहायता करते हैं जिनमें प्रमुख साधन विद्यालय हैं। शिक्षा संस्थाओं का निर्माण समाज द्वारा इसी कारण किया गया है कि समाज के सदस्यों को आदर्श एवं कुशल नागरिक बनाया जा सके।

अभिप्रेरणा एक ऐसी परिकल्पनात्मक प्रक्रिया है जो प्राणी के व्यवहार के निर्धारण व संचालन से सम्बन्ध रखती है। व्यवहार को अनुप्रेरित, सक्रिय, प्रारम्भ अथवा बनाए रखने वाले कारकों को अभिप्रेरणात्मक कारक कहा जाता है। अभिप्रेरणात्मक प्रक्रियाओं को इंगित करने के लिए प्रयुक्त किया जाता है। वास्तव में यह एक आन्तरिक शक्ति होती हो जो प्राणी को किसी विशिष्ट प्रकार के कार्य को करने के लिए प्रेरित करती हैं। अभिप्रेरणा को प्रत्यक्ष निरीक्षण के द्वारा देखा जाना सम्भव नहीं हो पाता हैं प्राणी के व्यवहार का अवलोकन करके उसकी अभिप्रेरणा को समझा जा सकता है। अभिप्रेरणा वास्तव में क्यों के प्रश्न का उत्तर देती है। व्यक्ति खाना क्यों खाता है? व्यक्ति दूसरों से क्यों लड़ता है? व्यक्ति उच्च पदों पर क्यों जाना चाहता है? जैसे प्रश्नों का उत्तर अभिप्रेरणा से सम्बन्धित है। मनोवैज्ञानिकों ने अभिप्रेरणा शब्दों को भिन्न–भिन्न ढंग से परिभाषित किया है। गुड के अनुसार – ''अभिप्रेरणा किसी कार्य को प्रारम्भ करने जारी रखने अथवा नियंत्रित करने की प्रक्रिया है।''

वैसे भी सामान्यतः यह देखा जाता है कि माध्यमिक स्तर पर अपव्यय तथा अवरोधन की समस्या के अतिरिक्त शैक्षिक अभिप्रेरणा को प्रभावित करने वाले अनेक कारक उत्तरदायी हैं। जैसे– सामाजिक आर्थिक स्थिति, भौगोलिक दशायें, जनसंचार साधनों से पृथकता, अप्रांसगिक पाठ्यक्रम, अनुपयुक्त शिक्षण विधियाँ बालकों के प्रति शिक्षकों की अभिवृत्ति, रुचि, बुद्धि आकांक्षा स्तर तथा उच्च मानसिक योग्यता एवं निम्न मानसिक योग्यता, विद्यालय का सामाजिक–मनोवैज्ञानिक पर्यावरण, गृह–पर्यावरण, समायोजन एवं माता–पिता का प्रोत्साहन इत्यादि।

समस्या कथन

प्रस्तुत अध्ययन का शीर्षक निम्नलिखित है –

''राजकीय एवं स्ववित्तपोषित माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों की शैक्षिक अभिप्रेरणा का तुलनात्मक अध्ययन।''

अध्ययन के उद्देश्य :

प्रस्तुत अध्ययन में निम्नलिखित उद्देश्यों का अध्ययन किया गया है–

1. राजकीय तथा स्ववित्तपोषित के छात्रों की शैक्षिक अभिप्रेरणा का तुलनात्मक अध्ययन करना।
2. राजकीय तथा स्ववित्तपोषित की छात्राओं की शैक्षिक अभिप्रेरणा का तुलनात्मक अध्ययन करना।
3. राजकीय तथा स्ववित्तपोषित के विद्यार्थियों की शैक्षिक अभिप्रेरणा का तुलनात्मक अध्ययन करना।

परिकल्पनाएँ :

प्रस्तुत अध्ययन की परिकल्पनाएँ निम्नलिखित हैं –

1. राजकीय तथा स्ववित्तपोषित के छात्रों की शैक्षिक अभिप्रेरणा में सार्थक अन्तर है।
2. राजकीय तथा स्ववित्तपोषित की छात्राओं की शैक्षिक अभिप्रेरणा में सार्थक अन्तर है।
3. राजकीय तथा स्ववित्तपोषित के विद्यार्थियों की शैक्षिक अभिप्रेरणा में सार्थक अन्तर है।

शोध प्रविधि :

वर्तमान समय की समस्याओं के अध्ययन के लिए विवरणात्मक सर्वेक्षण विधि ही उपयुक्त होती है क्योंकि सर्वेक्षण के अन्तर्गत अध्ययन के लिए सम्भावयता सिद्धान्त के आधार पर केवल एक जनसंख्या के प्रतिदर्शन द्वारा शैक्षिक क्षेत्र से सम्बन्धित समस्या के बारे में प्रतिनिध आंकड़े संकलित किये जा सकते हैं जो सम्बन्धित समष्टि के स्वरूप को लगभग पूर्ण रूपेण प्रतिबिम्बि करते हैं। प्रस्तुत अध्ययन के सन्दर्भ में अध्ययनकर्ता ने संभाविता प्रतिदर्शन के साधारण यादृच्छिक प्रतिदर्शन प्रविधि का प्रयोग किया है। प्रतिदर्श का चुनाव करने हेतु सर्वप्रथम इलाहाबाद शहर के राजकीय तथा स्ववित्तपोषित विद्यालयों में से समय व सुविधा को दृष्टिगत रखते हुए 2–2 विद्यालयों का चयन लाटरी पद्धति से किया है 2 राजकीय से 50 छात्र–छात्राएं, तथा 2 स्ववित्तपोषित से 50 छात्र–छात्राएं का चयन प्रतिदर्श के रूप में किया था। इस प्रकार कुल 100 छात्रा/छात्राओं को अध्ययन के प्रतिदर्श के रूप में लिया गया है। उपकरण के रूप में डॉ0 टी0आर0 शर्मा द्वारा निर्मित **'एकेडमिक अचीवमेंट मोटीवेशन टेस्ट'** का प्रयोग किया गया है। प्रदत्तों के विश्लेषण हेतु टी–अनुपात सांख्यिकी विधि का प्रयोग किया गया है।

आँकड़ों का विश्लेषण एवं व्याख्या :

H_1 : राजकीय एवं स्ववित्तपोषित विद्यालयों के विद्यार्थियों की शैक्षिक अभिप्रेरणा में सार्थक अन्तर है।

H_{01} : राजकीय एवं स्ववित्तपोषित विद्यालयों के विद्यार्थियों की शैक्षिक अभिप्रेरणा में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

सारणी 1

राजकीय एवं स्ववित्तपोषित विद्यालयों के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि से सम्बन्धी प्राप्तांकों (मध्यमान, मानक विचलन तथा t-मान) का मान

क्रमांक	चर	संख्या	मध्यमान	मानक	t-मान	सार्थकता

		(N)	(M)	विचलन (S.D)		स्तर
1.	राजकीय के विद्यार्थी	50	28.18	2.33	4.49	सार्थक
2.	स्ववित्तपोषित के विद्यार्थी	50	30.52	2.86		

उपर्युक्त तालिका सं0 1 के अवलोकन से स्पष्ट है कि t का परिकलित मान 4.49 है जो सार्थकता स्तर 0.05 तथा मुक्तांश (df) 98 के सारणी मान 1.98 से अधिक है, अर्थात् मध्यमानों के बीच सार्थक अन्तर है। अतः शून्य परिकल्पना (H_{01}) अस्वीकृत तथा शोध परिकल्पना (H_1) स्वीकृत होती हैं अर्थात् राजकीय एवं स्ववित्तपोषित विद्यालयों के विद्यार्थियों की शैक्षिक अभिप्रेरणा में अन्तर है अर्थात् स्ववित्तपोषित विद्यालयों के विद्यालयों के विद्यार्थियों की शैक्षिक अभिप्रेरणा राजकीय विद्यालयों के विद्यार्थियों की अपेक्षा उच्च पायी गयी।

H_2 : राजकीय एवं स्ववित्तपोषित विद्यालयों के छात्रों की शैक्षिक अभिप्रेरणा में सार्थक अन्तर है।

H_{02} : राजकीय एवं स्ववित्तपोषित विद्यालयों के छात्रों की शैक्षिक अभिप्रेरणा में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

सारणी 2

राजकीय एवं स्ववित्तपोषित विद्यालयों के छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि से सम्बन्धी प्राप्तांकों (मध्यमान, मानक विचलन तथा t-मान) का मान

क्रमांक	चर	संख्या (N)	मध्यमान (M)	मानक विचलन (S.D)	t-मान	सार्थकता स्तर
1.	राजकीय के छात्र	25	27.32	2.29	3.68	सार्थक
2.	स्ववित्तपोषित के छात्र	25	30.36	3.33		

उपर्युक्त तालिका सं0 2 के अवलोकन से स्पष्ट है कि t का परिकलित मान 3.68 है जो सार्थकता स्तर 0.05 तथा मुक्तांश (df) 48 के सारणी मान 2.01 से अधिक है, अर्थात् मध्यमानों के बीच सार्थक अन्तर है। अतः शून्य परिकल्पना (H_{02}) अस्वीकृत तथा शोध परिकल्पना (H_2) स्वीकृत होती हैं अर्थात् राजकीय एवं स्ववित्तपोषित विद्यालयों के छात्रों की शैक्षिक अभिप्रेरणा में अन्तर है अर्थात् स्ववित्तपोषित विद्यालयों के विद्यालयों की के विद्यार्थियों शैक्षिक अभिप्रेरणा राजकीय विद्यालयों के विद्यार्थियों की अपेक्षा उच्च पायी गयी।

H_3 : राजकीय एवं स्ववित्तपोषित विद्यालयों की छात्राओं की शैक्षिक अभिप्रेरणा में सार्थक अन्तर है।

H_{03} : राजकीय एवं स्ववित्तपोषित विद्यालयों की छात्राओं की शैक्षिक अभिप्रेरणा में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

सारणी 3

राजकीय एवं स्ववित्तपोषित विद्यालयों की छात्राओं की शैक्षिक अभिप्रेरणा से सम्बन्धी प्राप्तांकों (मध्यमान, मानक विचलन तथा t-मान) का मान

क्रमांक	चर	संख्या (N)	मध्यमान (M)	मानक विचलन (S.D)	t-मान	सार्थकता स्तर
1.	राजकीय की छात्राएँ	25	29.04	2.07	1.99	असार्थक
2.	स्ववित्तपोषित की छात्राएँ	25	30.68	2.17		

उपर्युक्त तालिका सं0 3 के अवलोकन से स्पष्ट है कि t का परिकलित मान 1.99 है जो सार्थकता स्तर 0.05 तथा मुक्तांश (df) 48 के सारणी मान 2.01 से कम है, अर्थात् मध्यमानों के बीच सार्थक अन्तर नही है। अतः शून्य परिकल्पना (H_{03}) स्वीकृत तथा शोध परिकल्पना (H_3) अस्वीकृत होती हैं अर्थात् राजकीय एवं स्ववित्तपोषित विद्यालयों की छात्राओं की उच्च शैक्षिक अभिप्रेरणा में कोई अन्तर नहीं है अर्थात् दोनों में समानता है।

अध्ययन के परिणाम :

प्रस्तुत अध्ययन में परीक्षण के प्रशासन से प्राप्त आँकड़ों के सांख्यिकीय विश्लेषण से निम्नलिखित परिणाम प्राप्त हुए–

- राजकीय एवं स्ववित्तपोषित विद्यालयों के विद्यार्थियों की शैक्षिक अभिप्रेरणा में अन्तर है अर्थात् स्ववित्तपोषित विद्यालयों के विद्यालयों के विद्यार्थियों की शैक्षिक अभिप्रेरणा राजकीय विद्यालयों के विद्यार्थियों की अपेक्षा उच्च पायी गयी।
- राजकीय एवं स्ववित्तपोषित विद्यालयों के छात्रों की शैक्षिक अभिप्रेरणा में अन्तर है अर्थात् स्ववित्तपोषित विद्यालयों के विद्यालयों की के विद्यार्थियों शैक्षिक अभिप्रेरणा राजकीय विद्यालयों के विद्यार्थियों की अपेक्षा उच्च पायी गयी।
- राजकीय एवं स्ववित्तपोषित विद्यालयों की छात्राओं की उच्च शैक्षिक अभिप्रेरणा में कोई अन्तर नहीं है अर्थात् दोनों में समानता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

- अग्रवाल, के0 एल0 (1986) विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि पर पितृ–प्रोत्साहन के प्रभावों का एक अध्ययन, पी0–एच0 डी0 शिक्षाशास्त्र, गढ़वाल यूनिवर्सिटी।
- अरोरा, रीता (1988), उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के लड़के–लडकियों की शैक्षिक उपलब्धि में अभिभावकों बच्चों का सम्बन्ध और शिक्षक–शिक्षार्थी के सम्बन्ध की भूमिका, पी0–एच0 डी0 साइकालॉजी, आगरा यूनिवर्सिटी।

- मुखोपाध्याय, दिलीप कुमार (1989) माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों की कुछ व्यक्तिगत विशेषताओं के विकास और शैक्षिक उपलब्धि पर वातावरण के प्रभाव का अध्ययन, पी0एच0डी0 शिक्षाशास्त्र विश्वभारती यूनिवर्सिटी।
- रामचन्द्रन आर0 (1990) शैक्षिक उपलब्धि अभिप्रेरणा और दूसरे मनोवैज्ञानिक कारको–तर्कशक्ति, चिन्ता और समायोजन के बीच सम्बन्धो का अध्ययन, एम0फिल0 शिक्षाशास्त्र, अन्नामलाई यूनिवर्सिटी।
- अग्रवाल, रेखा एवं कपूर, माला (1998) प्राइमरी स्तर पर बच्चों के शैक्षिक क्रिया कलाप में अभिभावक की सहभागिता उनकी शैक्षिक स्थिति के बीच सम्बन्ध, *जर्नल ऑफ इण्डियन एजूकेशन*, वाल्यूम–4।
- मोहन्ती, डी0 (2000) 'स्कूल टाइप सॉइकेलॉजीकल डिफरेस्टिएयन एण्ड एचीवमेन्ट ऑफ ट्राइबल एण्ड नॉन ट्राइबल चिल्ड्रेन, पी0एच0डी0 शिक्षाशास्त्र, उत्कल यूनिवर्सिटी।
- अग्रवाल, आर0पी0 (2002) सम कोरिलेट्स ऑफ एकेडमिक एचीवमेन्ट मोटीवेशन, पी0एच0डी0 थीसिस शिक्षाशस्त्र, लखनऊ यूनिवर्सिटी।
- लाल, छामू (2002) इफैक्टव ऑफ अचीवमेंट मोटिवेशन एण्ड सोशियो– इकोनॉमिक स्टेटस ऑन स्पोर्ट्स परफार्मेन्स ऑफ स्पोर्ट्स वुमेन, पी0एच0डी0 फिजिकल एजूकेशन, बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी।

राम की शक्ति पूजा : युग सत्य बनाम सार्वकालिक सत्य

जय सिंह यादव

शोध छात्र (हिन्दी विभाग)
दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर,
विश्वविद्यालय गोरखपुर

सत्य एक निरपेक्ष संज्ञा है। दर्शन, सत्य, का अवलंब होता है। मानसिक जगत में तार्किक एवं अतार्किक प्रश्नों का उत्तर दर्शन से संभव है लेकिन जीवन से नहीं। जीवन दर्शन एकांगी एवं इकहरा होता है। दर्शन से हम सारे सवालों का जवाब पाने की उम्मीद कर सकते हैं। जबकि जीवन दर्शन से नहीं। सत्य चूँकिं दर्शन का साध्य होता है। जाहिर है यह दिशा काल एवं क्रिया से निरपेक्ष होता है। सत्य वह नहीं होता जो जीतता हुआ दीखता है, हारते हुए भी जो जीतने का प्रभाव छोड़ता है, सत्य वह भी होता है। हर समय दो सत्य होता है। एक तत्कालीन चेतना का सत्य दूसरा ऐतिहासिक विकास के क्रम में शाश्वतता का सत्य। इन्हीं दो बिदुओं पर हम 'राम की शक्ति पूजा' की चर्चा करेंगे और देखेगें कि निराला ने कितनी ईमानदारी से इन दो तत्वों को रखा है एवं जिया है।

जहाँ तक युग सत्य की बात है, किसी भी रचना पर तीन तरह के प्रभाव स्पष्ट रूप से देखे जा सकते हैं–

(क) तत्कालीन युगीनचेतना का प्रभाव

(ख) रचनाकार की वैयक्तिक प्रतिभा का प्रभाव और

(ग) उस प्रेरणा का प्रभाव जहाँ से प्रेरित होकर कवि ने उस रचना को संभव बनाया।

युग सत्य का सीधा सा मतलब यह है कि जिस जमाने में रचना की गई या फिर कथानक की जमीन तैयार की गई उस जमाने का सच क्या था और सार्वकालिक सत्य का मतलब यह है कि क्या कुछ उस जमाने में ऐसा था जो समय एवं दिशा की सीमा को लाँघ कर चिरंतन हो सके।

राम–रावण का युद्ध एक प्रतीक है। युद्ध में राम की मानवोचित परेशानी ईश्वर का मानवीकरण है। अपनी छोटी से क्षुद्र सेना के सहारे अन्यायियों के खिलाफ राम की युद्ध की घोषणा जनशक्ति का लोकतांत्रीकरण है। समाज के सभी वर्गों का प्रतिनिधिक चित्रण बिखरे हुए शक्तिकणों का एकीकरण है। यह युग का सत्य है कि हर जमाने के समाज में दो शक्तियाँ काम करती है एक सकारात्मक तो दूसरी नकारात्मक। पहली की दिशा स्वगामी होती है तो दूसरी की परगामी। पहली अपने को तोड़कर भी दूसरी को निर्मित करती है। जबकि दूसरी दूसरों के ध्वंस पर अपने निर्माण का कार्य पूरा करतीहै। राम अगर पहली शक्तिके प्रतीक हैं तो रावण दूसरी शक्ति के। इन दोनों शक्तियों का संघर्ष हर काल में होता रहा है जिसमें पहली

शक्ति विजयी होती है। निराला जी इस संदर्भ में कुछ इसी तरह की बात करते हुए दीखते हैं–

'रावण अशुद्ध होकर भी यदि कर सका त्रस्त,
तो निश्चय तुम हो सिद्ध करोगे उसे ध्वस्त।'

जहाँ तक अन्यायियों पर विजय पाने की बात है, निराला कहते हैं यह कोई साधारण काम नहीं है। जिसने कभी हार नहीं मानी जिसने अधीर होना कभी नहीं सीखा उस आदमी को भी इस संवेदना से गुजरना पड़ा।

बोले रघुमणि –मित्रवर, विजय होगी न समर
यह नहीं रहा नर वानर का राक्षस से रण,
उतरी पा महाशक्ति रावण से आमंत्रण
अन्याय जिधर है उधर शक्ति। 'कहते छल छल
हो गए नयन, कुछ बूँद पुनः ढलके दृगजल।'

मर्यादा पुरूषोत्तम राम का संशयशील होना इस युग को स्थापित करता है कि हर सदाचारी थोड़ी देर के लिए ही क्यों नहीं, अनैतिक आचरण करने वालों से घबड़ाने लगता है। आज रघुकुज के जितने भी मंत्राभिषिक्त वाण थे, वे सारे के सारे युद्ध क्षेत्र में श्रीहत् हो गये। राम का धैर्य हिल उठा। निराला कहते हैं–

'स्थिर राघवेन्द्र को हिला रहा फिर–फिर संशय,
रह–रह उठता जग जीवन में रावण जय–भय
जो नहीं हुआ आज तक हृदय रिपु दम्य श्रांत
एक भी अयुत् लक्ष्य में रहा जो दुराक्रांत
कल लड़ने को हो रहा विकल वह बार–बार
असमर्थ मानता मन उद्धत हो, हार–हार।'

आखिर राम का धैर्य क्यों नहीं हिलता? राम खुद कहते हैं–

देखा है महाशक्ति रावण को लिए अंक
लाँघन को ले जैसे शशांक नभ में अशंक
हत मन्त्रपूत शर संवृत करती बार–बार
निष्फल होते लक्ष्य पर क्षिप्र वार पर वार!
विचलित लख कपिदल क्रुद्ध, युद्ध को मैं ज्यो–ज्यों,
झक–झक झलकती वहिन वामा के दृग त्यों–त्यों,
पश्चात देखने लगी मुझे बँध गए हस्त,
फिर खिंचा न धनु, मुक्त ज्यों बँधा मैं, हुआ त्रस्त।'

राम के दुःख का कारण ही यहीं है कि शक्ति भी शोषक के साथ है। हर जमाने में व्यवस्था में खप पाने का जो गम होता है, वह बड़ा ही असहनीय होता है। ऐसा नहीं कि व्यवस्था से जुड़े हुए लोग अनैतिक ही होते हैं लेकिन यह एक आम धारणा है कि शक्ति मनुष्य को भ्रष्ट बनाती है। ऐसी विकट परिस्थिति में अगर शक्ति का नैतिकता से एक हो जाए तो शक्ति दैवी हो जाती है। राम ने इस दंश को बड़ी शिद्दत के साथ महसूस किया था। प्रकृति

के तमाम उपादान भी नीति का साथ नहीं देते। निराला ने पंचतत्वों का नाम (क्षिति, जल, पावक, गगन, समीर) में से चार तत्व को राम के खिलाफ एवं एक तत्व (पावक) को राम के साथ रखकर इस बात का परिचय दिया है कि मुसीबत अकेले नहीं आती बल्कि चारो तरफ से आती है। सीता का अपहरण, रामेश्वर सेतु का निर्माण, रावण को भीमा का साथ, विजय न होगी समर का भाव, सानू पर्वत पर संशय की वह रात एवं पंचतत्वों का राम के खिलाफ अपनी शक्ति का प्रदर्शन जिसका निराला ने बड़ी सधी हुई दृष्टि से वर्णन किया है–

सत्य चूँकि दर्शन का साध्य होता है। जाहिर है यह दिशा काल एवं क्रिया से निरपेक्ष होता है। सत्य वह नहीं होता जो जीतता हुआ दीखता है, हारते हुए भी जो जीतने का प्रभाव छोड़ता है, सत्य वह भी होता है। हर समय दो सत्य होता है। एक तत्कालीन चेतना का सत्य दूसरा ऐतिहासिक विकास के क्रम में शाश्वतता का सत्य।

'है अमा निशा उगलता गगन घन अँधकार,
खो रहा दिशा का ज्ञान, स्तब्ध है पवन–चार
अप्रतिहत गरज रहा पीछे अम्बुधि विशाल
भूधर ज्यों ध्यान–मग्न; केवल जलती मशाल।''

जाहिर है निराला ने इस सत्य को उद्घाटित करने का प्रयास किया है कि आदमी का प्रारब्ध अगर डूब रहा हो तो हर छोटी बड़ी शक्तियाँ भी सर उठाकर बोलने लगती हैं। सिर्फ अग्नि तत्व को राम के साथ रखकर निराला ने अपनी सधी हुई दृष्टि का परिचय दिया है। अग्नि एक उर्ध्वगामी प्रगतिशील तत्व है जिससे अन्य तत्वों पर विजय प्राप्त करके जागतिक अधियारे को मिटाया जा सकता है।

जहाँ तक सार्वकालिक सत्य की बात है निराला ने इस बात की स्थापना की है कि सत्य दो होता है। एक व्यक्ति का एवं दूसरा समाज का। जब वैयक्तिक सच सामाजिक सच से एकाकार हो जाए तो वह सार्वकालिक सत्य बन जाता है तो वह सार्वकालिक सत्य बन जाता है। मतलब उत्तम पुरुष का सच अन्य पुरुष का सच बन जाए तो इसे सत्य का सर्वव्यापीकरण कहते हैं। नैतिक एवं अनैतिक शक्तियाँ हर समाज हर काल में रही हैं। यह युग का सत्य है लेकिन शक्ति अनैतिक आचरण करने वालों का साथ देती है, यह प्रकारान्तर से सार्वकालिक सत्य है। हालाकि यह स्थायी नहीं होता। शक्ति अंततः अनैतिक आचरण करने वालों के पक्ष में ही चली जाती है। राम कुछ क्षण के लिए हारते हुए जरूर दीखते हैं, लेकिन अंततः इसी सत्य को जीते हैं।

'होगी जय, होगी जय, हे पुरुषोत्तम नवीन।'

युद्ध में विचलित राम को देखकर उनकी सारी सेनाएं परेशान हो उठती हैं। लक्ष्मण बड़ी तेजी से चमकते हैं। हनुमान प्रचंड वेग से आकाश में ऊपर डटकर सागर को मथ देते है विभीषण एवं सुग्रीव रण–नीति तैयार करते हैं, लेकिन राम के बदन में सिहरन तक नहीं होती। राम जानते हैं कि ये सारे उपचार बेकार हैं। लेकिन जैसे ही मल्लपति जाम्बवान एक नूतन नुस्खा पेश करते हैं, सभा खिल उठती है। निराला कहते हैं–

खिल गई सभा, उत्तम निश्चय यह मल्लनाथ,
कह दिया वृद्ध को मान, राम ने झुका माथ।

राम को जैसा लगा कि उन्हें कोई नई शक्ति का उत्स मिल गया हो। जाम्बवान के माध्यम से निराला ने राम की परेशानियों को दूर करने के पीछे दो कारण रखे हैं। पहला यह कि अनुभव का कोई विकल्प नहीं होता और दूसरी परंपरा कभी भी अप्रासंगिक नहीं होती। जाम्बवान शक्ति के शोध का द्वार खोलते हुए कहते है –

'रघुवर विचलित होने का नहीं देखता मैं कारण
हे पुरुष सिंह तुम भी यह शक्ति करो धारण,
आराधना का दृढ़ आराघन से दो उत्तर
तुम करो विजय संघात प्राणों से प्राणों पर
रावण अशुद्ध होकर भी यदि करसका त्रस्त
तो निश्चय तुम हो सिद्ध करोगे उसे ध्वस्त,
शक्ति की करो मौलिक कल्पना, करो पूजन
छोड़ दो समर, जब तक न सिद्ध हो रघुनंदन।

डॉ. रामविलास शर्मा कहते है 'आराधना' और 'दृढ़ आराधन' में सापेक्षता का सिद्धान्त निहित है। कार्ल मार्क्स कहता है कि दुनिया में कुछ भी निरपेक्ष नहीं होता। यहाँ सब कुछ सापेक्ष है। आराधना के बल पर अशुद्ध रावण अगर शक्ति को अपने बस में कर सकता है, तो शुद्ध सदाचारी एवं मर्यादा पुरुषोत्तम राम दृढ़ आराधना करके शक्ति के गहरे स्तर तक उतर सकते हैं। निराला ने शक्ति की मौलिक कल्पना की बात की है। मौलिक कल्पना से तात्पर्य यह है कि शक्ति कोई वाह्य वस्तु नहीं, यह एक आंतरिक प्रक्रिया है। यह दृष्टिगत होने वाली कोई चीज नहीं बल्कि आत्मीय उष्मा का परिणाम है। शक्ति का दूसरा रूप विश्वास है जो आत्म विश्वास से पैदा होता है और विश्वास का आरंभ प्रतिज्ञा से पैदा होता है। शक्ति का शोधन करने के लिए राम पहले दृढ़प्रतिज्ञ होकर माँ का स्वरूप स्थिर करते हैं। इस शोध में 'राम' का स्थान 'कहाँ हो' इसकी चर्चा करते हुए निराला कहते हैं–

मतः दशभुजा विश्व ज्योति; मैं हूँ आश्रित,
हो विद्ध शक्ति से है खल महिषासुर मर्दित,
जन रंजन चरण–कमल–तल, धन्य सिंह गर्जित
यह–यह मेरा प्रतीक मातः समझ इंगित मर्दित
मैं सिंह इसी गाव से करूँगा अभिनंदित

राम के शक्ति ग्रहण करने के क्रम में जो विनम्रता दिखाई है, वह भी प्रशंसनीय है। राम नवरात्र के शारदीय माहौल में पूजा पर बैठ जाते हैं। हर रोज पूजा के अंतिम क्षण में एक कमल चढ़ाकर उस दिन की पूजा की समाप्ति करते हैं। नवें दिन जैसे ही पूजा अब खत्म होने ही वाली है, ध्यानमग्न राम के बगल में चुपके से दुर्गा रात्रि के मध्य प्रहर में आती है और अंतिम कमल चुराकर चली जाती है। निराला कहते हैं–

रह गया एक इंदीवर, मन देखता पार,
प्रायः करने को हुआ दुर्ग जो सहस्रार,
द्विप्रहर रात्रि, साकार हुई दुर्गा छिपकर,
हँस उठा ले गयीं पूजा का प्रिय इन्दीवर।

** ** **

यह अंतिम जप, ध्यान में देखते चरण युगल
राम ने बढ़ाया कर लेने को नील कमल,
कुछ लगा न हाथ, हुआ सहसा स्थिर मन चंचल
ध्यान की भूमि से उतरे, खोले पलक विमल,
देखा, वह रिक्त स्थान, यह जप का पूर्ण समय,
आसन छोड़ना असिद्धि, भर गये नयन द्वय।

राम एक बार पुनः नियती के शिकार होते हैं। इस विकट परिस्थिति में भी मंजिल का न मिलना इस बात का सूचक है कि जीवन इतना आसान नहीं, यह तो संघर्षों का अनवरत सिलसिला है। ऐसा नहीं है कि किसी बिंदु पर आकर संघर्ष खत्म हो जाता है। बल्कि जीवन के सघन क्षणों में भी विश्राम नहीं। तब राम के मुँह से यह दर्द भरा स्वर फूट पड़ता है–

धिक जीवन की जो पाता ही आया विरोध,
धिक् साधन जिसके लिए सदा ही किया शोध।
जानकी हाय, उद्धार प्रिया का हो न सका।
वह एक मन और रहा राम का जो न थका,
जो नहीं जानता दैन्य, नहीं जानता विनय
कर गया भेद वह मायावरण प्राप्त कर जय
बुद्धि के दुर्ग पहुँचा विद्युत–गति हतचेतन
राम की जगी स्मृति, हुए सजग पा भाव प्रमन।

** ** **

'यह है उपाय' कह उठे राम ज्यों मन्द्रित घन
कहती थी माता मुझे सदा राजीव नयन
दो नील कमल हैं शेष अभी यह पुरश्चरण
पूरा करता हूँ देकर मातः एक नयन।''

राम पूरी कविता में दूसरी बार उदास होते हैं। लेकिन दोनों की प्रकृति में बड़ा फर्क है। पहली उदासी का कारण था– 'विजय होगी न समर' और दूसरी उदासी का कारण है 'जानकी! हाय उद्धार प्रिया हो न सका। 'पहली अगर वाह्य है तो दूसरी आंतरिक। पहली का निदान अगर राम ने औरो से पाया है तो दूसरी का खुद ढूंढ़ा है। 'बुद्धि के दुर्ग पहुँचा' से तात्पर्य यह है कि शोध की पूरी प्रक्रिया में राम ने सिर्फ अब तक आस्था से काम लिया था जो कि वैज्ञानिक नहीं था। शक्ति की मौलिक कल्पना में निराला ने इस बात को स्थापित करने की कोशिश की है कि जब तक आस्था और विवेक का समन्वय नहीं होगा शक्ति नहीं प्राप्त की जा सकती। शक्ति की यह मौलिक कल्पना राम की शक्ति पूजा का सार्वकालिक सत्य है। विकट परिस्थिति में माँ का स्मरण आना प्रकारान्तर से इस बात की गवाही है कि अतीत चाहे कितना भी कुरूप क्यों न हो, कभी भी अप्रासंगिक नहीं होता। माँ का यह नुस्खा कि राम के पास अभी भी कमल सदृश दो नयन है जिसमें से एक को अर्पित करके पूजा की पूर्णाहुति की जा सकती

है आस्था में बौद्धिक का समावेश है। भक्ति समर्पण का दूसरा नाम है और समर्पण में विवेचना नहीं होती। राम जैसे ही प्रज्ञाशील होते हैं निराला कहते हैं–

कहकर देखा तूणीर ब्रह्मशर रहा झलक,
ले लिया हस्त लक–लक करता वह वह महाफलक,
ले अस्म वाम कर, दक्षिण कर दक्षिण लोचन
ले अर्पित करने को उद्यत हो गये सुमन
जिस क्षण बँध गया बेधने को दृग दृढ़ निश्चय,
काँपा ब्रह्मांण्ड, हुआ देवी का त्वरित उदय–
साधु–साधु साधक धीर, धर्म धन–धन्य राम
कह दिया भगवती ने राघव का हस्त थाम।
**** ** ****
होगी जय होगी जय हे पुरूषोत्तम नवीन।
कह महा शक्ति राग के वदन में हुई लीन।'

दृढ़ शब्द इस पूरा कविता .....पहली बार 'आराधना का उत्तर दो दृढ़ आराधना से' में निराला ने दृढ़ता का परिचय दिया तो 'जिस क्षण बँध गया बेधने को दृग दृढ़ निश्चय' में रचनाकार ने दूसरी बार आत्म विश्वास का सबूत पेश किया। जाहिर है, दृढ़ता आत्म विश्वास का आधार होती है जो व्यक्ति को शक्ति की मौलिक कल्पना तक ले जाती है।

सारांशतः यह कहा जा सकता है कि 'राम की शक्ति पूजा में निराला ने युग सत्य और सार्वकालिक सत्य की जो बात की है वह कुछ और नहीं बल्कि व्यक्तिगत निर्णय और सामाजिक निर्णय से जुड़ी हुई कोई बात है। युग सत्य तत्कालीन चेतना का सत्य होता है– जबकि सार्वकालिक सत्य की न कोई सीमा होती है न काल की कोई अवधि। यह शास्वत होता है। यह चिरंतन है। शाश्वतता के प्रवाह में निराला ने आस्था एवं विवेक, हार्दिकता एवं बौद्धिकता विश्वास एवं प्रज्ञा तथा अतीत एवं वर्तमान का जो समाहार दिखाया है और जिस समाहार के बाद शक्ति का प्रकटीकरण हुआ है, वह आदिम सच है, सार्वकालिक सत्य है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

1. कुमुद शर्मा : हिन्दी के निर्माता, भारतीय ज्ञानपीठ पुस्तक भण्डार, संस्करण 2006
2. नंकिशोर नवल : निराला रचनावली, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, संस्करण 2009
3. शिवकुमार शर्मा : हिन्दी साहित्य का युग और प्रवृत्तियाँ, अशोक प्रकाशन दिल्ली, संस्करण 2001
4. रामविलास शर्मा : निराला की साहित्य साधना, राजकमल प्रकाशन दिल्ली
5. डॉ. मोहन अवस्थी : हिन्दी साहित्य का अद्यतन इतिहास, सरस्वती प्रेस इलाहाबाद, संस्करण 1983
6. मुकुटधर पाण्डेय : हिन्दी में छायावाद, तिरूपति प्रकाशन हापुड़

इलाहाबाद जनपद के माध्यमिक स्तर के ग्रामीण किशोर एवं किशोरियों की शैक्षिक अभिरूचियों का तुलनात्मक अध्ययन

किरन गुप्ता

शोधछात्रा (शिक्षाशास्त्र)
नेहरू ग्राम भारती डीम्ड टू बी यूनिवर्सिटी,
इलाहाबाद

प्रस्तावना

मानव जीवन में शिक्षा की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण है। जन्म से बालक पशुवत व्यवहार करता रहता है। उसके व्यवहार में सौन्दर्य लाने का कार्य शिक्षा करती है। शिक्षा के द्वारा ही समाज अपनी संस्कृति की रक्षा करता है और सभ्यता के रथ को आगे बढ़ाता है। जीवन की उदारता, उच्चता, सौन्दर्य एवं उत्कृष्टता शिक्षा द्वारा ही सम्भव है। बालक की वैयक्तिक प्रगति उसका शारीरिक, मानसिक एवं भावात्मक विकास तब तक भली प्रकार नहीं हो पाता, जब तक वह शिक्षा न ग्रहण करें।

शिक्षा को सदैव से ही समाज तथा राष्ट्र की प्रगति के एक महत्वपूर्ण तथा शक्तिशाली साधन के रूप में स्वीकार किया जाता है। यही कारण है कि प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक सदैव ही शिक्षा को सामाजिक तथा राष्ट्रीय विकास की दृष्टि से एक सम्मान जनक स्थान दिया जाता रहा है।

शिक्षा को, विभिन्न विद्वानों एवं शिक्षाशास्त्रियों के विचारों को एक क्रम में संयोजित करके, इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है– ''शिक्षा जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त निरन्तर चलने वाली वह सोद्देश्य सामाजिक प्रक्रिया है, जिसके द्वारा व्यक्ति की समस्त जन्मजात एवं अन्तर्निहित शक्तियों का सर्वोत्तम एवं सर्वांगीण विकास करके उसके व्यवहार में अधिकतम सम्भव परिमार्जन किया जाता है। जिससे व्यक्ति अपना जीवन सुख पूर्ण ढंग से व्यतीत करने में समर्थ हो सके।

किशोर एवं किशोरियों के जीवन में शैक्षिक अभिरूचियों का महत्वपूर्ण स्थान और कार्य है, क्योंकि व्यक्ति क्या और कैसे करेगा, यह बहुत कुछ उसकी अभिरूचियों द्वारा ही निर्धारित होता है। रूचियाँ एक प्रकार की सीखी हुई अभिप्रेरणाएँ है। जब एक व्यक्ति अपनी पसन्द के आधार पर कोई कार्य करने को अथवा कोई क्रिया करने को स्वतन्त्र होता है तो वह व्यक्ति इन क्रियाओं को अपनी रूचि के आधार पर चुनता और करता है।

रूचि व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्व की एक महत्वपूर्ण विमा है। शारीरिक गठन, मानसिक योग्यता, स्वभाव, आचार–विचार, बुद्धि, अभिक्षमता, अभिवृत्तियों आदि की तरह से रूचियों में भी व्यक्तिगत भिन्नताएँ पाई जाती है। कोई व्यक्ति प्रशासनिक अधिकारी बनना चाहता है, जबकि कोई डॉक्टर, कोई वकील, कोई अभियन्ता, कोई अध्यापक तथा कोई उद्यमी बनने का इच्छुक

रहता है। किसी छात्र को गणित विषय अच्छा लगता है जबकि किसी छात्र को इतिहास, किसी को हिन्दी, किसी को चित्रकला तथा किसी को विज्ञान विषय अच्छा लगता है। किसी कार्य में रूचि होने पर व्यक्ति उस कार्य को सरलता व शीघ्रता के साथ तथा मनोयोग से करता है एवं उसमें सफलता प्राप्त करता है। इसके विपरीत रूचि के अभाव में व्यक्ति कार्य को ठीक ढंग से व मन लगाकर नहीं कर पाता है, परिणामतः प्रायः उस कार्य में असफल हो जाता है। यही कारण है कि शैक्षिक तथा व्यावसायिक परामर्श व निर्देशन में रूचियों का भी ध्यान रखा जाता है।

शिक्षा के द्वारा ही समाज अपनी संस्कृति की रक्षा करता है और सभ्यता के रथ को आगे बढ़ाता है। जीवन की उदारता, उच्चता, सौन्दर्य एवं उत्कृष्टता शिक्षा द्वारा ही सम्भव है। बालक की वैयक्तिक प्रगति उसका शारीरिक, मानसिक एवं भावात्मक विकास तब तक भली प्रकार नहीं हो पाता, जब तक वह शिक्षा न ग्रहण करें। यही कारण है कि प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक सदैव ही शिक्षा को सामाजिक तथा राष्ट्रीय विकास की दृष्टि से एक सम्मान जनक स्थान दिया जाता रहा है।

रूचि किसी वस्तु, व्यक्ति, तथ्य, प्रतिक्रिया आदि को पसन्द करने तथा उसके प्रति आकर्षित होने की प्रवृत्ति हैं। जब किसी व्यक्ति को कोई वस्तु पसन्द आती है या अपनी ओर आकर्षित करती है तो स्वाभाविक रूप से कहा जा सकता है कि उस व्यक्ति की रूचि उस वस्तु के प्रति है।

अमेरिका के तत्कालीन राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन का कहना था कि मैं जो कुछ हूँ और जो कुछ होने की आशा करता हूँ उसके लिए अपनी माता का कृतज्ञ हूँ। निःसंदेह शिक्षित बालिका देश परिवार और समाज के गौरव को ऊँचा उठाती हैं। अतः पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक सभी दृष्टियों से शिक्षा का विशेष महत्व है। सामाजिक प्रगति में किशोर एवं किशोरियों का विशेष योगदान है तथा सदैव रहेगा। परिवार के सीमित दायरे से बाहर निकलकर किशोर एवं किशोरियाँ ''वसुधैव कुटुम्बकम्'' की भावना से प्रेरित होकर सम्पूर्ण समाज की प्रगति में सहायक होती है। शिक्षित किशोर एवं किशोरियाँ जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सक्रिय होते है तथा परिवार एवं देश की आर्थिक स्थिति सुधारने में सहायक होते है।

आधुनिक वैज्ञानिक युग में विज्ञान ने अनेक रूढ़िवादी विचारों, धार्मिक अन्धविश्वासों एवं प्राचीन परम्पराओं को स्तरहीन सिद्ध कर दिया है, परन्तु अज्ञानता के कूप में पड़े करोड़ों भारतीय अब भी उनसे चिपटे हुए हैं। वे अब भी प्राचीन विचारों एवं विश्वासों का पोषण एवं समर्थन करते हैं फलस्वरूप किशोर एवं किशोरियों की शिक्षा अपने सीमित दायरे से बाहर नहीं निकल पा रही है।

सफल सामाजिक जीवन के लिए किशोर एवं किशोरियों का शिक्षित होना आवश्यक है। आज विज्ञान एवं तकनीकी की प्रगति के दौर में उनका शिक्षित होना अति आवश्यक है नहीं तो विकास की दिशा उनके पिछड़ेपन को और बढ़ा देगी। शिक्षित किशोरी पारिवारिक, सामाजिक एवं आर्थिक मामलों को बेहतर ढंग से निपटा सकती है। शिक्षा बालक के व्यक्तित्व के विकास का उत्तम साधन है। शिक्षा का उद्देश्य बालकों में निहित शक्तियों को प्रकट कर उन्हें सामाजिक सन्दर्भ में पूर्ण रूप से विकसित करना। चूँकि परिवार समाज का लघु रूप है, अतः

शिक्षा का बहुत कुछ उत्तरदायित्व परिवार पर आ जाता है। परिवार इस उत्तरदायित्व का वहन विद्यालय एवं अन्य सामाजिक संस्थाओं के साथ मिलकर संयुक्त रूप से करता है।

समस्या कथन–

''इलाहाबाद जनपद के माध्यमिक स्तर के ग्रामीण किशोर एवं किशोरियों की शैक्षिक अभिरूचियों का तुलनात्मक अध्ययन।''

शोध का उद्देश्य–

प्रस्तुत अध्ययन में निम्नलिखित उद्देश्यों का अध्ययन किया गया है–

1. माध्यमिक स्तर के ग्रामीण किशोर–किशोरियों की कृषि विषय के प्रति शैक्षिक अभिरूचि का अध्ययन करना।
2. माध्यमिक स्तर के ग्रामीण किशोर–किशोरियों की कामर्स विषय के प्रति शैक्षिक अभिरूचि का अध्ययन करना।
3. माध्यमिक स्तर के ग्रामीण किशोर–किशोरियों की फाइन आर्ट विषय के प्रति शैक्षिक अभिरूचि का अध्ययन करना।
4. माध्यमिक स्तर के ग्रामीण किशोर–किशोरियों की गृह विज्ञान विषय के प्रति शैक्षिक अभिरूचि का अध्ययन करना।
5. माध्यमिक स्तर के ग्रामीण किशोर–किशोरियों की मानविकी विषय के प्रति शैक्षिक अभिरूचि का अध्ययन करना।
6. माध्यमिक स्तर के ग्रामीण किशोर–किशोरियों की विज्ञान विषय के प्रति शैक्षिक अभिरूचि का अध्ययन करना।
7. माध्यमिक स्तर के ग्रामीण किशोर–किशोरियों की तकनीकी विषय के प्रति शैक्षिक अभिरूचि का अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पनाएँ

प्रस्तुत अध्ययन की परिकल्पनाएँ निम्नलिखित हैं–

1. माध्यमिक स्तर के ग्रामीण किशोर–किशोरियों की कृषि विषय के प्रति अभिरूचि में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
2. माध्यमिक स्तर के ग्रामीण किशोर–किशोरियों की वाणिज्य विषय के प्रति अभिरूचि में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
3. माध्यमिक स्तर के ग्रामीण किशोर–किशोरियों की फाइन आर्ट विषय के प्रति अभिरूचि में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
4. माध्यमिक स्तर के ग्रामीण किशोर–किशोरियों की गृह विज्ञान विषय के प्रति अभिरूचि में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
5. माध्यमिक स्तर के ग्रामीण किशोर–किशोरियों की मानविकी विषय के प्रति अभिरूचि में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
6. माध्यमिक स्तर के ग्रामीण किशोर–किशोरियों की विज्ञान विषय विषय के प्रति अभिरूचि में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

7. माध्यमिक स्तर के ग्रामीण किशोर–किशोरियों की तकनीकी विषय के प्रति अभिरूचि में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

शोध प्रविधियाँ–

प्रयुक्त शोध अध्ययन में सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन में इलाहाबाद जिले के ग्रामीण क्षेत्रों में स्थित माध्यमिक स्तर में पढ़ने वाली समस्त 60 किशोर एवं 60 किशोरियों को इस अध्ययन हेतु लिया गया है। उपकरण के रूप में एस0पी0 कुलश्रेष्ठ द्वारा निर्मित शैक्षिक रूचि प्रपत्र का प्रयोग किया है। आँकड़ों के विश्लेषण हेतु टी–अनुपात का प्रयोग किया गया है।

प्रदत्तों का विश्लेषण एवं व्याख्या

उद्देश्य–1 माध्यमिक स्तर के ग्रामीण किशोर–किशोरियों की कृषि विषय के प्रति शैक्षिक अभिरूचि का अध्ययन।

तालिका 1

माध्यमिक स्तर के ग्रामीण किशोर–किशोरियों की कृषि विषय के प्रति शैक्षिक अभिरूचि की तुलना

रुचि	समूह	प्रतिदर्शो की संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	मानक त्रुटि	क्रान्तिक मान
कृषि विषय	किशोर	60	6.6	3	0.57	3.95*
	किशोरी	60	4.35	3.3		
वाणिज्य विषय	किशोर	60	6.25	3.35	0.60	2.58*
	किशोरी	60	4.7	3.2		
फाइन आर्ट	किशोर	60	5.9	3.1	0.18	11.38*
	किशोरी	60	7.95	3.3		
गृह विज्ञान	किशोर	60	7.1	3.25	0.57	3.68*
	किशोरी	60	9.2	3.05		
मानविकी विज्ञान	किशोर	60	7.45	3.35	0.62	0.08
	किशोरी	60	7.4	3.65		
विज्ञान विषय	किशोर	60	6.7	3.25	0.18	2.22*
	किशोरी	60	7.1	3.2		
तकनीकी विषय	60	60	5.45	3.1	0.58	1.20
	60	60	4.75	2.8		

.05 स्तर पर सार्थक

तालिका से स्पष्ट माध्यमिक स्तर पर किशोर–किशोरियों के शैक्षिक रूचि की विमा कृषि विषय, वाणिज्य विषय, फाइन, गृह विज्ञान तथा विज्ञान विषय के मध्य क्रान्तिक–मान .05 स्तर से अधिक है अतः दोनों सार्थक अन्तर पाया गया जबकि किशोर–किशोरियों के मानविकी विज्ञान

तथा तकनीकी विषय में रूचि के मध्य क्रान्तिक मान .05 स्तर से कम पाया गया अतः शैक्षिक रूचि में अन्तर नहीं पाया गया।

अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि माध्यमिक स्तर पर किशोर–किशोरियों के शैक्षिक रूचि की विमा कृषि विषय, वाणिज्य विषय, फाइन आर्ट, गृह विज्ञान तथा विज्ञान विषय के मध्य अन्तर है जबकि मानविकी विज्ञान एवं तकनीकी विषय में कोई अन्तर नहीं पाया गया।

निष्कर्ष–

प्रस्तुत अध्ययन में निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुये–

1. माध्यमिक स्तर पर किशोर–किशोरियों के शैक्षिक रूचि की विमा कृषि विषय, वाणिज्य विषय, फाइन आर्ट, गृह विज्ञान तथा विज्ञान विषय के मध्य अन्तर है। किशोरों में कृषि विषय एवं वाणिज्य विषय के मध्यमान उच्च पाये गये जबकि किशोरियों में फाइन, गृह विज्ञाान एवं विज्ञान विषय के मध्यमान उच्च पाये गये।
2. माध्यमिक स्तर पर किशोर–किशोरियों के शैक्षिक रूचि की विमा मानविकी विज्ञान एवं तकनीकी विषय में कोई अन्तर नहीं पाया गया।

संदर्भ ग्रन्थ सूची –

- कुमार, विनोद (2017).यू0पी0 बोर्ड एवं सी0बी0एस0ई0 बोर्ड में अध्ययनरत् विद्यार्थियों की अध्ययन के प्रति रुचि, अभिप्रेरणा एवं शैक्षिक महत्त्वाकांक्षा का तुलनात्मक अध्ययन, लघु शोध प्रबन्ध, राजा हरपाल सिंह महाविद्यालय, सिंगरामऊ, जौनपुर।
- तिवारी, अनूप (2007), ग्रामीण क्षेत्र के इण्टरमीडिएट के छात्रों में व्यावसायिक अभिरूचि का अध्ययन, फैजाबाद : एम0एड0 लघुशोध, अवध विश्वविद्यालय।
- पाण्डेय, अभिषेक (2011). माध्यमिक स्तर के छात्र–छात्राओं की व्यावसायिक अभिरूचि का तुलनात्मक, लघु शोध प्रबन्ध, डॉ0 राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, फैजाबाद
- पुष्पांजलि (2009), स्नातक स्तर के विद्यार्थियों का संवेगात्मक बुद्धि एवं व्यावसायिक अभिरूचियों का तुलनात्मक अध्ययन, फैजाबाद : एम0एड0 लघुशोध, नेहरू ग्राम भारती विश्वविद्यालय।
- भारद्वाज, एकता (2011). ए स्टडी ऑफ ऐकेडमी मोटिवेशन, वोकेशनल च्वाइस एण्ड लर्निंग स्टाइल ऑफ मनार्टी कम्यूनिटी स्टूडेन्ट्स (एस कान्स्टीट्यूशनली डिफाइन्ड). पी.एच–डी. थीसिस, चौधरी चरण सिंह यूनिवर्सिटी, मेरठ (उ0प्र0)

माध्यमिक स्तर के अनुदानित तथा गैर अनुदानित विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन

सुमन कन्नौजिया

शोधछात्रा (शिक्षाशास्त्र)
नेहरू ग्राम भारती डीम्ड टू बी यूनिवर्सिटी,
इलाहाबाद।

मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान का इतिहास अब से लगभग दो सौ वर्षों पुराना है। सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक रूप से मनोविकृति विज्ञान के इतिहास में मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान का प्रतीकात्मक आरम्भ **फ्रांस** के सुप्रसिद्ध मनोचिकित्सक **पिनेल** के 1793 में इस सम्बन्ध में मानवतावादी दृष्टिकोण को अपनाने से देखने में आया। सर्वप्रथम पिनेल ही ऐसे व्यक्ति थे जिन्होंने मानसिक रोगियों (जिन्हें उस काल में पागल व्यक्ति कहा जाता था) की जंजीरों को अपने हाथों से काटकर उनके प्रति सहानुभूति व मानवतावादी व्यवहार करने का अध्ययन किया। पिनेल के पश्चात् यह कार्य **इंग्लैण्ड** के **विलियम ड्यूक (1812)** ने अपने हाथों में ले लिया। इस सम्बन्ध में आगे के इतिहास में **ग्राईसिंगर, क्रेपलिन, मेस्सर, मेमर, शकों, जैनड, फ्रॉयल युंग व ऐडलर** आदि के नाम विशेषतः उल्लेखनीय है। मानसिक स्वास्थ्य शब्द का सर्वप्रथम उपयोग **स्वीटसर** ने सन् 1843ई0 में अपनी पुस्तक **मैन्टल हॉईजीन (Mental Hygiene)** में किया था परन्तु इस शब्द का व्यापक तथा विधिवत वर्णन **बीअर्स** ने अपनी पुस्तक **''ए माइन्ड दैट फाउंड इटसेल्फ'' (A Mind that found itself)** से प्रस्तुत किया मानसिक स्वास्थ्य के सम्बन्ध में मेयर के परामर्श से **उसने नेशनल कमेटी ऑफ मैन्टल हाईजीन** की भी स्थापना की तथा मानसिक स्वास्थ्य के अभियान को गति प्रदान की। इस कमेटी ने प्रथम विश्वयुद्ध (1914–1917) तथा द्वितीय विश्वयुद्ध (1939–44) में भी सैनिकों के लिए अति सराहनीय कार्य किया। आज इसके मानव कल्याण के हित में किये गये कार्यों को देखते हुए मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान के अनेक बड़े–बड़े संगठन बनते जा रहे हैं।

मानव विकास में मन और मस्तिष्क के विकास का महत्त्वपूर्ण स्थान है। मन और मस्तिष्क का स्वस्थ रहकर कार्य करने की क्षमता बनाये रखना ही मानसिक स्वास्थ्य है। मानसिक स्वास्थ्य के अभाव में व्यक्ति के विकास का मार्ग कुण्ठित हो जाता है। वह समाज पर बोझ बन जाता है। मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति वही है जो स्वयं सुखी है। अपने पड़ोसियों से शान्तिपूर्वक रहता है, अपने बच्चों को स्वस्थ नागरिक बनाता है तथा अपनी शक्ति के अनुरूप समाज के हित के लिए भी कुछ करता है। वास्तव में मानसिक रूप से स्वस्थ रहने पर व्यक्ति अपने वातावरण में सामंजस्य स्थापित कर लेता है और

अपने परिवार की तथा अपने समाज की उन्नति के लिए प्रयत्न करता है। अतः वातावरण से सामंजस्य स्थापित रखना मानसिक स्वास्थ्य का प्रमुख लक्षण है। सामंजस्य जितना अधिक होगा व्यक्ति मानसिक रूप से उतना ही अधिक स्वस्थ माना जायेगा। फलस्वरूप व्यक्ति हर नई परिस्थिति को समझकर अपने को उसके अनुकूल बना लेता है अथवा परिस्थिति को ही अपने अनुकूल बना लेता है।

मानव विकास में मन और मस्तिष्क के विकास का महत्त्वपूर्ण स्थान है। मन और मस्तिष्क का स्वस्थ रहकर कार्य करने की क्षमता बनाये रखना ही मानसिक स्वास्थ्य है। मानसिक स्वास्थ्य के अभाव में व्यक्ति के विकास का मार्ग कुण्ठित हो जाता है। वह समाज पर बोझ बन जाता है। मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति वही है जो स्वयं सुखी है। अपने पड़ोसियों से शान्तिपूर्वक रहता है, अपने बच्चों को स्वस्थ नागरिक बनाता है तथा अपनी शक्ति के अनुरूप समाज के हित के लिए भी कुछ करता है।

वह हर परिस्थिति का स्वागत करता है। वह जीवन के प्रति उदार दृष्टिकोण रखता है। व्यक्ति के सर्वांगीण विकास के लिए स्वस्थ शरीर के साथ–साथ स्वस्थ मस्तिष्क का होना अत्यन्त आवश्यक है।

व्यक्ति के मानसिक स्वास्थ्य का जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में उसके समायोजन पर प्रभाव पड़ता है। मानसिक उलझनों से ग्रस्त व्यक्ति प्रायः अपने दैनिक जीवन की विभिन्न परिस्थितियों से उचित समायोजन करने में कठिनाई का अनुभव करते हैं। प्रायः देखा जाता है कि संसार में शारीरिक तथा मानसिक दृष्टि से स्वस्थ व्यक्ति ही उच्च सफलता प्राप्त करते हैं। अतः मानव जीवन में शारीरिक स्वास्थ्य के समान ही मानसिक स्वास्थ्य की ओर ध्यान देना भी अत्यन्त आवश्यक है। आधुनिक मनोविज्ञान तथा चिकित्साशास्त्र ने मानसिक विसंगतियों को पहचानने, उनका कारण खोजने तथा उनको दूर करने के उपायों में काफी हद तक सफलता प्राप्त कर ली है। वर्तमान में मानसिक स्वास्थ्य को शारीरिक स्वास्थ्य से अधिक महत्त्व देने की बात कही जाती है। माना जाने लगा कि शारीरिक अस्वस्थता सम्पूर्ण समाज के लिए परेशानी उत्पन्न करती है। वास्तव में बालकों का सर्वांगीण विकास तभी सम्भव है जब वे शारीरिक तथा मानसिक दोनों ही दृष्टियों से पूर्णरूपेण स्वस्थ हों। शारीरिक स्वास्थ्य मानसिक स्वास्थ्य को तथा मानसिक स्वास्थ्य शारीरिक स्वास्थ्य को परस्पर प्रभावित करते रहते हैं।

विद्यालयों में छात्रों की मानसिक, बौद्धिक, चिन्तन, तर्क कल्पना, भाषा ज्ञान, इत्यादि की शिक्षा मिलती है जिनमें मानव व्यवहार के दर्शन होते हैं। मानव सामाजिक एवं भौतिक परिस्थितियों से प्रभावित होता है जिनके फलस्वरूप उसके क्रियाकलापों में परिवर्तन होता है। मानव उन्हीं क्रियाओं को सफलतापूर्वक सम्पन्न कर सकता है, जो उसकी रूचि, अभिरूचि योग्यता स्वास्थ्य, वातावरण आदि कारकों के अनुरूप हो। कभी–कभी छात्र किसी कार्य को अरूचिपूर्वक या बिना वातावरण से सम्बन्धित हुये करते हैं तो वे सफल नहीं हो पाते हैं जिस छात्र का मानसिक स्वास्थ्य अच्छा रहता है। वह अपने निर्धारित लक्ष्यों को एक निश्चित समय सीमा में ही प्राप्त कर लेता है।

मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान सम्बन्धी क्रिया–कलाप केवल मानसिक चिकित्सकों द्वारा ही नहीं अपितु अध्यापक संरक्षक माता– पिता तथा समाज सुधारक आदि द्वारा किया जा सकता है। सत्य तो यह है कि मानव मनोविज्ञान का ज्ञान तथा उसमें अन्तर्दृष्टि होने पर कोई भी व्यक्ति मानसिक आरोग्य में सहायक हो सकता है। इस तरह मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान का उद्देश्य केवल मानसिक रोगों का उपचार अथवा रोकथाम मात्र न होकर प्रत्येक व्यक्ति में एक ऐसे व्यक्ति का विकास करना है जिसका वातावरण से अच्छी प्रकार सामंजस्य हो जिसके बौद्धिक, भावात्मक और शारीरिक पहलू भली प्रकार सन्तुलित हो, जो सन्तुष्ट और आशावादी हो और जिसका अपने साथियों से व्यवहार करने में कम से कम संघर्ष तथा तनाव का अनुभव हो। अतः मानसिक स्वास्थ्य का उद्देश्य भली प्रकार समायोजन, सुलझा हुआ और सन्तुलित व्यक्तित्व का निर्माण करना है।

समस्या कथन :–

''माध्यमिक स्तर के अनुदानित एवं गैर अनुदानित विद्यालयों में अध्ययनरत् विद्यालयों के विद्यार्थियों का मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन''।

शोध अध्ययन के उद्देश्य :

1. माध्यमिक स्तर के अनुदानित एवं गैर अनुदानित विद्यार्थियों के सकारात्मक आत्म मूल्यांकन का अध्ययन करना।
2. माध्यमिक स्तर के अनुदानित एवं गैर अनुदानित विद्यार्थियों के वास्तविकता के प्रत्यक्षीकरण का अध्ययन करना।
3. माध्यमिक स्तर के अनुदानित एवं गैर अनुदानित विद्यार्थियों के व्यक्तित्व के एकीकरण का अध्ययन करना।
4. माध्यमिक स्तर के अनुदानित एवं गैर अनुदानित विद्यार्थियों के स्वशासन का अध्ययन करना।
5. माध्यमिक स्तर के अनुदानित एवं गैर अनुदानित विद्यार्थियों की समूह परिचयात्मक अभिवृत्ति का अध्ययन करना।
6. माध्यमिक स्तर के अनुदानित एवं गैर अनुदानित विद्यालयों के विद्यार्थियों के पर्यावरणीय समायोजन का अध्ययन करना।

परिकल्पना :

प्रस्तुत अध्ययन के लिए निम्न शून्य परिकल्पना निर्मित की गयी है –

1. माध्यमिक स्तर के अनुदानित एवं गैर अनुदानित विद्यार्थियों के सकारात्मक आत्म मूल्यांकन में कोई अन्तर नहीं है।
2. माध्यमिक स्तर के अनुदानित एवं गैर अनुदानित विद्यार्थियों के वास्तविकता के प्रत्यक्षीकरण में कोई अन्तर नहीं है।

3. माध्यमिक स्तर के अनुदानित एवं गैर अनुदानित विद्यार्थियों के व्यक्तित्व के एकीकरण में कोई अन्तर नहीं है।
4. माध्यमिक स्तर के अनुदानित एवं गैर अनुदानित विद्यार्थियों के स्वशासन में कोई अन्तर नहीं है।
5. माध्यमिक स्तर के अनुदानित एवं गैर अनुदानित विद्यार्थियों की समूह परिचयात्मक अभिवृत्ति में कोई अन्तर नहीं है।
6. माध्यमिक स्तर के अनुदानित एवं गैर अनुदानित विद्यालयों के विद्यार्थियों के पर्यावरणीय समायोजन में कोई अन्तर नहीं है।
7. माध्यमिक स्तर के अनुदानित एवं गैर अनुदानित विद्यालयों के विद्यार्थियों में मानसिक स्वास्थ्य में कोई अन्तर नहीं है।

शोध प्रविधि :

वर्तमान अध्ययन हेतु शोधकर्त्री द्वारा वर्णनात्मक सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है। न्यादर्श के रूप में यादृच्छिक न्यायदर्श विधि के माध्यम से अनुदानित एवं गैर अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों के 50–50 विद्यार्थियों अर्थात् कुल 100 विद्यार्थियों का चयन किया गया है। उपकरण के रूप में डॉ. जगदीश, मनोविज्ञान विभाग, आर.बी.एस. कालेज, आगरा एवं डॉ. ए.के. श्रीवास्तव, मनोविज्ञान विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी के द्वारा 1983 में निर्मित किया गया है। आँकड़ों के विश्लेषण के लिए टी–अनुपात सांख्यिकीय विधि का प्रयोग किया गया है।

आँकड़ों का संकलन, विश्लेषण एवं व्याख्या :

तालिका 4.3.1

मानसिक स्वास्थ्य का प्रथम क्षेत्र सकारात्मक आत्म मूल्यांकन के मध्यमान एवं टी–मान

क्र.सं.	समूह	मध्यमान (M)	मानक विचलन (SD)	D	σ_D	टी–मान
1.	अनुदानित विद्यार्थी (N=50)	31.72	2.80	0.12	0.56	0.214 (असार्थक)
2.	गैर अनुदानित विद्यार्थी (N=50)	31.84	2.79			

तालिका 1 के अवलोकन से यह ज्ञात होता है दोनों समूहों के मध्यमानों का अन्तर के टी–अनुपात का मान 0.214 है जो कि 0.05 स्तर पर स्वतंत्र्यांश (df) 98 के तालिका मान 1.98 से कम है। अतः हमारी पहली शून्य परिकल्पना ''अनुदानित तथा गैर अनुदानित विद्यालयों के विद्यार्थियों की सकारात्मक आत्म–मूल्यांकन में कोई अन्तर नहीं होता है'' स्वीकृत हुई। इस प्रकार हम कह सकते है कि अनुदानित तथा गैर अनुदानित विद्यालयों के विद्यार्थियों की सकारात्मक आत्म–मूल्यांकन में कोई अन्तर नहीं होता है।

तालिका 2

मानसिक स्वास्थ्य के द्वितीय क्षेत्र वास्तविकता का प्रत्यक्षीकरण के मध्यमान एवं टी–मान

क्र.सं.	समूह	मध्यमान (M)	मानक विचलन (SD)	D	σ_D	टी–मान

1.	अनुदानित विद्यार्थी (N=50)	22.74	2.20	0.04	0.498	0.08 (असार्थक)
2.	गैर अनुदानित विद्यार्थी (N=50)	22.78	2.79			

तालिका 4.3.2 के अवलोकन से यह ज्ञात होता है दोनों समूहों के मध्यमानों के अन्तर का टी–अनुपात का मान 0.08 है जो कि 0.05 स्तर पर स्वतंत्र्यांश (df) 98 के तालिका मान 1.98 से कम है। अतः हमारी दूसरी शून्य परिकल्पना ''अनुदानित तथा गैर अनुदानित विद्यालयों के विद्यार्थियों की वास्तविकता का प्रत्यक्षीकरण में कोई अन्तर नहीं होता है'' स्वीकृत होती है। इस प्रकार हम कह सकते है कि अनुदानित तथा गैर अनुदानित विद्यालयों के माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की वास्तविकता का प्रत्यक्षीकरण में कोई अन्तर नहीं होता है।

तालिका 3

मानसिक स्वास्थ्य के तृतीय क्षेत्र व्यक्तित्व का एकीकरण के मध्यमान एवं टी–मान

क्र.सं.	समूह	मध्यमान (M)	मानक विचलन (SD)	D	σ_D	टी–मान
1.	अनुदानित विद्यार्थी (N=50)	32.06	2.94	0.62	0.565	1.08 (असार्थक)
2.	गैर अनुदानित विद्यार्थी (N=50)	31.44	2.70			

तालिका 3 के अवलोकन से यह ज्ञात होता है दोनों समूहों के मध्यमानों के अन्तर का टी–अनुपात का मान 1.08 है जो कि 0.05 स्तर पर स्वतंत्र्यांश (df) 98 के तालिका मान 1.98 से कम है। अतः हमारी तीसरी शून्य परिकल्पना ''अनुदानित तथा गैर अनुदानित विद्यालयों के विद्यार्थियों की व्यक्तित्व का एकीकरण में कोई अन्तर नहीं होता है'' स्वीकृत होती है। इस प्रकार प्राप्त प्रदत्तों के आधार पर हम कह सकते है कि अनुदानित तथा गैर अनुदानित विद्यालयों के विद्यार्थियों की व्यक्तित्व का एकीकरण में कोई अन्तर नहीं होता है।

तालिका 4

मानसिक स्वास्थ्य का चतुर्थ क्षेत्र स्वशासन मूल्यांकन के मध्यमान एवं टी–मान

क्र.सं.	समूह	मध्यमान (M)	मानक विचलन (SD)	D	σD SED	टी–मान
1.	अनुदानित विद्यार्थी (N=50)	15.96	1.96	0.08	0.306	0.26 (असार्थक)
2.	गैर अनुदानित विद्यार्थी (N=50)	15.88	1.10			

तालिका 4 के अवलोकन से यह ज्ञात होता है दोनों समूहों के मध्यमानों के अन्तर का टी–अनुपात का मान 0.26 है जो कि 0.05 स्तर पर स्वतंत्र्यांश (df) 98 के तालिका मान 1.98 से कम है। अतः हमारी चौथी शून्य परिकल्पना ''अनुदानित तथा गैर अनुदानित विद्यालयों के विद्यार्थियों के स्वशासन मूल्यांकन में कोई अन्तर नहीं होता है'' स्वीकृत होती है। इस प्रकार प्राप्त प्रदत्तों के आधार पर हम कह सकते है कि अनुदानित तथा गैर अनुदानित विद्यालयों के माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की स्वशासन मूल्यांकन में कोई अन्तर नहीं होता है।

तालिका 5

मानसिक स्वास्थ्य के पंचम क्षेत्र सामूहिक गतिविधियों में भागीदारी के मध्यमान एवं टी–मान

क्र.सं.	समूह	मध्यमान (M)	मानक विचलन (SD)	D	σ_D	टी–मान
1.	अनुदानित विद्यार्थी (N=50)	29.38	2.96	1.62	0. 542	2.98 (सार्थक)
2.	गैर अनुदानित विद्यार्थी (N=50)	27.76	2.46			

तालिका 5 के अवलोकन से यह ज्ञात होता है दोनों समूहों के मध्यमानों के अन्तर का टी–अनुपात का मान 2.98 है जो कि 0.05 स्तर पर स्वतंत्र्यांश (df) 98 के तालिका मान 1.98 से अधिक है। अतः हमारी पाँचवीं शून्य परिकल्पना ''अनुदानित तथा गैर अनुदानित विद्यालयों के विद्यार्थियों की सामूहिक गतिविधियों में भागीदारियों में कोई अन्तर नहीं होता है'' अस्वीकृत होती है। इस प्रकार प्राप्त प्रदत्तों के आधार पर हम कह सकते है कि अनुदानित तथा गैर अनुदानित विद्यालयों के माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की सामूहिक गतिविधियों में भागीदारियों में सार्थक अन्तर पाया जाता है।

तालिका 6

मानसिक स्वास्थ्य का छठवां क्षेत्र वातावरणीय समायोजन के मध्यमान एवं टी–मान

क्र.सं.	समूह	मध्यमान (M)	मानक विचलन (SD)	D	σD SED	टी–मान
1.	अनुदानित विद्यार्थी (N=50)	27.74	2.94	0.08	0. 661	0.121 (असार्थक)
2.	गैर अनुदानित विद्यार्थी (N=50)	27.82	3.67			

तालिका 6 के अवलोकन से यह ज्ञात होता है दोनों समूहों के मध्यमानों के अन्तर का टी–अनुपात का मान 0.121 है जो कि 0.05 स्तर पर स्वतंत्र्यांश (df) 98 के तालिका मान 1.98 से कम है। अतः हमारी छठवीं शून्य परिकल्पना ''अनुदानित तथा गैर अनुदानित विद्यालयों के विद्यार्थियों की पर्यावरणीय समायोजन में कोई अन्तर नहीं होता है'' स्वीकृत होती है।

इस प्रकार प्राप्त प्रदत्तों के आधार पर हम कह सकते है कि अनुदानित तथा गैर अनुदानित विद्यालयों के माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की पर्यावरणीय प्रवीणता में कोई अन्तर नहीं होता है।

अध्ययन के निष्कर्ष :

उद्देश्यानुसार बनायी गयी परिकल्पनाओं के परीक्षण हेतु संकलित प्रदत्तों के विश्लेषण व विवेचन के आधार पर सामान्यीकरण करके निम्नलिखित निष्कर्षों की प्राप्ति हुई :–

1. अनुदानित तथा गैर अनुदानित विद्यालयों में अध्ययनरत् माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य का प्रथम क्षेत्र 'सकारात्मक आत्म मूल्यांकन' में कोई अन्तर नहीं है।
2. अनुदानित तथा गैर अनुदानित विद्यालयों में अध्ययनरत् माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य का द्वितीय क्षेत्र 'वास्तविकता का प्रत्यक्षीकरण' में कोई अन्तर नहीं है।
3. अनुदानित तथा गैर अनुदानित विद्यालयों में अध्ययनरत् माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य का तृतीय क्षेत्र 'व्यक्तित्व के एकीकरण' में कोई अन्तर नहीं है।
4. अनुदानित तथा गैर अनुदानित विद्यालयों में अध्ययनरत् माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य का चतुर्थ क्षेत्र 'स्वशासन मूल्यांकन' में कोई सार्थक नहीं है।
5. अनुदानित तथा गैर अनुदानित विद्यालयों में अध्ययनरत् माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य का पंचम क्षेत्र 'समूह परिचयात्मक अभिवृत्ति' में सार्थक अन्तर है।
6. अनुदानित तथा गैर अनुदानित विद्यालयों में अध्ययनरत् माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य का छठे क्षेत्र 'वातावरणीय समायोजन' में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि अनुदानित एवं गैर अनुदानित विद्यालयों में अध्ययनरत् माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य की विमा सकारात्मक आत्म मूल्य, वास्तविकता का प्रत्यक्षीकरण, व्यक्तित्व के एकीकरण, स्वशासन मूल्यांकन, वातावरणीय समायोजन में कोई अन्तर नहीं है जबकि अनुदानित विद्यालयों में अध्ययनरत् माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों में समूह परिचयात्मक अभिवृत्ति गैर अनुदानित विद्यालयों की अपेक्षा अधिक पायी गयी।

संदर्भ ग्रन्थ सूची –

1. **गुप्ता, एस.पी. तथा गुप्ता, अलका (2007),** *सांख्यिकीय विधियाँ,* इलाहाबाद : शारदा पुस्तक भवन।

2. **चन्द्रा अनिता एण्ड मिनकोविट्ज, सी.एस. (2007),** *फैक्टर दैट इन्फ्लूऐन्स मेन्टल हेल्थ स्टिगमा एमांग ऐर्थ ग्रेड एडोलेसेन्ट,* जर्नल ऑफ यूथ एण्ड एडोलेसेन्ट वाल्यूम–36, एन–6, पृष्ठ सं0 763–774, अगस्त, 2007, इरिक, ईडी जीवोवी।
3. **द्विवेदी, विमल (1998),** *लाइफ सैटिस्फैक्शन एण्ड मेण्टल हेल्थ ऐज रिलेटेड टू ऐजिंग इन मेल एण्ड फीमेल पर्सन,* पी.एच–डी, कानपुरः सी.एस.जे.एम. यूनिवर्सिटी, कानपुर।
4. **पी. वीरेश्वर (1979),** *ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों की विद्यालय जाने वाली छात्राओं की समायोजन समस्याओं एवं मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन,* पी–एच.डी., मेरठ विश्वविद्यालय।
5. **सर्वेयर, एम.जी. मिलर, लेविस (2003),** *द मेन्टल हेल्थ ऑफ 13–17 इयर ओल्ड एन आस्ट्रेलिया फाइन्डिंग फ्राम द नेशनल सर्वे ऑफ मेन्टल हेल्थ एण्ड वेलवीइंग,* डब्ल्यू. डब्ल्यू. इरिक. इडी, जीवोवी।
6. **स्टीनर, हंस (2007),** *रिलेशनशिप बिट्विन डिफेसेंस, पर्सनालिटी एण्ड अफेक्ट ड्यूरिंग अ स्ट्रेराफुल टास्क इन नार्मल एडोलसंट्स, चाइल्ड साइकोलॉजी एण्ड ह्यूमन डेवलपमेन्ट,* अंक 21 सं. 2, पृ0 240–243, ई.आर.आई.सी वब पोर्टल।
7. **सिंह, अरुण कुमार (2012),** *मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ,* पटनाः मोतीलाल बनारसीदास।

पाकिस्तान में सेना की भूमिका

डॉ0 चन्द्रेश पाण्डेय

रक्षा एवं स्त्रातेजिक अध्ययन विभाग
ईश्वर शरण डिग्री कालेज,
इलाहाबाद

स्वतंत्रता के पश्चात एवं वर्तमान में पाकिस्तान के प्रमुख आधार के रूप में सेना बनी हुई है तथा एक बात सत्य है कि पाकिस्तान के समस्त मामलों में सेना का हस्ताक्षेप काफी हद तक रहता है। पाकिस्ताान में जनरल जिया का सबसे लम्बा शासनकाल रहा। (जुलाई 1977 से अगस्त 1988 तक) इस अवधि में काफी बड़ी संख्या में सैनिक अधिकारियों को शासन की व्यवस्था में लगाया गया, ताकि सैनिक शासन के हित की रक्षा हो सके। राष्ट्रीय सुरक्षा की नीति को सीधे सेना के नियंत्रण में दे दी गयी। जनरल जिया की सोच थी कि मजहब के आधार पर बने पाकिस्तान की सेना इस्लाम की सेना है, और इसका प्रथम कर्तव्य देश को आन्तरिक एवं बाह्य सुरक्षा प्रदान करना है। सैनिक शासकों ने इस धारणा को संवैधानिक स्तर देना चाहा ताकि संकट काल में सेना वैध ढंग से महत्वपूर्ण निर्णयों में हस्तक्षेप कर सके, अधिक से अधिक सैनिक अधिकारियों को गैर सैनिक पदों पर पदस्थापित किया गया, भूमि एवं गृह निर्माण के भूखण्ड वितरण के कार्य को सेना के जिम्मे दिया गया, ताकि लोगों मे यह विश्वास जगे कि सेना सबकी भलाई के लिए कार्यरत है, सरकारी एवं स्वायत्त संस्थाओं के कार्य में सैनिक अधिकारियों को लगाया गया ताकि सेना की अधिक से अधिक पहुंच नागरिकों के हर क्षेत्र में हो सके।

सेना का पूर्ण नियंत्रण बड़े व्यापारिक एवं औद्योगिक क्षेत्र में है, पाकिस्तान में आज सबसे बड़ा औद्योगिक ग्रुप 'आर्मी–फौजी फाउण्डेशन' है, इसके द्वारा स्कूल, कॉलेज, अस्पताल तथा बड़ी–बड़ी कम्पनियाँ चलाई जा रही हैं, आर्मी वेलफेयर सेण्टर द्वारा चीनी, ऊनी मिलें, सीमेण्ट प्लाण्ट, पेट्रोकेमिकल, दवा, बिजली, कृशि एवं आर्थिक क्षेत्र के संस्थान, जीवन बीमा एवं संख्या में छोटे–छोटे व्यापार चलाये जा रहे हैं। एयरफोर्स और नौसेना की अपनी अलग संस्थाएं हैं जिसने अलग से व्यापार में पैठ बना ली है। इसके अलावा सेना प्रमुख के अधीन सेवा क्षेत्र के कई ग्रुप जैसे टेलीकम्यूनिकेषन, बार्डर रोड़, सीमा क्षेत्र के काम हैं। सेना के पर्यवेक्षक असैनिक क्षेत्र की इकाईयों के काम का देख–रेख करता है।

तानाशाही सैनिक सत्ता ने राजनीतिज्ञों द्वारा सभी प्रकार की चुनौतियों का सामना करने के लिए हल निकाल लिया है, उन्होंने नागरिक प्रशासन चलने के लिए सेना से लोगों को लिया है, कर्नल या मेजर को म्यूनिसिपल कमिश्नर बनाया गया। उदाहरण के तौर पर, याहया खान ने प्रशासन चलाने के लिए मुख्य रूप से सेना पर ही विश्वास किया, इसने रक्षा एवं विदेश का कार्य अपने जिम्मे रखा।

जिया–उल–हक के लम्बे सैनिक शासन के बाद की चुनी हुई सरकारों के लिए भी स्पष्ट कर दिया कि उन्हें सेना को हमेशा अपने बगल में ही रखना होगा। इस प्रक्रिया में उसने सेना को छूट दी, तथा सेना से सम्बन्धित विषय, जैसे रक्षा बजट को लागू तो नागरिक सरकार करेगी। किन्तु उसका अन्तिम निर्णय सेना का ही होगा। इसी का नतीजा यह हुआ है कि गिरती आर्थिक स्थिति के बावजूद जिया के बाद भी सभी अन्य सरकारों द्वारा रक्षा बजट में बढ़ोत्तरी की जाती रही है।

पाकिस्तान में आज सबसे बड़ा औद्योगिक ग्रुप 'आर्मी–फौजी फाउण्डेशन' है, इसके द्वारा स्कूल, कॉलेज, अस्पताल तथा बड़ी–बड़ी कम्पनियाँ चलाई जा रही हैं, आर्मी वेलफेयर सेण्टर द्वारा चीनी, ऊनी मिलें, सीमेण्ट प्लाण्ट, पेट्रोकेमिकल, दवा, बिजली, कृशि एवं आर्थिक क्षेत्र के संस्थान, जीवन बीमा एवं संख्या में छोटे–छोटे व्यापार चलाये जा रहे हैं। एयरफोर्स और नौसेना की अपनी अलग संस्थाएं हैं जिसने अलग से व्यापार में पैठ बना ली है।

समय–समय पर पाकिस्तान के राजनैतिक इतिहास में घटी कुछ घटनाएं स्पष्ट कर देती हैं कि वहां की राजनीति में सेना का कैसा अधिपत्य है, ऐसा कहीं नहीं देखा गया कि किसी देश का चुना हुआ प्रधानमंत्री भी सेना प्रधान के यहां 'कर्टसी काल' में हो। फरवरी 1997 में भारी मतों से विजयी नवाज शरीफ ने ऐसा किया, वे सेना प्रमुख से मिलने गये, ऐसा करके उन्होंने सत्ता के स्वरूप में सेना के अधिपत्य को स्वीकार ही नहीं किया बल्कि, अपने राजनैतिक प्रतिद्वन्द्वियों को यह भी बताया कि सेना उनके बगल में खड़ी है।

आजादी से अब तक के अन्तराल में पाकिस्तान ऐसे चौराहें पर आ पहुंचा है जहाँ शासन बिना कानून का, प्रजातंत्र बिना जनमत का और प्रभुत्व बिना जनता के दर्दनाक विरोधाभास की स्थिति से गुजर रही है। नेता विहीन पाकिस्तान सक्षम शासक के आभाव में गिरती आर्थिक व्यवस्था के कारण गम्भीर संकट की स्थिति से गुजर रहा है। अगर आज पाकिस्तान निष्पक्ष होकर अपना अन्तरवेक्षण करे तो पायेगा कि सरकारें काफी आयीं पर शासन नहीं के बराबर हुआ, आर्थिक एवं उद्यम के क्षेत्र में सरकारों की पहल नहीं के बराबर हुई, नागरिकों एवं सुविधा विहीन लोगों की सुरक्षा, शिक्षा तथा स्वास्थ्य सेवा जैसे मूल जिम्मेदारियो से राज्य ने अपने को अलग कर लिया, नागरिकों के समक्ष कार्यों में कर पारदर्शिता के आभाव ने सुविधा भोगी एवं शक्तिशाली शासक वर्ग को मजबूती प्रदान किया है।

6 लाख सैनिकों से ज्यादा के साथ पाकिस्ताान के पास विश्व की सातवीं सबसे बड़ी सेना है और इसके पास परमाणु क्षमता भी है अपने बड़े आकार के बलबूते सेना देश की राजनीति पर नियंत्रण रखनें में कामयाब रही है। पिछले कुछ सालों में सेना की दखलदांजी नागरिक अधिकार क्षेत्र में भी बढ़ी है और सरकार व सार्वजनिक निगमों के कई महत्वपूर्ण पदों पर सैन्य अधिकारी अभी भी कार्यरत है, यह देश की सबसे बड़ी औद्योगिक बैंकिंग व भूस्वामी हस्तियों में से एक के तौर पर उभरी है।

देश के सालाना बजट का करीब एक चौथाई हिस्सा अपने नाम करने वाली सेना के इतने बड़े आकार के लिए भारत से मिलने वाले खतरे को कारण बताया जाता है। लेकिन हालिया वर्षों में पाक सरकार सेना पर होने वाले खर्च में कटौती करने व स्वास्थ्य और शिक्षा

की ओर संसाधनों को लगाने के लिए जनता का दबाव बढ़ा है, सेना की देश की राजनीति में भूमिका की भी कड़ी आलोचना की जाने लगी है।

नवाज शरीफ के शासन काल में जब कारगिल में पाकिस्तान की सेना ने घुसपैठ की, उस समय भारतीय सेना द्वारा लम्बे चले संघर्ष में पाकिस्तान की सेना व मुजाहिद्दीन को वापस भगाने के उपरान्त यह प्रश्न अवश्यंभावी हो जाता है कि पाकिस्तान की सेना किस हद तक पाकिस्तान व अन्य देशों के संबंधों को प्रभावित कर सकती है, यह एक विचारणीय विषय है, क्योंकि पाकिस्तान सदैव से आतंकियों को समर्थन देता रहा है। वास्तव में कारगिल अभियान पाकिस्तान की सेना का एक छिपा हुआ सैन्य अभियान था, हांलाकि पाकिस्तान की सेना ने ऐसे कई प्रयास पूर्व में भी किये थे, 1 फरवरी, 1990 में बेनजीर भुट्टों के पहले शासन के समय (नवम्बर 1988 से अगस्त 1990) पेटांगन के अधिकारियों ने बेनजीर भुट्टों के राष्ट्रीय सुरक्षा और विदेशी मामलों के सलाहकार इकबाल अयूब के ऊपर इशारा करते हुए कहा था कि आसूचना संस्थाएं या सेना काश्मीर में प्रधानमंत्री के पीछे एक गुप्त अभियान कर रही है।[1] पाकिस्ताान में सर्वोच्च शक्ति सदैव से सेना ही रही है, इसी कारण से लोकतंत्र एवं सेना के बीच सदैव टकराव देखा जा रहा है, खाडी युद्ध में एवं अन्य संकटों के करण ऐसा भी समय आया जब राष्ट्रपति गुलाम ईशाक खान ने चीफ आफ जनरल स्टाफ की तैनाती कर डाली, सैन्य संकेतों के अनुसार गुलाम ईशाक ने संवैधानिक अधिकारों का प्रयोग करके 18 अप्रैल, 1993 को नवाज शरीफ की सरकार को बर्खास्त कर दिया।

1997 में नवाज शरीफ बहुमत की सरकार के साथ सत्ता में वापस लौटे एवं जनरल जहाँगीर करामत ने 7 अक्टूबर 1998 को अपनी सेवानिवृत्ति के तीन महीने पहले इस्तीफा दे दिया एवं परवेज मुशर्रफ को चीफ आफ आर्मी स्टाफ बनाया गया व इस बात की अनदेखी कर दी गयी कि ये लेफ्निेंट जनरल अलीकुली खान से कनिष्ठ है, नवाज शरीफ ने वही गलती दोहराई जो भुट्टों ने किया था। वास्तव में निःसन्देह नवाज शरीफ अपनी गृह व विदेश नीति से काफी चर्चित हस्ती हो चुके थे, उनकी व वाजपेयी की बस कूटनीति दोनों देशों के मध्य तनाव शैथिल्य का काम किया था, इस यात्रा के बाद लाहौर घोषणापत्र दक्षिण एशिया की दो परमाणु संघर्ष से दोनों देशों का संबंध फिर से निम्नतर स्तर पहुॅच गये, परमाणु युद्ध का खतरा भी उत्पन्न हो गया था, कहा तो ये भी जाता है कि अपने उस शासन काल में नवाज शरीफ ने सेना की अनदेखी करना प्रारम्भ कर दिया था, जबकि यह तथ्य भूल गये थे, कि बिजली, पानी जैसे कई नागरिक संस्थाओं पर सेना का कब्जा था, तथा शरीफ के परिवार के ऊपर भ्रष्टाचार के कई मामले थे ।

परमाणु परीक्षण के बाद उस राजनीतिक कमाण्ड के तौर पर प्रधानमंत्री को जिम्मेदार माना गया ,जबकि सेना के पास इसको कार्यान्वित करने का अधिकार था, वास्तविकता ये थी कि कारगिल संघर्ष के दौरान जब नवाज शरीफ बिल क्लिंटन के पास अपनी मांगों को लेकर गये थे, जिसमें वो अमेरिका द्वारा कारगिल मुद्दे पद मध्यस्थता चाहते थे, जबकि अटल बिहारी बाजपेयी जी के दृढ़ता के कारण बिल क्लिंटन ने सेना वापस बुलाने का वादा करना पड़ा। जब अक्टूबर 1999 में नवाज शरीफ श्रीलंका से अपनी अधिकारिक वार्ता करके वापस लौट रहे थे, तो सेना ने उनको इस्लामाबाद में नहीं उतरने दिया, और उनको मजबूरी में, क्योंकि उनके

हवाई जहाज का तेल खत्म हो रहा था इसलिए कराची में उतरना पड़ा, ये सारे निर्णय रावलपिण्डी के जनरल हेडक्वार्टर में लिए गये जो इस बात का संकेत था कि अब पाकिस्तान में सैन्य शासन काल की वापसी हो रही है ।

प्रश्न यह उठता है कि क्यों पाकिस्तान की सेना विदेशनीति पर हावी है, इसका उत्तर ये है कि इस क्षेत्र की भू–राजनीतिक स्थिति एवं शक्तिशाली पड़ोसी भारत के कारण असुरक्षा की भावना तथा इसके साथ ही साथ पाकिस्तान विश्व की सबसे बड़ी चार सेनाओं में से तीन सेनाओं के बीच घिरा है।

पाकिस्तान के संविधान के अनुच्छेद 243 में वर्णित है कि संध सरकार सेना के ऊपर नियन्त्रण एवं निर्देशन स्थापित करेगी, राष्ट्रपति सेना का सर्वोच्च कमाण्डर होगा, राष्ट्रपति (प्रधानमंत्री के सलाह पर) अध्यक्ष ज्वाइंट चीफ आफ स्टाफ कमेटी तीनों सेनाध्यक्ष की नियुक्ति करेगा, और सेना का या सशस्त्र बलों का प्रत्येक व्यक्ति ये शपथ लेता है कि वह राजनीति में शामिल नहीं होगा।

1971 में बांग्लादेश के जन्म के बाद पाकिस्तान के अन्दर ये भावना घर कर गयी थी, कि भारत इसे बर्बाद कर देगा, जबकि वास्तविकता यह है कि सेना पाकिस्तान पर आरम्भ से ही बोझ बनी हुई थी 1947–50 तक पूरे पाकिस्तान के बजट का 70 प्रतिशत सेना पर खर्च होता था,[2] जिससे पाकिस्तान में सैन्य संस्थाएं तो मजबूत होती गयी व नागरिक संस्थाओं में उत्तरोत्तर गिरावट आती गयी। इसके साथ ही पाकिस्तानी सेना में पंजाबियों के बढ़ते प्रभाव के कारण सेना का पंजाबीकरण हुआ, जिससे धीरे–धीरे पूरे पाकिस्तान का भी पंजाबीकरण होता चला गया। पाकिस्तान के उथल–पुथल का मुख्य कारण है, कि पाकिस्तान की सेना आन्तरिक व वाह्य मामलों में पूर्णतया सम्मिलित थी, 1947 में हुआ विभाजन और उसके तुरन्त बाद काश्मीर को लेकर हुए युद्ध से पाकिंस्तान की सेना को जनता के सामने अपनी भूमिका को साबित करने का मौका मिल गया। लियाकत अली खान ने 8 अक्टूबर 1948 में देश को सम्बोधित करते हुए कहा था कि **''राष्ट्र की रक्षा हमारा मुख्य उद्देश्य है''।**

अय्यूब काल में सेना या पाकिस्तान की सेना ने विदेश नीति को प्रभावित किया जिसको हम दो भागों में बांट सकते है, प्रथम– विदेश नीति के लक्ष्य को आकार देने में। द्वितीय– विदेश नीति के उद्देश्य को प्राप्त करने में क्या प्रयास किया ?

सेना का विदेश नीति में शामिल होने का मुख्य कारण यह था, कि इन्हे यह लगता था कि यही एक ऐसी संस्था है, जो अपने कार्यों को सही तरह से अंजाम दे सकती है, और यही देश के आन्तरिक एवं वाह्य खतरों से निपटने के लिए जिम्मेदार है। पाकिस्तान में सेना को अब थोड़ा बहुत राजनीतिक समर्थन भी मिलने लगा था जिसका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण यह है कि अयूब के शासन काल के दौरान भारत के खिलाफ **'आपरेशन जिब्राल्टर'** चलाया गया था, तो उसको जुल्फीकार अली भुट्टों के द्वारा बढ़ावा दिया गया था जबकि इसकी वैचारिक स्तर पर योजना बनाने वाले पाकिस्तानी सेना के 12 डिवीजन के कमाण्डर जनरल अख्तर मलिक थे, इसका उद्देश्य था जिसमें 5000 उग्रवादियों व विप्लवकारियों को काश्मीर में प्रवेश कराकर कश्मीर को स्वतन्त्र कराना था, जबकि इसके बाद जनरल याहया खान भी पाकिस्तान के

आवाम की आवाज न सुन सके और पाकिस्तान के नेताओं की गलती से बांग्लादेश का जन्म हुआ।

हथियारों कें विक्रय पर लगाये गये प्रतिबन्ध के बाद अमेरिका पाकिस्तान को हथियार सप्लाई करने वाला प्रमुख राष्ट्र बन गया था, इसके अलावा चीन भी एक बड़े हथियार के विक्रेता के रूप में सामने आया जो टैंक, युद्धपोत और लड़ाकू विमान देता था।[3], चीन ने टैंक पुनः निर्माण फैक्ट्री को तक्षशिला और वायुसेना मरम्मत सुविधा केन्द्र कान्दरा में बनाया। अब हालात यहां तक हो गये कि पाकिस्तान अपने प्रत्येक डालर को हथियारों पर खर्च करना चाहता था, और शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास पर ध्यान कम देना शुरू कर दिया था, 1974 में अपने बजट घाटा को नियंत्रित करने के लिए पाकिस्तान ने खाद्य सब्सिडी कम कर दिया, जो एक अप्रिय कदम साबित हुआ।

5 जुलाई, 1977 को एक गुप्त नाम आपरेशन फेयर प्ले से सत्ता में आये जिया–उल–हक के द्वारा सेना की सत्ता में पुनः वापसी हुई। इनके विदेश निति का आधार पुनः सुरक्षा की समस्या थी, जिया ने अपने इस लक्ष्य को पाने के लिए विभिन्न तरीक अपनाए, जो कि अफगानिस्तान नीति में भी दिखाई देता है। एक कूटनीतिज्ञ के शब्दों में जिया ने अफगान युद्ध को अपनी आसूचना एजेंसी के द्वारा चलवाया अपने विदेश मंत्रालय को अपनी इस नीति को जायज करने के लिए स्वतन्त्र कर दिया था।[4]

जिया की सेना अधिक मध्यवर्गीय और अधिक धार्मिक उन्माद से भरी हुई थी, जब जिया–उल–हक पाकिस्तान के राष्ट्रपति बने तो उन्होंने पाकिस्तान में एक अन्तर्राष्ट्रीय इस्लामिक सम्मेलन इस्लामाबाद में करवाया, जिसमें उन्होंने कहा कि मैं आपकों बताउंगा कि मेरे लिए इस्लाम और पाकिस्तान का क्या महत्व है, मेरी माँ का एक सपना, जिसे पाने के लिए संघर्ष किया, वे थकी थी तथा किस तरह से सीमा पार करके एक–एक दिन व्यतीत किया थी।[5] अगर देखा जाय तो जिया–उल–हक द्वारा दिया गया ये भाषण एक भावनात्मक भाषण था, जिया ने जनरल आरिफ को जो पूर्वी पंजाब के थे, को अपनी थल सेना का उपाध्यक्ष बनाया था, जबकि जनरल अख्तर अब्दुल रहमान जो कि जालंधर से आये थे उनको 1984 से 1988 तक आई0 एस0 आई0 के हेड का चार्ज दिया गया था। जबकि **''आपरेशन फेयर प्ले''** को अरैन जो जालंधर के थे तथा लेफिटनेंट जनरल फैज अली चिस्ती के द्वारा अंजाम दिया गया, इस प्रकार यह सिद्ध होता है कि जिया–उल–हक सेनाध्यक्ष या शासक रहें हो लेकिन उनका सदैव साथ **मुहाजिर** अधिकारियों ने दिया था। अगर हम दूसरें शब्दों में कहें तो यह कह सकते हैं कि भारत से गये मुहाजिरों ने पाकिस्तान पर बहुत दिनों तक राज्य किया था। जब पाकिस्तान अफगान संकट में फ्रंटलाइन स्टेट बना तो सोवियत संघ के हस्तक्षेप के एक सप्ताह को 400 मिलियन डालर की आर्थिक व सैनिक सहायता का प्रस्ताव लेकर पाकिस्तान भेजा था परन्तु पाकिस्तान ने शुरूआती नखरे दिखाकर बाद में ये धनराशि स्वीकार कर ली थी।

जनरल जिया–उल–हक इस्लामिक विचार और अपने विचारों को लेकर इतना ज्यादा स्पष्ट थे कि वो अपने को ही सही समझने लगे थे। मई 1982 में उन्होंने घोषणा की कि इस विचारधारा का संरक्षण करना (पाकिस्तान की विचारधारा) और देश का इस्लामिक चरित्र उतना

ही महत्वपूर्ण है जितना कि इस राष्ट्र की भौगोलिक सीमा। इसके पीछे इनकी भावना यह थी कि वे जिन्ना के पीछे का इतिहास और पाकिस्तान का इतिहास पुनः लिखना चाहते थे।

12 अक्टूबर, 1999 को परवेज मुशर्रफ ने नवाज शरीफ की चुनी हुई सरकार को रक्तहीन तख्तापलट के माध्यम से हटा दिया, जिससे एक बार फिर से एक मोहाजिर सेनाध्यक्ष का पाकिस्तान के शासन तन्त्र में कब्जा हो गया, ऐसा उस समय हुआ जब पाकिस्तान एक परमाणु सम्पन्न राष्ट्र बन चुका था और उसकी कारगिल में भारतीय सेना के हाथों पराजय हो चुकी थी।

''पाकिस्तान का सैन्य बल''

पाकिस्तान की सैन्य व्यवस्था को हम छः भागों में बांट सकते है ।

1. पाकिस्तानी सेना
2. पाकिस्तानी नौ सेना
3. पाकिसतानी वायु सेना
4. पाकिस्तान स्त्रातेजिक परमाणु कमाण्ड
5. अर्धसैनिक बल
6. तटरक्षक बल

स्पेशल सर्विस ग्रुप पाकिस्तान की सेना का एक कमाण्डों यूनिट है। जो विशेष अभियान के लिए प्रशिक्षित है। इसका उद्देष्य गुप्त अभियानों को पूर्ण करना होता है, इसी प्रकार स्पेशल सर्विस ग्रुप नौसेना, नौसेना की विशेष प्रशिक्षण प्राप्त कमाण्ड़ों यूनिट है जबकि सर्विस विंग पाकिस्तानी सेना का कमाण्डों दस्ता है।

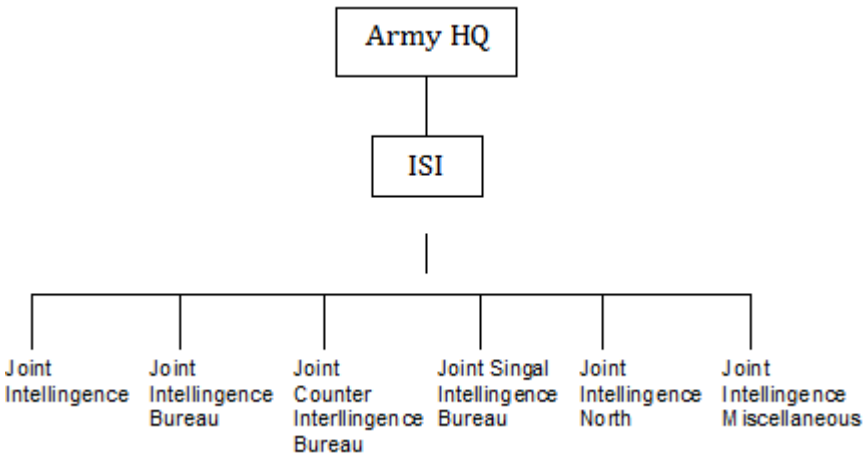

पाकिस्तान के संविधान के अनुच्छेद 243 में वर्णित है कि संध सरकार सेना के ऊपर नियन्त्रण एवं निर्देशन स्थापित करेगी, राष्ट्रपति सेना का सर्वोच्च कमाण्डर होगा, राष्ट्रपति (प्रधानमंत्री के सलाह पर) अध्यक्ष ज्वाइंट चीफ आफ स्टाफ कमेटी तीनों सेनाध्यक्ष की नियुक्ति करेगा, और सेना का या सशस्त्र बलों का प्रत्येक व्यक्ति ये शपथ लेता है कि वह राजनीति में

शामिल नहीं होगा। प्रधानमंत्री संविधान की रक्षा, सम्प्रभुता, स्वतंत्रता, क्षेत्रीय अखण्डता इत्यादि के लिए जिम्मेदार होता है। रक्षामंत्री की नियुक्ति प्रधानमंत्री की सहायता के लिए की जाती है। डिफेंस कमेटी आन कैबिनेट, रक्षा समिति की सर्वोच्च संस्था है, जिसकी अध्यक्षता रक्षामंत्री करता है। ज्वाइंट चीफ आफ स्टाफ कमेटी, तीनों सेनाध्यक्षों और रक्षा सचिव से मिलकर बनती है और यह पद वरिष्ठता क्रम में तीनों सेनाध्यक्षों के बीच घूमता रहता है। तीनों सेनाओं की अपनी आसूचना सेवा होता है लेकिन एक केन्द्रीय सूचना केन्द्र के रूप में आई0 एस0 आई0 को जाना जाता है। जिसका मुख्यालय इस्लामाबाद में है और उसका निदेशक लेफ्टिनेंट जनरल रैंक का अधिकारी होता है।

सशस्त्र बलों का डाक्ट्रिन –

पाकिस्तान का पारम्परिक एवं परमाणु बल संगठन भारत को ध्यान में रखकर बनाया गया है। ये **आंक्रामक रक्षात्मक नीति** पर आधारित है, जो 1989 में बनाया गया जिसका उद्देश्य था कि युद्ध भारत की जमीन पर लड़ा जाय, अधिक से अधिक जमीन पर कब्जा किया जाय जिससे मनमाफिक समझौता किया जाय, जिसके लिए **जर्ब एमोमीन** नामक सैन्य अभियान समझौता चलाया गया, जिसके बाद दृष्टिगोचर होता है कि भारत पाकिस्तान के सैन्य बलों के गुणों में भी अन्तर आया है अब दोनों पक्ष आसूचना के अतिगोपनीय अतिसंवेदनशील उपकरण पाने का प्रयास कर रहे हैं। इसके अलावा परमाणु हथियार और उसको ले जाने में समक्ष प्रक्षेपास्त्रों का निर्माण कर चुके है। पाकिस्तान ने एक नारा दिया है **'लो कास्ट नो कास्ट'** जिसमें परम्परागत और परमाणु खतरे को शामिल करता है। ये नीति उसके पड़ोसी देश के लिए है, इसके अलावा ये विश्व मे विभिन्न देशों विशेषकर अमेरिका से सहायता प्राप्त करने में लगे रहते है, और आतंक का निर्यात करते है। पाक अधिकृत कश्मीर में चल रहे आतंकवादी ट्रेनिंग कैंम्प इनकी सेनाओं के सहायक अंग के रूप में तथा पड़ोसी देशों में अव्यवस्था फैलाने के अवयव के रूप में सामने आये है। अतः हम निर्विवाद रूप से यह कह सकते है कि पाकिस्तान में सेना की भूमिका या सेना का हस्तक्षेप सभी क्षेत्रों में काफी ज्यादा है, इसीलिए पाकिस्तान में सेना तो मजबूत होती चली गई तथा लोकतंत्र और अन्य संस्थाए कमजोर होती गई हैं। पाकिस्तान के संदर्भ में यह एक वास्तविक सत्य है ।

संदर्भ ग्रन्थ सूची –

1- Iqbal Akhand, Trial Error: The Advent and Eclipse of Benazir Bhutto, Karachi Oxford University Press, 2000.P.222.
2- Y.Samad, A Nation in Turmoil, New Delhi: Sage Publication, P.128
3- S.Walpert, Zulfi Bhutto of Pakistan, Orxford University Press, 1993, P.234
4- Iqbal, Akhand ,Trial and Terror, The Advent and Eclipse of Benazir Bhutto, Karachi Oxford university Press ,Page&191
5- K.B. Sayeed ,Pakistan in 1983 , Asian Survey, Vol-24 ,no-2 ,Feb-1984 ,Page - 10.

पुराणों का सृष्टि एवं सांस्कृतिक महत्व

सिन्धू यादव

संस्कृत विभाग
नेहरू ग्राम भारती डीम्ड टू बी यूनिवर्सिटी,
इलाहाबाद

वेद और पुराण हमारे भारतीय संस्कृति के श्रृंगार है। एवम् उसके नवयौवनावस्था के प्रतीक है। भारतीय दर्शन भी अत्यन्त प्रचीनकाल से वेदों एवं पुराणों में पूर्ण विकसित रूप में दिखाई देते है। वस्तुतः भारतीय दर्शनों की समता विश्व का कोई भी दर्शन साहित्य नहीं कर सकता। यह स्पष्ट है कि पाश्चात्य दर्शनों का विकास हमारे देश में मूल रूप से स्थित बेदों, उपनिषदो, आरण्यक एवं ब्राह्मण ग्रन्थों तथा पुराणों से हुआ है। न्याय, सांख्य, वेदान्त अथवा कोई भी दर्शन यहॉ के दर्शन से ही यथावित है। पुराणों में सृष्टि तत्व का जो स्वरूप प्राप्त होता है। वह अन्यत्र दुर्लभ है। पुरूष, प्रकृति महत्वत्व एवं अंहकार तथा इससे होने वाली एकादशेन्द्रियां, पञ्चमहाभूत आदि सृष्टि तत्वों का विवेचन प्रायः सभी पुराणों में समान रूप से प्राप्त होता है। सांख्यकारिका में भी इसका वर्णन है–

प्रकृतेर्महान्स्ततोऽहंकारः तस्माद् गणश्चषाडशकः।
तस्मादापिषोडशकात् पञ्चभूतानि।।

लिंग पुराण में कई स्थानों पर शिव को पुरूष रूप में कहा गया है। जो वेदों में विराट पुरूष के नाम से अबिहित किया जाता है। यह पुरूष अत्यन्त चेतनता से युक्त है। जिससे पूरी सृष्टि–प्रक्रिया होती है। सृष्टि का एक मात्र कारण पुरूष होता है। पुरूष एवं प्रकृति में चेतन और जड़ का भेदभाव है। एक के बिना दूसरा अक्रिय है। एवम् असमर्थ है। कैवल्य के लिए दोनों का संयोग आवश्यक है। वाचस्पति मिश्र ने सांख्यकारिका में लिखा है कि–

''पुरूषस्य दर्शनार्थ कैवल्यार्थ तथा प्रधानस्य।
पऽग्वन्अधवदुभयोरपि संयोगस्तत्कृतः सर्गः।।

वास्तव में पुराण हमारे जीवन के अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं वन्दनीय ग्रन्थ है। ''**इतिहासपुराणाभ्यां वेदं समुपवृंहयेत**'' अर्थात् इतिहास पुराणों द्वारा ही वेदों के शब्द एवं अर्थ व्याख्यायित किया जाता है। वेद जहॉ अपनी कठिनता से दुरूह एवं जटिल बना हुआ है। वहीं पुराण उसकी कठिनता को परिभाषित एवं व्याख्यायित कर मानवों को मोक्ष मार्ग पर चलने के लिए सम्प्रेरित करते है।

पुराण संस्कृत साहित्य के रत्न निर्मित अमूल्य श्रृंगार है। तथा अतीत को वर्तमान के साथ जोड़ने वाली स्वर्णमयी श्रृंखला है। विश्व साहित्य के अक्षय भण्डार में अष्टादश महापुराण अनुपम एवं सर्वश्रेष्ठ अष्टादश रत्न है। हमारे सामाजिक, सांस्कृतिक राजनैतिक धार्मिक और

दार्शनिक जीवन को स्वच्छ दर्पण के समान प्रतिविम्बित करते है। और साथ ही सरल भाषा एवं क्रमबद्ध कथानक शैली के कारण प्राचीन होते हुए भी नवीनतम स्फूर्ति संचारित करते है।

पं0 गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी जी पुराणों की भूरि–भूरि प्रशंसा करते हुए कहा है कि पुराण आर्य जाति के सर्वस्व है। ये आर्य साहित्य के विस्तृत प्रासाद के आधार स्तम्भ है। प्राचीन इतिहास मन्दिर के स्वर्णिम कलश है। विविध विज्ञान रूपी समुद्र में तैरने वाले जहाज के प्रकाश स्तम्भ है। इसे आर्य जातियों का अनादिकाल से संचित विज्ञानों की मंजूषा कही जाये तो अतिशयोक्ति नहीं होगी।

पुराण हमारे जीवन के अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं वन्दनीय ग्रन्थ है। पुराणों द्वारा ही वेदों के शब्द एवं अर्थ व्याख्यायित किया जाता है। वेद जहॉ अपनी कठिनता से दुरूह एवं जटिल बना हुआ है। वहीं पुराण उसकी कठिनता को परिभाषित एवं व्याख्यायित कर मानवों को मोक्ष मार्ग पर चलने के लिए सम्प्रेरित करते है। पुराण अतीत को वर्तमान के साथ जोड़ने वाली स्वर्णमयी श्रृंखला है।

पुराणों का सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रधान एवं प्रथम लक्षण सर्ग है। पुराणों में सृष्टि विषयक विविध प्रकार के कथानकों के साथ सृष्टि प्रक्रिया का विशद् वर्णन प्राप्त होता है। जिसमें प्राकृत सृष्टि, वैकृत सृष्टि एवं उभायात्मक सृष्टि के साथ ही साथ प्रकृति एवं पुरूष से होने वाली सांख्यीय सृष्टि का निरूपण किया गया है। महत्वपूर्ण बात यह है कि सृष्टि में ईश्वरीय योगदान की महत्वपूर्ण भूमिका है। जिसके कारण हम कह सकते है कि पुराणों में सेश्वरसांख्य निरूपित है। पुराण वर्णित सृष्टि प्रक्रिया अत्यन्त जटिल एवं दुरूह हैं। जिसके कारण इस सम्बन्ध में विद्वानों के द्वारा अनेक प्रकार के विचार एवं तर्क वितर्क प्रस्तुत किये जाते है।

पुराणों ने प्रायः भारतीय जन जीवन को बहुत प्रभावित किया है औपचारिक शिक्षा से वंचित जनता में पारम्परिक ज्ञान का वितरण किया है। उसे नैतिक दृष्टि से आदर्शोन्मुख करके भारतीय राष्ट्र के लिए समर्पण भावना में निरत बनाया है। पुराणों का धार्मिक ऐतिहासिक, शैक्षणिक, नैतिक, आदि दृष्टि से इतना महत्व है कि जितना किसी भी साहित्य का नहीं है।

पुराणों ने मनुष्य की क्रियाओं को धार्मिक रूप प्रदान करके उन्हें पाप और पुण्य के रूप में विभाजित किया। यद्यपि यह कार्य वैदिक युग से ही प्रारम्भ हो गया था। फिर भी धर्मसूत्रों में इसकी व्यापक व्यवस्था मिलती है। किन्तु इस व्यवस्था में विश्वास उत्पन्न कराने का कार्य पुराणों ने ही किया था। इसके लिए अनेक रोचक स्थान बने जिनमें पाप कर्म के लिए दण्ड और दुष्कर्म के लिए पुरस्कार के विवरण दिये गये है। इसी प्रसंग में स्वर्ग और नरक का विस्तृत वर्णन कई पुराणों में किया गया है।

तीर्थयात्रा पर पुराणों ने बहुत बल दिया है। ये तीर्थ भारतवर्ष के विभिन्न भागों में अवस्थित हैं। कुछ तीर्थ तो भारत की वर्तमान सीमा के बाहर है। जैसे कैलास पर्वत, मानसरोवर, इत्यादि। सुदूर दक्षिण के निवासी हिमालय और कश्मीर जैसे उत्तरवर्ती क्षेत्रों के तीर्थो की यात्रा अपने जीवन का लक्ष्य मानते है। तो उत्तर के निवासी कुमारी क्षेत्र कन्याकुमारी रामेश्वरम् आदि दक्षिणात्य तीर्थो की यात्रा करना चाहते है। पुराणों में भारतीय समाज की व्यवस्था का न केवल चित्रण है। बल्कि आदर्श समाज बनाने की व्यापक विधियां वर्णित है। वर्णाश्रम के गुण–कर्म

विविध संस्कार, पारिवारिक सम्बन्ध राजधर्म, स्त्रीधर्म गुरू शिष्य के बीच सम्बन्ध इत्यादि के विवरण हमें पुराणों में मिलते है।

कुछ पुराणों में अद्भुत दार्शनिक सामग्री मिलती हैं सृष्टि के क्रम का रोचक वर्णन करते हुए प्रायः सभी पुराण जगत् की उत्पत्ति का दर्शनिक विवेचन करते है। समान्य रूप से सांख्य दर्शन के सृष्टिक्रम को मूल सृष्टि की व्याख्या करने के लिए स्वीकार किया गया है। किन्तु यत्र–तत्र वेदान्त के मायावाद, सर्वेश्वरवाद, आदि की भी चर्चा की गयी है। विष्णुपुराण में विष्णु को ही अत्यन्त व्यक्त और काल भी कहा गया है।

शैव पुराण में परमात्मा को शिव कहकर ये सारी बाते शिव में आरोपित की गयी है। पृथ्वी जब जीवों के निवास के योग्य हो गयी तब ब्रह्म के मानस पुत्रों का आगमन हुआ। इस प्रकार सृष्टि की प्रक्रिया की दार्शनिक व्यवस्था भी पुराणों में मिलती है। भागवत पुराण दर्शन के विविध पक्षों का समन्वय करके भक्ति दर्शन का सर्वो पूर्ण विवेचन करता है। जिससे **''विधावतां भागवते परीक्षा''** की उक्ति प्रचलित है।

पुराणों में यद्यपि सरल परिमार्जित तथा स्वाभाविक संस्कृत भाषा का प्रयोग किया गया है। जो अनेक युगों की जन प्रचलित वांग्धाराओं का प्रतिनिधित्व करती है। कुछ पुराणों में काव्यमयी अभिव्यक्ति भी मिलती है।

कुल मिलाकर हम यह कह सकते है कि पुराण साहित्य भारत वर्ष की ऐसी सम्पत्ति है। जिनका मूल्यांकन करना आज अत्यन्त आवश्यक है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

1. पुराण परिशीलन– पं0 गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी
2. विष्णु पुराण
3. सांख्य कारिका– 21वीं/22वीं
4. महाभारत
5. विष्णुपुराण का भारत, डॉ सर्वानन्द पाठक
6. प्राचीन भारतीय साहित्य–विन्टरनित्स
7. भागवत दर्शन– डॉ0 एस. भट्टाचार्य

परास्नातक स्तर पर विद्यार्थियों के सामाजिक–आर्थिक स्तर का उनके मानसिक स्वास्थ्य के मध्य सम्बन्ध का अध्ययन

रिजवाना बेगम

शोध छात्रा (शिक्षाशास्त्र)
शिक्षक–शिक्षा संकाय
नेहरू ग्राम भारती डीम्ड टू बी यूनिवर्सिटी,
इलाहाबाद।

भूमिका–

मानव प्रकृति की सर्वोत्तम कृति है। नीत्शे का यह कथन उल्लेखनीय है कि मनुष्य ही ऐसा प्राणी है जो हमेशा अपने आप में शर्मिन्दा होता है। वह मौलिक रूप से आदर्शवादी है और सदा आदर्श को प्राप्त करने का प्रयास करता रहता है। वह जितना अपने आस–पास की वस्तुओं से असंतुष्ट रहता है, उतना ही अपने आप से भी, और हमेशा इन दोनों की संवृद्धि में संलग्न रहता है। वही (मनुष्य) केवल ऐसा प्राणी है जिसमें तर्क है, कारण और परिणाम का सम्बन्धीकरण है। उसमें ही केवल यह योग्यता है कि वह अपने आपकी आलोचना कर सकता है। यही कारण है कि मनुष्य अन्य प्राणियों की अपेक्षा अधिक श्रेष्ठ है।

स्वामी विवेकानन्द के अनुसार, ''शिक्षा वही है जिससे चरित्र का निर्माण होता है, मस्तिष्क की शक्ति बढ़ती है, बुद्धि का विकास होता है और मनुष्य अपने पैरों पर खड़ा होता है। इस अर्थ में लिखने पढ़ने का ज्ञान देने के साथ ही शिक्षा व्यक्ति के आचरण विचार और दृष्टिकोण में ऐसा परिवर्तन करती है जो समाज, राष्ट्र तथा सम्पूर्ण मानवता के लिए लाभदायक होती है।''

प्रख्यात विचारक पेस्टालॉजी ने शिक्षा के अभिप्राय को व्यक्त करते हुए लिखा है कि ''शिक्षा बालक की आन्तरिक शक्तियों का स्वभाविक और प्रगतिशील विकास है।'' इस परिभाषा में बालक के व्यक्तित्व के चतुर्दिक एवं संतुलित विकास पर बल दिया गया है।

किसी भी व्यक्ति के सर्वांगीण विकास के लिए स्वस्थ शरीर के साथ–साथ स्वस्थ मस्तिष्क का होना अत्यन्त आवश्यक है। व्यक्ति के मानसिक स्वास्थ्य का जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में उसके समायोजन पर प्रभाव पडता है। मानसिक रूप से व्यक्ति तभी स्वस्थ रहेगा जब उसका शारीरिक स्वास्थ्य अच्छा होगा और शारीरिक स्वास्थ्य तभी अच्छा होगा जब उसका सामाजिक–आर्थिक स्तर अच्छा होगा। अभिभावक से सम्बन्ध अच्छे होने का मतलब उसका खान–पान, वेश–भूषा, रहन–सहन अच्छा होगा।

आज के भौतिकवादी एवं अर्थवादी युग में बदलती सामाजिक व्यवस्था से बदलते हुए मूल्यों से भारत जैसे परम्परागत देश में बालकों को अनेक अनुभवों से गुजरना पड़ता है। अधिकांश लोग (माता–पिता) अपने बच्चों को समझाने में असमर्थ है। माता–पिता की अभिवृत्तियों

में भी परिवर्तन हो रहे है, जिसमें घर तथा विद्यालय में समायोजन करने में बच्चों को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है अर्थात वह ठीक प्रकार से समायोजन नहीं कर पा रहे हैं, जिसके कारण उनमें अनेक प्रकार के लक्षण जैसे मानसिक स्वास्थ्य एवं संवेग सम्बन्धी उत्पन्न हो जाते है जैसे कुण्ठा, शीध्र उत्तेजित हो जाना, नई परिस्थितियों में अपनी विचारधराओं को सुव्यस्थित न कर पाना, अपनी योग्यता पर विश्वास न होना आदि। इन सबका प्रभाव बच्चों की बृद्धि, शैक्षिक उपलब्धि के साथ–साथ मानसिक स्वास्थ्य तथा समायोजन पर यथेष्ट रूप से पड़ता है।

किसी भी व्यक्ति के सर्वांगीण विकास के लिए स्वस्थ शरीर के साथ–साथ स्वस्थ मस्तिष्क का होना अत्यन्त आवश्यक है। व्यक्ति के मानसिक स्वास्थ्य का जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में उसके समायोजन पर प्रभाव पडता है। मानसिक रूप से व्यक्ति तभी स्वस्थ रहेगा जब उसका शारीरिक स्वास्थ्य अच्छा होगा और शारीरिक स्वास्थ्य तभी अच्छा होगा जब उसका सामाजिक–आर्थिक स्तर अच्छा होगा।

बालक के सम्पूर्ण विकास के लिए अच्छा मानसिक स्वास्थ्य होना आवश्यक है। अच्छे मानसिक स्वास्थ्य के अभाव में बालक का विकास अवरूद्ध हो जाता हैं। विभिन्न सामाजिक आर्थिक परिस्थितियों से समायोजन वे बालक ही कर सकते है जो किसी मानसिक रोग के शिकार नही है। इस प्रकार मानसिक रूप से अस्वस्थ्य बालकों के मानसिक एवं भावात्मक विषमताओं के कारण व्यवहार भी अवांछनीय हो जाते है। जिसके परिणाम स्वरूप संस्था एवं समाज में अव्यवस्था आ जाती हैं। संक्षेप में एक सामान्य व्यक्ति में जब किसी का सोचने–विचारने एवं व्यवहार करने का ढंग बहुत भिन्न होता है। तब उसे अवांछनीय समझा जाता है तो ऐसा माना जाता है कि उस व्यक्ति का मानसिक स्वास्थ्य असंतुलित हो गया है। जिस प्रकार मानसिक रूप से अस्वस्थ्य व्यक्ति के कुछ लक्षण होते है ऐसे बालक कठिन एवं तनाव–पूर्ण परिस्थिति में भी अपना सन्तुलन नही खोते, वे सब के साथ अच्छा व्यवहार करते है, वे अपने संवेगों पर अपना नियंत्रण रखते है उनके सोचने का ढंग व्यवहारिक एवं सकारात्मक होता है उनके मस्तिष्क में द्वन्द एवं ग्रन्थियाँ नहीं होती है।

अध्ययन का उद्देश्य–

प्रस्तुत अध्ययन में निम्न उद्देश्यों का अध्ययन किया गया है–

1. परास्नातक स्तर पर अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के सामाजिक–आर्थिक स्तर का उनके मानसिक स्वास्थ्य के मध्य सम्बन्ध का अध्ययन करना।
2. परास्नातक स्तर पर पिछड़ी जाति के विद्यार्थियों के सामाजिक–आर्थिक स्तर का उनके मानसिक स्वास्थ्य के मध्य सम्बन्ध का अध्ययन करना।
3. परास्नातक स्तर पर सामान्य जाति के विद्यार्थियों के सामाजिक–आर्थिक स्तर का उनके मानसिक स्वास्थ्य के मध्य सम्बन्ध का अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पनाएँ–

प्रस्तुत अध्ययन में उद्देश्यों की पूर्ति के लिए निम्न परिकल्पनाओं का परीक्षण किया गया है–

1. परास्नातक स्तर पर अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के सामाजिक–आर्थिक स्तर का उनके मानसिक स्वास्थ्य के मध्य कोई सम्बन्ध नहीं है।
2. परास्नातक स्तर पर पिछड़ी जाति के विद्यार्थियों के सामाजिक–आर्थिक स्तर का उनके मानसिक स्वास्थ्य के मध्य कोई सम्बन्ध नहीं है।
3. परास्नातक स्तर पर सामान्य जाति के विद्यार्थियों के सामाजिक–आर्थिक स्तर का उनके मानसिक स्वास्थ्य के मध्य कोई सम्बन्ध नहीं है।

शोध प्रविधि–

प्रस्तुत अध्ययन में सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है। शोधकर्त्री द्वारा नेहरू ग्राम भारती विश्वविद्यालय, इलाहाबाद में अध्ययनरत् परास्नातक स्तर के 75 विद्यार्थियों का चयन जाति के आधार पर (अनुसूचित जाति, पिछड़ी जाति एवं सामान्य जाति) का यादृच्छिक विधि द्वारा चयन किया गया है। उपकरण के रूप में डॉ. जगदीश, मनोविज्ञान विभाग, आर.बी.एस. कालेज, आगरा एवं डॉ. ए.के. श्रीवास्तव, मनोविज्ञान विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी के द्वारा 1983 में निर्मित मानसिक स्वास्थ्य बैट्री तथा डा0 बीना शाह, शिक्षा संकाय, गढ़वाल विश्वविद्यालय, श्रीनगर (गढ़वाल) द्वारा निर्मित सामाजिक–आर्थिक स्थिति मापनी का प्रयोग किया गया है। प्रदत्तों के सांख्यिकीय विश्लेषण हेतु सहसम्बन्ध गुणांक (कार्ल पियर्सन गुणन आघूर्ण विधि) का प्रयोग किया गया है।

प्रदत्तों का विश्लेषण एवं व्याख्या–

उद्देश्य–1 परास्नातक स्तर पर अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के सामाजिक–आर्थिक स्तर का उनके मानसिक स्वास्थ्य के मध्य सहसम्बन्ध का अध्ययन करना।

H_{01} परास्नातक स्तर पर अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के सामाजिक–आर्थिक स्तर का उनके मानसिक स्वास्थ्य के मध्य कोई सम्बन्ध नहीं है।

सारणी संख्या–1

परास्नातक स्तर पर अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के सामाजिक–आर्थिक स्तर का उनके मानसिक स्वास्थ्य के मध्य सहसम्बन्ध गुणांक

क्रमांक	सहसम्बन्ध गुणांक	स्वतंत्र्यांश (df) (N-2)	सार्थकता स्तर
1.	$r = 0.0389$	23	असार्थक

यह प्राक्कल्पित किया गया था कि परास्नातक स्तर पर अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के सामाजिक–आर्थिक स्तर का उनके मानसिक स्वास्थ्य के मध्य कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है। परास्नातक स्तर के विद्यार्थियों के सामाजिक–आर्थिक स्तर एवं मानसिक स्वास्थ्य के मध्य सहसम्बन्ध गुणांक का मान 0.0389 आया, जो 23 स्वतंत्र्यांश के लिए 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थकता हेतु आवश्यक मान 0.396 से कम है। यह मान 0.05 सार्थकता स्तर पर असार्थक है व शून्य परिकल्पना स्वीकार्य है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि परास्नातक स्तर पर अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के सामाजिक–आर्थिक स्तर का उनके मानसिक स्वास्थ्य के मध्य कोई सहसम्बन्ध नहीं है।

उद्देश्य–2 परास्नातक स्तर पर पिछड़ी जाति के विद्यार्थियों के सामाजिक–आर्थिक स्तर का उनके मानसिक स्वास्थ्य के मध्य सहसम्बन्ध का अध्ययन करना।

H_{02} परास्नातक स्तर पर पिछड़ी जाति के विद्यार्थियों के सामाजिक–आर्थिक स्तर का उनके मानसिक स्वास्थ्य के मध्य कोई सम्बन्ध नहीं है।

सारणी संख्या–2

परास्नातक स्तर पर पिछड़ी जाति के विद्यार्थियों के सामाजिक–आर्थिक स्तर का उनके मानसिक स्वास्थ्य के मध्य सहसम्बन्ध गुणांक

क्रमांक	सहसम्बन्ध गुणांक	स्वतंत्र्यांश (df) (N-2)	सार्थकता स्तर
1.	r = 0.4814	23	सार्थक

यह प्राक्कल्पित किया गया था कि परास्नातक स्तर पर पिछड़ी जाति के विद्यार्थियों के सामाजिक–आर्थिक स्तर का उनके मानसिक स्वास्थ्य के मध्य कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है। परास्नातक स्तर के विद्यार्थियों के सामाजिक–आर्थिक स्तर एवं मानसिक स्वास्थ्य के मध्य सहसम्बन्ध गुणांक का मान 0.4814 आया, जो 23 स्वतंत्र्यांश के लिए 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थकता हेतु आवश्यक मान 0.396 से अधिक है। यह मान 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक है व शून्य परिकल्पना अस्वीकार्य है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि परास्नातक स्तर पर पिछड़ी जाति के विद्यार्थियों के सामाजिक–आर्थिक स्तर का उनके मानसिक स्वास्थ्य के मध्य सार्थक सहसम्बन्ध है।

उद्देश्य–3 परास्नातक स्तर पर सामान्य जाति के विद्यार्थियों के सामाजिक–आर्थिक स्तर का उनके मानसिक स्वास्थ्य के मध्य सहसम्बन्ध का अध्ययन करना।

H_{03} परास्नातक स्तर पर सामान्य जाति के विद्यार्थियों के सामाजिक–आर्थिक स्तर का उनके मानसिक स्वास्थ्य के मध्य कोई सम्बन्ध नहीं है।

सारणी संख्या–3

परास्नातक स्तर पर सामान्य जाति के विद्यार्थियों के सामाजिक–आर्थिक स्तर का उनके मानसिक स्वास्थ्य के मध्य सहसम्बन्ध गुणांक

क्रमांक	सहसम्बन्ध गुणांक	स्वतंत्र्यांश (df) (N-2)	सार्थकता स्तर
1.	r = 0.4395	23	सार्थक

यह प्राक्कल्पित किया गया था कि परास्नातक स्तर पर सामान्य जाति के विद्यार्थियों के सामाजिक–आर्थिक स्तर का उनके मानसिक स्वास्थ्य के मध्य कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है। परास्नातक स्तर के विद्यार्थियों के सामाजिक–आर्थिक स्तर एवं मानसिक स्वास्थ्य के मध्य सहसम्बन्ध गुणांक का मान 0.4395 आया, जो 23 स्वतंत्र्यांश के लिए 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थकता हेतु आवश्यक मान 0.396 से अधिक है। यह मान 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक है व शून्य परिकल्पना अस्वीकार्य है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि परास्नातक स्तर पर

सामान्य जाति के विद्यार्थियों के सामाजिक–आर्थिक स्तर का उनके मानसिक स्वास्थ्य के मध्य सार्थक सहसम्बन्ध है।

अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष–

प्रस्तुत अध्ययन में निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुये–

- परास्नातक स्तर पर अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के सामाजिक–आर्थिक स्तर का उनके मानसिक स्वास्थ्य के मध्य कोई सहसम्बन्ध नहीं है।
- परास्नातक स्तर पर पिछड़ी जाति के विद्यार्थियों के सामाजिक–आर्थिक स्तर का उनके मानसिक स्वास्थ्य के मध्य सार्थक सहसम्बन्ध है।
- परास्नातक स्तर पर सामान्य जाति के विद्यार्थियों के सामाजिक–आर्थिक स्तर का उनके मानसिक स्वास्थ्य के मध्य सार्थक सहसम्बन्ध है।

अतः निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि परास्नातक स्तर के पिछड़ी एवं सामान्य जाति विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य एवं सामाजिक–आर्थिक स्तर के मध्य सार्थक सम्बन्ध पाया गया अर्थात् पिछड़ी एवं सामान्य जाति विद्यार्थियों के सामाजिक–आर्थिक स्तर उच्च होने पर मानसिक स्वास्थ्य उच्च होगा जबकि अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के सामाजिक–आर्थिक स्तर का उनके मानसिक स्वास्थ्य से कोई सम्बन्ध नहीं पाया गया।

संदर्भ ग्रन्थ सूची –

1 **सिंह, सजीव (2008),** +2 स्तर पर छात्रों की बुद्धि एवं समायोजन पर पारिवारिक सम्बन्धों के प्रभाव का अध्ययन, लघु शोध प्रबन्ध, छत्रपति शाहूजी महाराज विश्वविद्यालय, कानपुर।

2 **राठौर, अमित कुमार (2008),** माध्यमिक स्तर पर शिक्षा के माध्यम का विद्यार्थियों की शैक्षिक रुचि एवं समायोजन पर प्रभाव का अध्ययन, लघु शोध प्रबन्ध, छत्रपति शाहूजी महाराज विश्वविद्यालय, कानपुर।

3 **शांकीन, अंजली एण्ड मोहन्ती, एस0के0 (2008).** ''ए स्टडी ऑफ एडजस्टमेंट ऑफ एडोलसेंट ब्यावज एण्ड गर्ल्स ऑफ वर्किंग एण्ड नान वर्किंग मदर्स, इन्टीच्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी, नजफगढ़ नई दिल्ली।

4 **मिश्र, कृष्ण मोहन (2011).** स्नातक स्तर के छात्र एवं छात्राओं की दुश्चिंता का उनके मानसिक स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन, लघु शोध प्रबन्ध, राम अवध लोहिया विश्वविद्यालय, फैजाबाद।

5 **गौड़, लाल बहादुर (2011).** उच्च माध्यमिक स्तर के हिन्दी एवं अंग्रेजी माध्यम के विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य का तुलनात्मक अध्ययन, लघु शोध प्रबन्ध, राम अवध लोहिया विश्वविद्यालय, फैजाबाद।

6 **कुमार, अश्वनी (2013).** हाईस्कूल स्तर के अनुदानित तथा गैर अनुदानित विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन, लघु शोध प्रबन्ध, छत्रपति शाहू जी महाराज विश्वविद्यालय, कानपुर।

7 **यादव, अजीत कुमार (2013).** उच्च माध्यमिक स्तर के एकल एवं सह शिक्षण संस्थाओ में अध्ययनरत् किशोर एवं किशोरियों के समायोजन स्तर का तुलनात्मक अध्ययन, लघु शोध प्रबन्ध, छत्रपति शाहूजी महाराज विश्वविद्यालय, कानपुर।

सांस्कृतिक संघर्ष का समाधान : संस्कृतियों का सम्मान एवं उत्तरदायित्व

डॉ. अतुल कुमार मिश्र

शैक्षिक परामर्शदाता (दर्शनशास्त्र)
उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय,
इलाहाबाद

हमारा कर्तव्य है कि हम अन्य संस्कृतियों या सभी संस्कृतियों को बराबर सम्मान दें। हम इसे प्रायः यह समझ लेते हैं कि इसका तात्पर्य है कि हम अन्य व्यक्तियों का सम्मान करें। लेकिन इसमें अन्य चीजें जैसे–दूसरे की स्वायत्तता का सम्मान करना, इच्छानुसार जीवन को चलाने के अधिकार का सम्मान करना भी आता है। हालांकि यह हमारे उस अधिकार को नहीं छीनता जिसमें हम अन्य जीवन पद्धतियों का विश्लेषण कर उनकी आलोचना करते हैं। उनके अच्छे बुरे पहलुओं को उजागर करते हैं। हमारा यह विश्लेषण उनके विचार धरातल पर आधृत सहानुभूति परक समझ पर आधारित होना चाहिए, नहीं तो अपनी एकांगी विचारधारा से हम उनके साथ न्याय नहीं कर पायेंगे।[1]

इस संदर्भ में संस्कृति के दो आयाम हैं पहला, समुदाय जिससे वह संस्कृति सम्बन्धित है एवं दूसरा उस संस्कृति की सामग्री (कन्टेन्ट) एवं चरित्र। अतः किसी संस्कृति का सम्मान करना, उसके समुदाय के अधिकारों एवं उस संस्कृति की सामग्री और चरित्र का सम्मान करना है। इन दोनों आयामों को सम्मान देने के अलग–अलग आधार हैं। हम प्रथम आयाम का सम्मान करते हैं क्योंकि प्रत्येक मनुष्य को यह अधिकार होना चाहिए कि वह कैसी जीवन शैली अपनाएगा जो कि उसको उसके इतिहास एवं पहचान से जोड़ती हो। प्रत्येक समुदाय को अपनी विशिष्ट संस्कृति का पालन करने का अधिकार मिलना मिलना ही चाहिए। यहां असमानता का कोई भी आधार नहीं होना चाहिए।

जब हम संस्कृति की बात करते हैं तो इसका सम्मान इस मूल्यांकन पर आधारित होता है कि वह इसके सदस्यों को जीवन का कितना अच्छा आकार प्रदान करती। मनुष्य ऐतिहासिक प्राणी है उसका विकास अपने सांस्कृतिक अतीत की समृद्धियों को ही आत्मसात कर लेने से ही होता है।[2] चूंकि प्रत्येक संस्कृति मानव–जीवन को स्थायित्व एवं अर्थ देती है उसके सदस्यों को बांधे रखती हैं सृजनात्मक ऊर्जाओं को प्रदर्शित करती है। मानव के विभिन्न अभिवृत्तियों को कलाओं के माध्यम से शान्त करती है इसलिए संस्कृति को सम्मान मिलना ही चाहिए हालांकि किसी संस्कृति के सावधानी पूर्वक एवं सहानुभूति पूर्ण परीक्षण के बाद हम पा सकते हैं कि कोई संस्कृति जीवन पद्धति की जो सम्पूर्ण गुणवत्ता हमें देती है, वह पर्याप्त नहीं है तथा वह वांछनीय गुणवत्ता से कमी रखती है तो हमें उसे अन्य लाभ परक संस्कृतियों की अपेक्षा कम सम्मान देने लगते हैं। परन्तु सभी संस्कृतियां आधारभूत सम्मान की मांग करती हैं क्योंकि प्रत्येक में कुछ न कुछ खास मूल्यवान पहलू जरूर होते हैं। लेकिन सभी संस्कृतियां सभी के

लिए एक समान मूल्यवान एवं गुणवत्तायुक्त नहीं हो सकती है। हमें संस्कृति का मूल्यांकन करते समय सिर्फ अपने ही दृष्टिकोण से उसका परीक्षण नहीं करना चाहिए, बल्कि सार्वभौमिक आधारों पर उसकी जीवन शैली को तौलना चाहिए। यदि कोई सांस्कृतिक समुदाय मानवीय मूल्य और अस्मिता को आदर देता है, उसके संसाधनों के आधार पर मूलभूत मानवीय हित की रक्षा करता है अन्य समुदाय के लोगों को किसी प्रकार की कोई धमकी नहीं देता है उसके सदस्य अपनी संस्कृति के गौरव में निष्ठा रखते हैं और इस कारण सद्जीवन को प्राप्त करने के लिए सभी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति वह संस्कृति करती है तो निश्चय ही वह संस्कृति की आदरणीय है।

किसी संस्कृति का सम्मान करना, उसके समुदाय के अधिकारों एवं उस संस्कृति की सामग्री और चरित्र का सम्मान करना है। चूंकि प्रत्येक संस्कृति मानव–जीवन को स्थायित्व एवं अर्थ देती है उसके सदस्यों को बांधे रखती हैं सृजनात्मक ऊर्जाओं को प्रदर्शित करती है। इसलिये प्रत्येक समुदाय को अपनी विशिष्ट संस्कृति का पालन करने का अधिकार मिलना मिलना ही चाहिए। यहां असमानता का कोई भी आधार नहीं होना चाहिए।

जो यह मानते हैं कि कुछ संस्कृतियां श्रेष्ठ होती हैं और अपने मूल्य को अन्य संस्कृतियों में आरोपित करना उनका अधिकार होता है वह समुदाय के उस अधिकार का हनन करते हैं जो उन्हें अपनी मान्यताओं और मूल्यों को चुनने के लिए मिलती है।

वस्तुतः किसी भी समुदाय की सदस्यता उसके प्रति उत्तरदायित्व की मांग करती है। सांस्कृतिक समुदाय भी इससे अछूता नहीं है। यह उत्तरदायित्व प्रश्न खड़ा करता है कि क्या संस्कृति के प्रति जवाबदेही है? हाल के वर्षों में कई लेखकों ने विशिष्ट या रोष या तीखेपान के साथ इस प्रश्न को उठाया है। द सटैनिक वर्सेज की प्रकाशन के बाद एडवर्ड ने सलमान रुश्दी की आलोचना की क्योंकि उन्होंने अपने समुदाय के जन्मजात ज्ञान का प्रयोग पश्चिम के पक्षपात पूर्ण मुस्लिम विरोधी भावना को पुष्ट करने के लिए किया। श्वेत लोगों के सांस्कृतिक एवं नस्लीय भेदभाव को बढ़ावा देने के लिए भी कई अफ्रीकी मूल के अमेरिकियों पर भी धोखेबाजी एवं संस्कृति से विद्रोह करने का आरोप लगाया जाता है। जो अपनी समुदाय की मान्यताओं के लिए खड़े नहीं हुए या फिर दूसरे खेमे में चले गये।

जैसा कि हम देखते हैं कि सांस्कृतिक समुदाय के दो आयाम हैं पहला सांस्कृतिक एवं दूसरा सामुदायिक जब हम सांस्कृतिक समुदाय के प्रति उत्तरदायित्व एवं वफादारी की बात करते हैं तो हमारा आशय दोनों आयामों से होता है।

प्रथम दृष्टया, संस्कृति के प्रति उत्तरदायित्व या जवाबदेही का विचार विचित्र लगता है क्योंकि यह स्पष्ट नहीं है कि निर्वैयक्तिक या अमूर्त संकल्पना संस्कृति के साथ मनुष्य का नैतिक सम्बन्ध कैसा हो सकता है। परन्तु जितना विचित्र यह दिखता है उतना है नहीं। हम प्रायः वैज्ञानिकों एवं कलाकारों की उनके विज्ञान एवं कला के प्रति कर्तव्य की बात करते हैं। इसका तात्पर्य है कि उन्हें सम्बन्धित उत्तरदायित्व की केन्द्रीय धारणा एवं मूल्यों के प्रति निष्ठावान रहना चाहिए।[3] एक वैज्ञानिक को सत्य का अनुसरण एवं प्रमाणों का औचित्यपूर्ण परीक्षण करना चाहिए। वहीं कलाकार को कल्पना के निर्भय अभ्यास एवं कलात्मक सत्य के प्रति

जागरूक रहना चाहिए। इसी प्रकार धार्मिक लोग धर्म के सिद्धांतों के प्रति एवं उदारवादी, उदारवादी परम्परा के सिद्धांतों एवं मूल्यों के प्रति वफादार रहने की बात करते हैं। इसी अर्थ में संस्कृति के प्रति उत्तर दायित्व का तात्पर्य है कि संस्कृति से सम्बन्धित जीवन पद्धति के घटक जैसे मूल्यों, आदर्शों, महत्व और अर्थ की व्यवस्थाओं नैतिक एवं आध्यात्मिक संवेदनाओं के प्रति अपने विश्वास को अडिग रखना।

प्रश्न उठता है कि इस उत्तरदायित्व के आधार की सामग्री क्या है? जैसा कि हम जानते हैं कि संस्कृति हमारे जीवन को गति प्रदान करती है। संसाधनों का उपयोग करना सिखाती है, हमारे व्यक्तित्व को स्थिरता प्रदान करती है। इसके मूल्य एवं आदर्श हमें प्रेरित करते हैं। यह परम्पराएं, गीत कहानियां, साहित्य एवं संगीत हमारे जीवन में खुशियों और आनन्द के रंग भरते हैं। यह हमारे जीवन को पग पग पर निर्देशित करते है और नैतिक एवं आध्यात्मिक बुद्धि प्रदान करके हमें जीवन के कठिन समय में स्थिर रहना सिखाती है।[4] यह सब इंगित करता है कि हमारी संस्कृति ने हमारे लिए क्या–कुछ किया है। हम यह भी कह सकते हैं कि इसके आदर्शों सौन्दर्यात्मक आध्यात्मिक विश्वासों एवं अन्य गतिविधियों एवं उपलब्धियों ने मानव जीवन के मूल्यवान दृष्टिकोण को प्रदर्शित किया है जो कि मानवता के सांस्कृतिक और नैतिक पूंजी को समृद्ध करता है।

इस कारण हम सोच सकते हैं कि संस्कृति के प्रति हमारी वफादारी इसलिए होनी चाहिए क्योंकि हमारे जीवन में असीम योगदान दिया है और शायद इस कारण भी कि इसका एक सार्वभौमिक मूल्य है। अगर हमें लगता हो कि कोई संस्कृति मूल्यहीन है, उसके आदर्श अत्यधिक उत्पीड़क हैं, हमें अच्छा जीवन जीने की कला सिखाने के लिए उसके पास मूल्य नहीं है वह हमारे बौद्धिक एवं नैतिक एवं बौद्धिक विकास को अवरुद्ध कर सकती है तो हमारी वफादारी निश्चित रूप से उसके प्रति कमजोर होगी। (कोई भी संस्कृति पूर्णतः मूल्यहीन नहीं हो सकती।) लेकिन यदि हमारी संस्कृति मानव जीवन को सवंर्द्धित करने के लिए संसाधनों का उचित प्रयोग बताती है, मानवीय संबंधों को मजबूत करती है इसके सदस्यों के मध्य सत्य, विश्वास को आदि स्थापित करती है एवं सद्गुण तथा शुभ के स्रोत के रूप में है तो निश्चित तौर पर उसके प्रति हमारी जवाबदेही बनती है।

यदि हमारी संस्कृति औचित्यपूर्ण या न्यायपूर्ण तरीके से समृद्ध है तो हमारा कर्तव्य है कि हम उन महान पुरुषों की स्मृतियों को हृदय में संजोए जिन्होंने इसके निर्माण में अपना योगदान दिया और जिन्होंने लम्बे समय के दौरान इसे बनाए रखा। इसके पवित्र आदर्शों का विस्तार एवं प्रदर्शन करें जिसमें कि कृतज्ञता की एवं सांस्कृतिक विरासत के लिए प्रतिबद्धता का समर्पित भाव हो। हमारा यह भी कर्तव्य है कि हम इसका संवर्द्धन करें एवं आगामी पीढ़ियों को इसकी मूल्यवान बातें समझाएं एवं गलत व्याख्यायित या समझे जाने वाली मान्यताओं का उचित तर्कों के साथ समाधान करें। इसके अलावा संस्कृति को तोड़ने वाली एवं आघात पहुंचाने वाले कुत्सित प्रयासों से भी इसकी रक्षा करना हमारा कर्तव्य होना चाहिए। विचारणीय है कि हमें अपनी सांस्कृतिक विरासत के समृद्ध मूल्यों को दूसरी संस्कृति से कमतर समझकर जल्दबाजी में त्यागना नहीं चाहिए संस्कृति के प्रति उत्तरदायित्व में संसाधनों को उजागर करना, मजबूत करना एवं पुष्ट करना एवं उसकी खामियों को दूर करना भी सम्मिलित है। कोई भी संस्कृति

पूर्ण नहीं है वह तो विश्वासों एवं नियमित क्रिया कलापों की एक व्यवस्था है जो कि कुछ मूल्य और आदर्श लोगों के लिए प्रस्तुत करती है। किसी संस्कृति से प्रेम करने का आशय उसकी समृद्धि की कामना करना है जिसमें कि उसकी आलोचना करना एवं दोषों का परिमार्जन करना भी सम्मिलित है।

समुदाय के प्रति उत्तरदायित्व की अवधारणा सामान्यतः सुनने में आती है। यह आदर्शों, मूल्यों एवं अन्य सांस्कृतिक घटकों के प्रति वफादारी नहीं है बल्कि उन पुरुषों एवं महिलाओं के प्रति है जिन्होंने समुदाय का निर्माण किया है। प्रायः हम अपने परिवार, विद्यालय, राजनीतिक एवं धार्मिक समुदाय के प्रति उत्तरदायित्व की भावना रखते हैं। हम उनके प्रति आभारी हैं क्योंकि यह सब हमें सहयोग, घनिष्ठता, नैतिक एवं भावनात्मक संसाधनों तथा मूलाधारों की संवेदनाओं की एक संरचना प्रदान करते हैं जो हमारे विभिन्न कार्यों में हमारी सहायता करते हैं। चूंकि संस्कृति किसी समुदाय द्वारा ही संरक्षित की जा सकती है इसलिए हम संस्कृति को जीवन्त रखने के लिए भी समुदाय के ऋणी रहते हैं। हमारी वफादारी की भावना उस समय और प्रबल हो जाती है जब बाहरी धमकियों या आक्रमणों या चिंताओं से किसी समुदाय के विखण्डन का खतरा पैदा होता है। जैसा कि यातनादायी एवं पीड़ादायी अनुभवों को यहूदियों ने विनाशकारी संहार के वक्त सहा था। इसी कारण आगे चलकर उनके कर्तव्यों में एक नया आयाम जुड़ा कि उन्हें लाखों लोगों जो कि मृत्यु को प्राप्त हुए थे, की स्मृतियों को तथा उनके मध्य घनिष्ठता को हृदय में संजोए रखना होगा।

सांस्कृतिक संस्था, राजनीतिक दलों, दबाव समूहों आदि की तरह स्वैच्छिक संगठन नहीं है यदि इसे ऐसा समझा जाता है तो यह भ्रामक है। सांस्कृतिक समुदाय मानव की सृजनात्मकता नहीं है बल्कि संघर्षों एवं उपलब्धियों की लम्बी सामूहिक स्मृतियों एवं सुस्थापित व्यवहारों की परम्पराओं से युक्त ऐतिहासिक समुदाय है। हम इनसे जुड़ते नहीं बलिक इनमें पैदा होते हैं। हम इनके सदस्य नहीं बल्कि भाग होते हैं। हमारे संगठन की पहचान निर्वाचन से होती है जबकि सांस्कृतिक पहचान हमें विरासत में मिलती है।

सांस्कृतिक संगठन मानव–जीवन में एक महत्वपूर्ण भूमिका निर्वहन करता है जो कि स्वैच्छिक संगठन कभी नहीं कर सकते। यह इसके सदस्यों को अस्तित्व परक स्थायित्व, प्राचीन एवं आधुनिक उद्‌गम की भावनाओं से जुड़ाव संचार की सरलता एवं अन्य लाभ प्रदान करती है। हमारे जीवन में स्वैच्छिक संगठनों एवं सांस्कृतिक समुदाय दोनों का पूरक स्थान है और मानवीय ज्ञान तथा मेधा तभी उभरकर सामने आयेगी जब ये दोनों सहभागी होकर कार्य करेंगे।

किसी सांस्कृतिक समुदाय के प्रति वफादारी कुछ कर्तव्यों की ओर इंगित करती है जो कि संस्कृति के प्रति वफादारी के कर्तव्यों से भी मेल खाती है या समानता रखती है। यह कर्तव्य किसी समुदाय के सदस्यों के प्रति होती है न कि संस्कृति के आदर्शों के प्रति। यह वफादारी तब भी रहती है जब हम किसी संस्कृति को अस्वीकार कर देते हैं। नियमों– कानूनों, परम्पराओं, मूल्यों, व्यवहारों की संरचना, जो कि किसी समुदाय की रचना करती है, एक लम्बी अवधि में निर्मित होती है। हम उसे प्राप्त करते हैं, लाभान्वित होते हैं और उसका परिवर्धन करते हैं। अपने निहित स्वार्थों के लिए समुदाय को चोट पहुंचाना एक घृणित कार्य है। इसलिए हमारा कर्तव्य है कि हम विभिन्न आक्षेपों और गलत व्याख्याओं का उत्तर निर्भीकतापूर्वक आलोचनाकारों

को दें। समुदाय के प्रति हो रहे अन्याय के प्रति लड़ना और न्याय दिलाना भी हमारा कर्तव्य होता हैं महात्मा गांधी अपने समुदाय से अत्यंत प्रेम करते थे इसलिए वह अस्पृश्यता, बाल विवाह एवं जाति–विभेद आदि सामाजिक कुरीतियों के उन्मूलन के लिए प्रतिबद्ध थे। हमारा भी उत्तरदायित्व अपने समुदाय की प्रचलित लाभकारी परम्पराओं को पुष्ट करना व हानिकारक विश्वासों को उन्मूलित करना होना चाहिए।

संदर्भ ग्रन्थ सूची –

1. Storey Jhon : What is Cultural Studies? A Reader. Bloomsbury Academic, 1996, Page – 247
2. डॉ. देवराज : दर्शन धर्म अध्यात्मक और संस्कृति, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2005। (पेज– 170)
3. Parekh Bhikhu, Rethinking Multiculturalism- Cultural Diversity and Political Theory, Palgrave Macmillan, 2005. Page-145-46.
4. डा.कार्टन डेविड सी : जब दुनिया में निगमों का राज चले, आजादी बचाओ आन्दोलन प्रकाशन, इलाहाबाद, 2002, पेज 235

भारतीय शिक्षा एवं कृषि का स्वरूप : दृष्टिकोण 2022

शैलेश यादव

शोध छात्र, शिक्षा शास्त्र विभाग,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय,
इलाहाबाद

सन्दर्भ

मनुष्य का सर्वांगीण विकास शिक्षा के माध्यम से ही सम्भव है इसके अभाव में मानव जीवन की कल्पना करना पशुवत के समान है। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति के लिए सर्वभौगिक शिक्षा की अनिवार्यता आवश्यक है जो आने वाले भविष्य के लिए सुनहरा अवसर उपलब्ध कराने की दिशा में एक सार्थक कदम है। स्वतंन्त्रता के पश्चात् शिक्षा के क्षेत्र में उठाये गये सरकारी एवं अर्धसरकारी प्रयास भारतीय समाज के विकास मे सहायक रहे है, जिसमें से प्रमुख रूप से मुदालियर आयोग, कोठारी कमिशन, राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा 2005, निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा अधिनियम 2009 एवं विभिन्न गैर सरकारी संस्थाओ का गठन किया गया है जो शिक्षा के उद्देश्यो को प्राप्त करने के लिए उठाये गये सार्थक प्रयत्न है। लेकिन वर्तमान परिदृश्य में भारतीय भारतीय समाज की आवश्यकताओं, उपलब्ध संसाधनो का कुशलता पूर्वक दोहन करने में पूर्णरूपेण समर्थ नहीं है। प्रत्येक जनमान के मन में पूर्ण करने के लिए नित्य दिन–प्रतिदिन नये विचार उठ रहे है। इसी सन्दर्भ में प्रधान मन्त्री नरेन्द्र मोदी जी ने 28 फरवरी 2016 को भारतीय स्वतंत्रता की 75वीं (2022) वर्ष गाठ के ध्यान में रखकरके सम्पूर्ण भारत के विकास के लिए एक समग्र दृष्टिकोण प्रस्तुत किये। जिसमें शिक्षा एवं कौशल विकास के माध्यम से मानव को सुखी एवं सम्पन्न बनाने के लिए नीतिगत रूपरेखा, प्रस्तुत की गयी है।

भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ कृषि मानी जाती है जो भारतीय मानव जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति करती है। स्वतंन्त्रता के पश्चात् कृषि के क्षेत्र में उठाये गये सराहनीय प्रयत्न पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से प्रस्तुत किये जिनमे भारतीय किसान लाभान्वित तो हुए लेकिन बढ़ती जनसंख्या एवं प्राकृतिक संसाधनो का असमान वितरण व्यवस्था के कारण, नये नीतिगत विचार के लिए आवश्यक कदम उठाने हेतु इंकित कर रहे है, जो किसी सम्प्रभू राज्य कि प्रगति के लिए आवश्यक है। इसी सन्दर्भ में वर्तमान सरकार ने कृषको की आय को 2022 तक दोगुना करने के लिए सात सुत्रीय रणनीति प्रस्तुत किया। जिसमें कृषि उत्पादकता में सुधार, फसल सघनता में सुधार, उच्च मूल्य वाली फसलों की ओर विविधता, संसाधनों का उपयोग दक्षता या उत्पादन लागत में बचत, कृषकों को गैर खेती बाड़ी व्यवस्थाओं की ओर उन्मूख करना तथा कृषकों के लिए व्यापार की शर्तो में सुधार लाना सम्मिलित है।

देश की आजादी की पचहत्तरवीं साल गिरह यानि 2022 तक हम दस्तक दे चुके होंगे, ऐसे युग में जहाँ से आगे की हर राह विकास तक जाती है जिन राहों में हम तेजी से तरक्की

कर सकेंगे, उनमें कृषि, शिक्षा इत्यादि में किया जाना शेष हैं, इन क्षेत्र में हम तेजी से बढ़ रहे है देश और जनता की तरक्की से जुड़े इन क्षेत्रों का भविष्य कैसा होगा, आगे आने वाले पाँच सालों में हम भारत सरकार के ''दृष्टिकोण 2022'' की तरफ आकृष्ट हुए है।

स्वतन्त्रता के पश्चात् शिक्षा के क्षेत्र में अनेक बदलाव हुए है। साक्षरता दर, प्राइमरी स्कूली शिक्षा के साथ ही मेडिकल व इंजीनियरिंग जैसे क्षेत्रों में हमने नये आयाम स्थापित किये है। पिछले साठ दशकों में शिक्षा के क्षेत्र में आमूल–चूल परिवर्तन हुए है, जिससे साक्षरता दर बढ़ी है। आकड़े बताते है कि 1947 में भारत की 12 फीसदी आबादी साक्षर थी, जो साल 2011 में 73 फिसदी हो गयी। मेडिकल शिक्षा के क्षेत्र में भी हमने एक लम्बा सफर तय किया है। आजादी के बाद देश का पहला आल इण्डिया इन्स्टीट्यूट आफ मेडिकल साइन्स यानी एम्स दिल्ली में खोला गया। वर्तमान समय में देश के विभिन्न हिस्सों में सात एम्स स्थापित किये जा चुके है। इंजीनियरिंग शिक्षा के लिए सन् 1951 में खड्गपुर में पहला इण्डियन इंस्टीट्यूट ऑफ इंजीनियरित यानी आई आई टी खोला गया। इसके पश्चात् मुम्बई, मद्रास, कानपुर, दिल्ली में भी आई आई टी संस्थानों की स्थापना हुई। इन संस्थानो में कुशल शिक्षक उपलब्ध कराये गये ताकि वे देश के लिए सर्वश्रेष्ठ इंजीनियर तैयार कर सके। वर्तमान समय में कुल 23 आई0आई0टी0 संस्थान स्थापित किये जा चुके है। यदि हम वर्तमान समय की आवश्यकताओं पर ध्यान केन्द्रित करे तो शिक्षा के क्षेत्र में उपलब्धियाँ हमें सिर्फ सन्तोष का एहसास कराती है और साथ ही साथ प्रगति के बीच कुछ विरोधाभास का लक्षण इंगित करती है। जिन्हे नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। बेशक साक्षरता दर तो बढ़ रही है लेकिन आज भी करोड़ो लोग शिक्षा से वंचित है। प्राथमिक विद्यालयों में दाखिला लेने वाले बच्चों की संख्या तो बढ़ी है पर इनका बौद्धिक स्तर चिंता पैदा करता है। एक रिपोर्ट के मुताबिक, देश मे प्राइमरी स्कूलों में पढ़ने वाले पाँचवी क्लास के 52 फीसदी छात्र दूसरी क्लास के किताब नहीं पढ़ पाते हैं। यह एक चिन्ता का विषय बनता जा रहा है। कैसे ये बच्चे उच्च शिक्षा प्राप्त कर सकेंगे। आई0आई0टी0 संस्थानों को छोड़ दे तो तमाम इंजीनियरित कालेजो से निकलने वाले हजारों छात्र रोजगार की जरूरतों को पूरा नहीं कर पाते हैं। अनेक इंजीनियरिंग संस्थान उ0प्र0, मध्य प्रदेश, हरियाणा, केरल, इत्यादि स्थानो में खाले गये लेकिन गुणवत्ता युक्त शिक्षा देने में असफल हो गये जिससे बन्द करने पड़ रहे हैं। यह एक बड़े दुर्भाग्य की बात है कि एक तरफ हम शिक्षण संस्थानों की अनुपलब्धता की बात करते है तो दूसरी तरफ स्थापित संस्थानों में गुणवत्ता स्थापित नहीं कर पा रहे हैं।

भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ कृषि मानी जाती है जो भारतीय मानव जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति करती है। स्वतंन्त्रता के पश्चात् कृषि के क्षेत्र में उठाये गये सराहनीय प्रयत्न पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से प्रस्तुत किये जिनमे भारतीय किसान लाभान्वित तो हुए लेकिन बढ़ती जनसंख्या एवं प्राकृतिक संसाधनो का असमान वितरण व्यवस्था के कारण, नये नीतिगत विचार के लिए आवश्यक कदम उठाने हेतु इंकित कर रहे है, जो किसी सम्प्रभू राज्य कि प्रगति के लिए आवश्यक है।

शिक्षा के क्षेत्र में हमने एक लम्बा सफर तय किया है पर भविष्य को देखते हुए मौजूदा शिक्षा व्यवस्था में बदलाव की आवश्यकता महसूस की जा रही है। शिक्षा व्यवस्था में सुधार के लिए वर्तमान सरकार ने नयी शिक्षा नीति तैयार करने के लिए पूर्व कैबिनेट सचिव टी0एस0आर0 सुब्रमण्यम के नेतृत्व में पाँच सदस्यी कमेटी बनायी थी। इस कमेटी ने 2016 में सरकार को रिपोर्ट सौंपी थी जिसमें उन सभी बिन्दुओं पर ध्यान केन्द्रित किया गया है जो आज तक उपेक्षित रहे है। इस राष्ट्रीय नीति 2016 की रिपोर्ट के प्रमुख बिन्दु निम्नलिखित है–

1. आन डिमांड परीक्षा–10वीं कक्षा में आन डिमांड बोड परीक्षा हो। जब छात्र परीक्षा के लिए तैयार हो तब आन लाइन परीक्षा कराई जाय।
2. दो स्तर में परीक्षाएं–10वीं कक्षा में गणित और विज्ञान विषयों की परीक्षाएं दो स्तरों पर हो पहला निम्न और दूसरा उच्च स्तर
3. राष्ट्रीय स्तर पर परीक्षा–12वीं कक्षा के बाद छात्र का एक राष्ट्रीय स्तर का टेस्ट हो इस टेस्ट के जरिये उसे कालेजों में प्रवेश दिया जाय।
4. संस्कृत स्वतन्त्र विषय बने–संस्कृत को शास्त्रीय भाषा मानने की जगह इसे प्रचलित भाषा के रूप में स्वीकार किया जाय। साथ ही प्राइमरी और अपर प्राइमरी स्तर पर संस्कृत भाषा को स्वतन्त्र भाषा के रूप में लागू किया जाय।
5. हर स्तर पर ओपेन स्कूल–सबको शिक्षा उपलब्ध कराने के लिए बेहतर होगा कि देश में हर स्तर पर ओपन स्कूल कोर्स तैयार किया जाय।
6. योग पर जोर–हर स्कूल में योग अनिवार्य होना चाहिए ताकि बच्चों की सेहत अच्छी रहे और मानसिक मजबूती कायम हो।
7. प्राइवेट कोचिंग पर रोक– कमेटी ने प्राइवेट कोचिंग पर लगाम कसने की जरूरत पर जोर दिया। बच्चों की मदद के लिए स्कूल के अंदर कोचिंग का इंतजाम होना चाहिए ताकि अमीर गरीब सभी बच्चे पढ़ाई कर सके।
8. अल्पसंख्यक बच्चों के लिए सीटे–प्राइवेट स्कूलो की तरह अल्पसंख्यक संस्थानों में भी ई डब्लू एस श्रेणी के लिए 25 फीसदी सीटे आरक्षित हो।
9. कमजोर बच्चो के लिए विशेष कक्षा– नो डिटेशन पॉलिसी/फेल न करने की नीति केवल कक्षा पॉच तक सीमित रखी जाय। कक्षा पाँच के बाद फेल होने बच्चो को पास होने के लिए अतिरिक्त मौके दिये जाये।
10. प्री स्कूल पाठ्यक्रम बने– चार–पाँच साल के बच्चो के लिए प्री–स्कूल शिक्षा अधिकार होना चाहिए। कमेटी का सुझाव है कि एनसीईआरटी प्री–स्कूल पाठ्यक्रम तैयार करें।
11. टीचिंग के लिए पॉच साल का इंटीग्रेटेड कोर्सः 10वीं कक्षा के बाद पॉच साल का इंटीग्रेटेड कोर्स होना चाहिए। इस कोर्स का मकसद प्राथमिक अध्यापक तैयार करना होना चाहिए। 12वीं पास करने के बाद पॉच साल का इंटीग्रेट कोर्स होना चाहिए। जिसे इसे करने वाले हायर सेकेंड्री के टीचर बन सकेंगे।
12. पाँचवी कक्षा तक मातृभाषा में पढ़ाई–स्कूलों में 5वीं कक्षा तक मातृभाषा में पढ़ाई हो। प्राइमरी स्तर पर दूसरी भाषा और सेकेंड्री स्तर पर तीसरी भाषा का विकल्प दिया जाय। भाषा तय करने का अधिकार राज्यों के पास दिया जाय।

उपर्युक्त बिन्दुओ के अवलोकन से यह स्पष्ट है कि संस्कृत को जनसामान्य की भाषा के रूप में स्वीकार करना तार्किक रूप से सही नहीं है। क्योंकि यह भाषा जन सामान्य में नहीं बोली जाती है। दूसरा महत्वपूर्ण बिन्दू सभी स्तरों पर ओपेन स्कूल उपलब्ध कराना है। माध्यमिक और उच्च स्तर पर ओपेन स्कूल का विचार शिक्षार्थी के मानसिक स्तर के अनुरूप होता है परन्तु प्राथमिक स्तर पर शिक्षार्थीयो के लिए खुला विद्यालय तार्किक दृष्टि से सही प्रतीत नहीं होते क्योंकि प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों को शिक्षक के सानिध्य की आवश्यकता अधिक होती है जिससे वे अपना सर्वांगीण विकास कर सके।

सी0आई0आई0इण्डिया स्किल रिपोर्ट (2015) के अनुसार 1947 में भारत की साक्षरता दर 12 फिसदी थी जो 2011 में बढ़कर 74.04 फिसदी हुई, 28.7 करोड़ लोग अनपढ़, भारत में 28.7 करोड़ लोग पढ़ लिख नही सकते, दुनिया के 37प्रतिशत अनपढ़ लोग भारत में है, 7. 1प्रतिशत बच्चे आठवीं से पहले ही स्कूल छोड़ देते है, प्राइमरी शिक्षा का हाल, ऐसा है कि पांचवी कक्षा के 52 फिसदी छात्र दूसरी कक्षा की किताबे नहीं पढ़ पाते।, तीसरी कक्षा में पढ़ने वाले हर चार में से एक छात्र को दो अंको का जोड़ घटाना नहीं आता, गाँवो में 44 फीसदी से ज्यादा बच्चे गुणा–भाग नहीं कर पाते।, पाँचवी कक्षा में पढ़ने वाले 75 फीसदी बच्चे अंग्रेजी नहीं पढ़ पातें, प्राइमरी स्कूलों में शिक्षको के 5,86,000 पद खाली, 37 प्रतिशत स्कूलो में भाषा के एक भी शिक्षक नहीं है देश में 31प्रतिशत स्कूलो में सामाजिक विज्ञान के एक भी शिक्षक नहीं, हर साल सवा करोड़ युवा पढ़कर रोजगार तलाश करते हैं।, इनमें से केवल 37 प्रतिशत ही रोजगार के काबिल है, जिसके फलस्वरूप देश में डिग्री और हुनर का फासला बढ़ा है।

सभी बिन्दुओं पर ध्यान केन्द्रित कर शिक्षा के क्षेत्र में दृष्टिकोण 2022 तक फाउण्डेशन लर्निंग पर अधिक ध्यान देकर विद्यालयी शिक्षा की गुणवत्ता पर विशेष बल देना है, जिसके निम्नलिखित बिन्दू इस प्रकार है–

1. आगत आधारित मूल्यांकन से उपलब्धि आधारित मूल्यांकन की ओर बढ़ना,
2. विद्यार्थीयो के स्तर एवं सीखने की प्रवृत्ति से अध्यापन को जोड़ने के लिए सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी का योचित सम्बद्धीकरण
3. चौदह वर्ष के बच्चों को निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा अधिनियम के अन्तर्गत आठवीं कक्षा तक आटोमैटिक प्रमोशन की नीति पर पुनर्विचार करना
4. विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालय को अधिक स्वतंत्रता दी जा सके,
5. विश्वस्तरीय विश्व विद्यालय कार्यक्रम के अन्तर्गत सार्वजनिक विश्वविद्यालयों का सृजन एवं वित्तीयन।

शिक्षा के माध्यम से प्रत्येक क्षेत्र में आमूल–चूल परिवर्तन हुए है। शिक्षा में तकनीकि प्रगति में क्रान्तीकारी परिवर्तन दृष्टिगोचर हो रहे है इनमें भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ कहे जाने वाली कृषि भी प्रगति पर है जो देश के करोड़ो कृषकों के हितों के रक्षार्थ है। 28 फरवरी 2016 को बरेली में सम्बोधित करते हुए जन सभा में प्रधानमन्त्री नरेन्द्र मोदी जी ने कहा कि महात्मा गांधी की पुण्य तिथि की पचहत्तरवीं वर्ष गाठ (2022) तक देश में कृषको की आय को दोगुना करने का लक्ष्य रखा है। ब्लूमवर्ग इण्डिया इकोनॉमिक फोरम को 28 मार्च 2016 को सम्बोधित करते हुए प्रधानमन्त्री ने कहा ''पूर्व में कृष्कों की आय के बजाय कृषि उत्पादन में

वृद्धि किए जाने पर अधिक बल दिया गया। मैनें 2022 तक कृषकों की आय को दोगुना करने का लक्ष्य रखा हैं। हमने इसको एक चुनौती के रूप में लिया है। लेकिन यह एक चुनौती मात्र नहीं है बल्कि यह एक अच्छी रणनीति, सु–अभिकल्पित कार्यक्रमों, पर्याप्त संसाधनों तथा क्रियान्वयन में सुशासन से इस लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है। इस लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु सात सुत्रीय रणनीति प्रस्तुत की– उत्पादन में सुधार, फसल सघनता में सुधार, उच्च मूल्य वाली फसलो की ओर विविधता, संसाधन उपयोग दक्षता या उत्पादन लागत में बचत। कृषकों को गैर खेतीबाड़ी व्यवसायों की ओर विवर्तित करना, कृषकों के लिए व्यापार की शर्तो अथवा कृषकों द्वारा प्राप्त वास्तविक कीमतो में सुधार लाना।

कृषकों की आय में सुधार हेतु रणनीति–कृषि उत्पादन और तद्नुसार कृषको की आय में वृद्धि के स्रोत निम्नलिखित प्रकार हो सकते है। कृषि की जी0डी0पी0 में सार्वजनिक निवेश का वर्तमान में 2.76 से बढ़ाकर कम से कम 4 प्रतिशत के स्तर पर लाना, नदी जोड़ो अभियान, परम्परागत कृषि का विकास, मृदा स्वास्थ कार्ड, प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई परियोजना, प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना।

प्रौद्योगिकी एवं नवोन्मेष– इसके अन्तर्गत जेनोम एडिटिंग, सटीक खेती, चावल सघन प्रणाली, धान की बीजो की सीधे बुआई, शून्य जुताई को अपनाना मेड़ों पर पौधा रोपड़, रिंज प्लान्टेशन नीतिया, उत्पादन, कीमत प्राप्ति एवं कृषकों की आय में वृद्धि के लिए 2002 से भारत सरकार ने कई नीतिगत पहले की है, जैसे कि विशिष्टीकृत खाद्य पदार्थ आदेश (अनुज्ञा आवश्यकता भण्डारण सीमा तथा लाने, ले जाने पर प्रतिबन्ध) 2002 एवं 2003 गेहूँ चावल, मोटे अनाज, चीनी खाद्य तिलहन एवं खाद्य तेलो, दालो, गुड़, गेहूँ के उत्पादों, वनस्पति तेलों की आवश्यकता वस्तु अधिनियम 1955 की परिधि से बाहर लाया गया अब इनके व्यापार भण्डारण एवं लाने जाने हेतु परमिट या लाइसेंसे की आवश्यकता नहीं होती। दुग्ध एवं दुग्ध उत्पाद आदेश 2002 द्वारा दुग्ध प्रसंस्करण मे नयी क्षमता स्थापन हेतु पूर्व में लगे सभी प्रतिबन्ध हटाए गए।

संस्थाएं– लघु कृषक, कृर्षी व्यवसाय कसोर्टियम, कृषक उत्पादक संगठन,

कृषकों की आय दोगुना करने की रोड मैप योजना और कार्य योजना– कृषकों की आय का 2022 तक दोगुना करना फसल सघन में वृद्धि, उच्च फसलों की ओर विविधिकरण, कृषकों को उनकी उपज का पूरा मूल्य दिलाना, कृषकों को गैर कृषी कार्यो में रोजगार दिलाना, फसलो की उत्पादकता में वृद्धि, आगतों की क्षमता में सुधार करके लागत को कम करना।

निष्कर्ष– महात्मा गाँधी की पचहत्तरवीं (2022) की वर्ष गांठ पर भारत सरकार ने कृषी के क्षेत्र एवं शिक्षा के क्षेत्र में कार्य रूपेण योजना प्रस्तुत की है जिसके माध्यम से नव भारत के निर्माण का मार्ग प्रशस्त होगा, जो आने वाली पीढ़ीयों के लिए एक मील का पत्थर साबित होगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची –

1 रूहेला, सत्यपाल व नायक, राजकुमार (2008) उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षाः अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा।

2 वर्मा, सवलिया विहारी (2011), ग्रामीण शिक्षा एवं प्रौद्योगिकी, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन, नई दल्ली।

3 सिंह, जे0डी0 (2011), भारत में उच्च शिक्षा के मुद्दे, चुनौतियां और सुझाव, परिप्रेक्ष्य, वर्ष 18, अंक 1, अप्रैल 2011।

4 पाठक पी0डी0(2012), भारतीय शिक्षा और उसकी सम्स्याएँः अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा।

5 सक्सेना, डॉ0 सरोज (2012), शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधारः साहित्य प्रकाशन आगरा।

6 भटनागर, ए0बी0 अनुराग (2016), शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय परिदृश्य : आर0 लाल बुल डिपो, मेरठ।

7 सक्सेना, एन0आर0 स्वरूप, चतुर्वेदी शिखा (2016), शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधारः आर लाल बुक डिपो, मेरठ।

8 योजना पत्रिका।

9 कुरूक्षेत्र पत्रिका।

बी0एड0 स्तर पर अध्ययनरत् छात्राध्यापकों के संवेगात्मक बुद्धि का उनके आकांक्षा स्तर के मध्य सहसम्बन्ध का अध्ययन

कु0 रेनू

शोध छात्रा (शिक्षाशास्त्र)
शिक्षक–शिक्षा संकाय
नेहरू ग्राम भारती डीम्ड टू बी यूनिवर्सिटी,
इलाहाबाद।

प्रस्तावना–

शिक्षा मानव विकास का मूल साधन है। इसके द्वारा मनुष्य की जन्मजात शक्तियों का विकास उसके ज्ञान एवं कला–कौशल में वृद्धि एवं व्यवहार में परिवर्तन किया जाता है और उसे सभ्य, सुसंस्कृत एवं योग्य नागरिक बनाया जाता है शिक्षा व्यवस्था किसी भी प्रकार की क्यों न हो उसमें शिक्षक की भूमिका सर्वोपरि होती है।

शिक्षक सम्पूर्ण शिक्षा प्रणाली का केन्द्र बिन्दु होता है तथा समस्त शिक्षा व्यवस्था उसके चारों ओर विचरण करती है। शिक्षक को शिक्षा व्यवस्था का प्राण कहना भी अनुचित न होगा क्योंकि शिक्षक ही सम्पूर्ण शिक्षा व्यवस्था को जीवन्त बनाता है।

हमारा वर्तमान समाज राष्ट्र परिवर्तन तथा विकास के एक नाजुक परन्तु अत्यन्त महत्वपूर्ण दौर से गुजर रहा है। ऐसी परिस्थिति में शिक्षक का दायित्व और भी बढ़ जाता है। शिक्षक ही देश के भावी नागरिकों अर्थात् युवा वर्ग के छात्र–छात्राओं के सम्पर्क में आता है तथा उन्हें अपने आचार–विचार तथा ज्ञान के अवबोध से प्रभावित करता है। शिक्षक के ऊपर राष्ट्र के भावी निर्माताओं को तैयार करने का दायित्व होता है, सामाजिक तथा राष्ट्रीय विकास का सूत्रधार शिक्षक ही होता है। समाज की आवश्यकताओं, अपेक्षाओं, आदर्शों, आकांक्षाओं, मूल्यों आदि को वास्तविक रूप देने की जिम्मेदारी भी शिक्षक को वहन करनी होती है वास्तव में शिक्षकगण अपने प्रयासों से भावी समाज की संरचना करते हैं। इसलिए शिक्षकों को सामाजिक अभियंता के नाम से सम्बोधित किया जाता है। राष्ट्रीय विकास में अध्यापकों के योगदान को देखते हुए। अध्यापक को राष्ट्र निर्माता भी कहा जाता है।

शिक्षा के सभी स्तरों के शिक्षकों से यह अपेक्षा रखी जाती है कि वे बालक के संवेगात्मक विकास को समझते हुए उनके सर्वांगीण विकास में अपना योगदान दे सकें। संवेगात्मक स्थिरता व्यक्ति में अतिरिक्त शक्ति का संचार करती है जिससे वह ऐसे–ऐसे कार्य कर दिखाता है जो सामान्य स्थिति में उसके लिए सम्भव प्रतीत नहीं होती। संवेगों का सम्बन्ध व्यक्ति के जीवन के भावात्मक पक्ष से होता है। शिक्षक अपने बढ़ते हुए उत्तरदायित्व का निर्वाह तभी कर सकते हैं जब उनमें ये गुण हों– उत्तम शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य, उच्च सामाजिकता, उच्च सांस्कृतिक दृष्टिकोण, स्पष्ट जीवन दर्शन, नैतिक एवं चरित्रबल, अपने विषय का स्पष्ट

ज्ञान विभिन्न मनोवैज्ञानिक विशेषताएँ जैसे अच्छा व्यक्तित्व, संवेगात्मक स्थिरता, दृष्टिकोण, विषयों का सामान्य ज्ञान, शिक्षण कौशलों में दक्षता तथा संगठन शक्ति। इन गुणों के साथ–साथ उसे अध्ययनशील एवं प्रगतिशील भी होना चाहिए। आत्मविश्वास तथा उत्साह तो किसी भी व्यक्ति की सफलता के राज होते हैं। विद्वानों का मत है कि शिक्षकों को गम्भीरता के साथ–साथ विनोदी भी होना चाहिए।

शिक्षक के ऊपर राष्ट्र के भावी निर्माताओं को तैयार करने का दायित्व होता। है, सामाजिक तथा राष्ट्रीय विकास का सूत्रधार शिक्षक ही होता है। समाज की आवश्यकताओं, अपेक्षाओं, आदर्शों, आकांक्षाओं, मूल्यों आदि को वास्तविक रूप देने की जिम्मेदारी भी शिक्षक को वहन करनी होती है वास्तव में शिक्षकगण अपने प्रयासों से भावी समाज की संरचना करते हैं। इसलिए शिक्षकों को सामाजिक अभियंता के नाम से सम्बोधित किया जाता है। राष्ट्रीय विकास में अध्यापकों के योगदान को देखते हुए। अध्यापक को राष्ट्र निर्माता भी कहा जाता है।

अतः शोधकर्त्री द्वारा बी0एड0 स्तर पर अध्ययनरत् छात्राध्यापकों के संवेगात्मक बुद्धि का उनके आकांक्षा स्तर में सम्बन्ध को देखने का प्रयास किया गया है। जहाँ देखा जाये बी0एड0 स्तर पर अध्ययनरत छात्राध्यापक भविष्य के शिक्षक होंगे तो उनमें संवेगात्मक बुद्धि की स्थिरता महत्त्वपूर्ण है। जैसा कि संवेग के बारें में वुडवर्थ ने कहा है। कि संवेग, व्यक्ति की उत्तेजित दशा है। अतः छात्राध्यापकों में उत्तेजना जैसे संवेगों को द्य पाया जाना स्वाभाविक है जैसा कि बी0ए0 स्तर छात्राध्यापक अपने लक्ष्य के प्रथम स्तर पर पहुँचते है एवं अपने जीवन की शुरू अपने दम पर करना चाहते है वहीं उनकी आकांक्षा होती है कि वह अपने शिक्षा–दीक्षा के दम पर उन्हें रोजगार प्राप्त हो। उनकी द्य आकांक्षायें जहाँ उनके पारिवारिक, सामाजिक–आर्थिक स्तर एवं अन्य कारणों से प्रभावित होती है वहीं उनमें संवेग नकारात्मक रूप से उत्पन्न होता है। जैसा कि देखा गया है कि संवेग – सुख, दुःख, प्रेम, भय, क्रोध, आशा, निराशा, लज्जा, गर्व, ईर्ष्या, आश्चर्य और सहानुभूति है वहीं छात्राध्यापकों के आशा को निराशा की तरफ जाना उनके संवेगात्मक बुद्धि पर नकारात्मक प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है और यही उनकी नकरात्मकता उनके उपलब्धि को भी प्रभावित करती है जैसा कि कुछ शोध द्वारा इंगित होता है सुभ्रामण्यम, के, तथा निवासराव, के. श्री (2008), ने अध्ययन में पाया किशैक्षिक उपलब्धि तथा संवेगात्मक बुद्धि में कोई सम्बन्ध नहीं होता। पाण्डा, सुमन्त कुमार (2009), ने अध्ययन में पाया कि छात्राध्यापकों की संवेगात्मक बुद्धि तथा सामान्य व्यवहार के मध्य सहसम्बन्ध होता है। एम.आर. डा. उमा देवी (2009), ने द्य निष्कर्ष में पाया कि प्राथमिक विद्यालय के छात्राध्यापकों की शैक्षिक उपलब्धि एवं संवेगात्मक बुद्धि के मध्य सकारात्मक सम्बन्ध होता है। आर, सहाय मैरी तथा सैमुयल, मनोरमा (2010), ने अध्ययन में पाया कि संवेगात्मक बुद्धि छात्राध्यापकों के शैक्षिक दृष्टिकोण को प्रभावित करती है। जाधव, वन्दना वी. तथा पाटिल, अजय कुमार (2010), ने अध्ययन में इंगित किया कि संवेगात्मक बुद्धि सीखी जा सकती है और धीरे–धीरे विकसित हो सकती है इसलिए संवेगात्मक साक्षरता कार्यक्रम छात्राध्यापकों के लिए किये जाने चाहिए। ये कार्यक्रम छात्राध्यापकों के लिए लाभदायक तथा तथा उपयोगी होगे।

समस्या कथन–

बी0एड0 स्तर पर अध्ययनरत छात्राध्यापकों के संवेगात्मक बुद्धि का उनके द्य आकांक्षा स्तर के मध्य सहसम्बन्ध का अध्ययन।

अध्ययन का उद्देश्य–

प्रस्तुत अध्ययन में निम्नलिखित उद्देश्यों है–

- बी0एड0 स्तर पर अध्ययनरत् छात्राध्यापकों के संवेगात्मक बुद्धि का उनके आकांक्षा स्तर के मध्य सहसम्बन्ध का अध्ययन करना।
- बी0एड0 स्तर पर अध्ययनरत् पुरुष छात्राध्यापकों के संवेगात्मक बुद्धि का उनके आकांक्षा स्तर के मध्य सहसम्बन्ध का अध्ययन करना।
- बी0एड0 स्तर पर अध्ययनरत् महिला छात्राध्यापकों के संवेगात्मक बुद्धि का उनके आकांक्षा स्तर के मध्य सहसम्बन्ध का अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पनाएं–

प्रस्तुत अध्ययन में उद्देश्यों के आधार पर निम्नलिखित परिकल्पनाओं का परीक्षण किया गया है–

- बी0एड0 स्तर पर अध्ययनरत छात्राध्यापकों के संवेगात्मक बुद्धि का उनके
- आकांक्षा स्तर के मध्य कोई सहसम्बन्ध नहीं है। बी0एड0 स्तर पर अध्ययनरत् पुरुष छात्राध्यापकों के संवेगात्मक बुद्धि का उनके आकांक्षा स्तर के मध्य कोई सहसम्बन्ध नहीं है।
- बी0एड0 स्तर पर अध्ययनरत् महिला छात्राध्यापकों के संवेगात्मक बुद्धि का उनके आकांक्षा स्तर के मध्य कोई सहसम्बन्ध नहीं है।

शोध प्रविधि–

प्रस्तुत अध्ययन में वर्णनात्मक अनुसंधान के अन्तर्गत सहसम्बन्धात्मक विधि का प्रयोग किया गया है जिसके अन्तर्गत छात्राध्यापकों के संवेगात्मक बुद्धि एवं आकांक्षा स्तर के मध्य सहसम्बन्ध को देखा गया है। न्यादर्श के रूप में नेहरू ग्राम भारती विश्वविद्यालय, इलाहाबाद में अध्ययनरत् बी0एड0 कक्षाओं में अध्ययनरत् 25 पुरुष एवं 25 महिला छात्राध्यापकों अर्थात् कुल 50 छात्राध्यापकों का चयन यादृच्छिक विधि से किया गया। उपकरण के रूप में डॉ0 शुभ्रामंगल द्वारा निर्मित एवं प्रमापीकृत अध्यापक संवेगात्मक बुद्धि मापनी एवं आकांक्षा स्तर को मापने के लिए डॉ0 वी0पी0 भार्गव का द्वारा निर्मित मापनी का प्रयोग किया जायेगा। आँकड़ों के विश्लेषण एवं व्याख्या के लिए पियर्सन आघूर्ण सहसम्बन्ध गुणांक सांख्यिकी विधि का प्रयोग किया गया है।

आँकड़ों का विश्लेषण एवं व्याख्या–

उद्देश्य–1 बी0एड0 स्तर पर अध्ययनरत् छात्राध्यापकों के संवेगात्मक बुद्धि का उनके आकांक्षा स्तर के मध्य सहसम्बन्ध का अध्ययन करना।

तालिका 1

बी0एड0 स्तर पर अध्ययनरत छात्राध्यापकों के संवेगात्मक बुद्धि का उनके आकांक्षा स्तर के मध्य सहसम्बन्ध

क्रमांक	बी0एड0 स्तर	सहसम्बन्ध गुणांक का मान	स्वतंत्र्यांश (N-2)	सार्थकता स्तर
1.	छात्राध्यापक	0.3992	48	सार्थक

यह प्राक्कल्पित किया गया कि बी0एड0 स्तर पर अध्ययनरत् छात्राध्यापकों के संवेगात्मक बुद्धि का उनके आकांक्षा स्तर के मध्य कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है। तालिका 1 से स्पष्ट है कि बी0एड0 स्तर पर अध्ययनरत् छात्राध्यापकों के संवेगात्मक बुद्धि का उनके आकांक्षा स्तर के मध्य सहसम्बन्ध गुणांक का मान 0.3992 है जो 48 स्वतंत्र्यांश के लिए 0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु आवश्यक मान 0.273 से अधिक है।

यह मान 0.05 स्तर पर सार्थक है व शून्य परिकल्पना अस्वीकार्य है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि बी0एड0 स्तर पर अध्ययनरत् छात्राध्यापकों के संवेगात्मक बुद्धि का उनके आकांक्षा स्तर के मध्य सार्थक सहसम्बन्ध है।

उद्देश्य–2 बी0एड0 स्तर पर अध्ययनरत् पुरुष छात्राध्यापकों के संवेगात्मक बुद्धि का उनके आकांक्षा स्तर के मध्य सहसम्बन्ध का अध्ययन करना।

तालिका 2

बी0एड0 स्तर पर अध्ययनरत् पुरुष छात्राध्यापकों के संवेगात्मक बुद्धि का उनके आकांक्षा स्तर के मध्य सहसम्बन्ध

क्रमांक	बी0एड0 स्तर	सहसम्बन्ध गुणांक का मान	स्वतंत्र्यांश (N-2)	सार्थकता स्तर
1.	पुरूष छात्राध्यापक	0.4226	23	सार्थक

यह प्राक्कल्पित किया गया कि बी0एड0 स्तर पर अध्ययनरत् पुरुष छात्राध्यापकों के संवेगात्मक बुद्धि का उनके आकांक्षा स्तर के मध्य कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है। तालिका 2 से स्पष्ट है कि बी0एड0 स्तर पर अध्ययनरत् पुरुष छात्राध्यापकों के संवेगात्मक बुद्धि का उनके आकांक्षा स्तर के मध्य सहसम्बन्ध गुणांक का मान 0.4226 है। जो 23 स्वतंत्र्यांश के लिए 0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु आवश्यक मान 0.396 से अधिक है। यह मान 0.05 स्तर पर सार्थक है व शून्य परिकल्पना अस्वीकार्य है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि बी0एड0 स्तर पर अध्ययनरत् पुरुष छात्राध्यापकों के संवेगात्मक बुद्धि का उनके आकांक्षा स्तर के मध्य सार्थक सहसम्बन्ध है।

उद्देश्य–3 बी0एड0 स्तर पर अध्ययनरत् महिला छात्राध्यापकों की संवेगात्मक बुद्धि का उनके आकांक्षा स्तर के मध्य सहसम्बन्ध का अध्ययन करना।

तालिका 3

बी0एड0 स्तर पर अध्ययनरत् महिला छात्राध्यापकों की संवेगात्मक बुद्धि का उनके आकांक्षा स्तर के मध्य सहसम्बन्ध

क्रमांक	बी0एड0 स्तर	सहसम्बन्ध गुणांक का मान	स्वतंत्र्यांश (N-2)	सार्थकता स्तर

1.	महिला छात्राध्यापक	0.4129	48	सार्थक

यह प्राक्कल्पित किया गया कि बी0एड0 स्तर पर अध्ययनरत् महिला छात्राध्यापकों की संवेगात्मक बुद्धि का उनके आकांक्षा स्तर के मध्य कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है। तालिका 2 से स्पष्ट है कि बी0एड0 स्तर पर अध्ययनरत् महिला छात्राध्यापकों की संवेगात्मक बुद्धि का उनके आकांक्षा स्तर के मध्य सहसम्बन्ध गुणांक का मान 0.4226 है जो 23 स्वतंत्र्यांश के लिए 0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु आवश्यक मान 0.396 से अधिक है। यह मान 0.05 स्तर पर सार्थक है व शून्य परिकल्पना अस्वीकार्य है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि बी0एड0 स्तर पर अध्ययनरत् महिला छात्राध्यापकों की संवेगात्मक बुद्धि का उनके आकांक्षा स्तर के मध्य सार्थक सहसम्बन्ध है।

निष्कर्ष–

प्रस्तुत अध्ययन में निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए–

- बी0एड0 स्तर पर अध्ययनरत् छात्राध्यापकों के संवेगात्मक बुद्धि का उनके आकांक्षा स्तर के मध्य सार्थक सहसम्बन्ध है।
- बी0एड0 स्तर पर अध्ययनरत् पुरूष छात्राध्यापकों के संवेगात्मक बुद्धि का उनके आकांक्षा स्तर के मध्य सार्थक सहसम्बन्ध है।
- बी0एड्0 स्तर पर अध्ययनरत् महिला छात्राध्यापकों की संवेगात्मक बुद्धि का उनके आकांक्षा स्तर के मध्य सार्थक सहसम्बन्ध है।

अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि बी0एड्0 स्तर पर अध्ययनरत् छात्राध्यापकों के संवेगात्मक बुद्धि का उनके आकांक्षा स्तर के मध्य सम्बन्ध पाया गया अर्थात संवेगात्मक बुद्धि के साथ उनके आकांक्षा स्तर में वृद्धि पायी गयी।

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

- सुभ्रामण्यम के. एण्ड निवासराव, के.श्री., जनरल ऑफ कम्युनिटी गाइडेन्स एण्ड रिसर्च, जुलाई 2008, वैल्यूम–25, नं0 2
- पाण्डा, सुमन्त कुमार, जनरल ऑफ कम्युनिटी गाइडेन्स एण्ड रिसर्च, वैल्यूम–26, नं0 2, पृ0 122–136, जुलाई–2009
- एम.आर. डा. उमा देवी, एडूट्रेक्स, अगस्त 2009, वैल्यूम–8, नं0 12
- आर. सहाय मेरी एण्ड सैम्युवल मनोरमा, एडूट्रेक्स, अगस्त 2010, वैल्यूम–9, नं0 12
- जाधव, वन्दना वी. तथा पाटिल, अजय कुमार, एजूक्स, मार्च 2011, वैल्यूम–10, नं.7

ग्राम से नगर को प्रवास : इलाहाबाद का एक केस अध्ययन

रेनू यादव

शोधछात्रा (भूगोल)
नेहरू ग्राम भारती डीम्ड टू बी यूनिवर्सिटी,
कोटवा, जमुनीपुर, इलाहाबाद।

मानव समूहों द्वारा, अपेक्षाकृत ज्यादा समयावधि के लिए निवास के लिए निवास में परिवर्तन 'प्रवास' कहलाता है। पूरे भारत में दिशा के आधार पर प्रवास के प्रकारों (ग्राम से ग्राम, ग्राम से नगर, नगर से ग्राम, नगर से नगर में) ग्राम से नगर प्रवास ज्यादा मात्रा में देखा जाता है।

इलाहाबाद नगर गंगा–यमुना के द्वाबा में स्थित है जिसका क्षेत्रफल लगभग 85 वर्ग किमी0 है परन्तु इसका अवैधानिक विस्तार और बढ़ गया है। नगर के पुराने बसे क्षेत्र में सिविल लाइन, कैन्टोनमेण्ट, रेलवे कालोनी, विश्वविद्यालय है एवं प्रशासकीय क्षेत्र ब्रिटिश काल में विकसित हुये। पवित्र संगम, विश्वविद्यालय, उच्च न्यायालय एवं प्रान्तीय सरकार के अनेक कार्यालयों के कारण इलाहाबाद सांस्कृतिक, शैक्षणिक, प्रशासकीय शहर है।

आबादी की दृष्टि से एवं साथ ही ग्रामीण आबादी की दृष्टि से इलाहाबाद उ0प्र0 का नम्बर '1' का शहर है। जिसका एक बहुत बड़ा कारण गांवों से जनसंख्या का इलाहाबाद शहर में प्रवास है। जिसके आर्थिक (रोजगार, व्यवसाय), शैक्षिक, सांस्कृतिक (पर्यटन तीर्थ), प्रशासनिक अनेक कारण है।

गाँव से नगर की ओर जनसंख्या के अनियन्त्रित प्रवास से शहर में स्लम विकसित हो रहे हैं। समीपवर्ती ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि का आकर्षण कम हो रहा है। साथ ही गाँवों में बुजुर्ग लोगों में एकाकीपन महसूस हो रहा है। इस प्रकार ग्राम से नगर को प्रवास अनेक समस्याओं को जन्म दे रहा है।

उक्त विषय पर पी0 काम्पटन, जे0ए0 जैक्शन, प्रायोर आर0एल0 सिंह (Slum of Allahabad), आर0सी0 चॉदना (Introduction to Population Geography एवं)Triwartha : A Geography of population : World Pattern) आदि के कार्य सराहनीय हैं। आर0एल0 सिंह ने वाराणसी जिले पर अपना काम किया। निजामउद्दीन ने इलाहाबाद जिले पर काम किया है। डा0 कुमकुम राय ने भी इलाहाबाद में काम किया है।

उद्देश्य एवं प्रयोजन (Aims & objectives)

1. सर्वप्रथम यह ज्ञात करना कि प्रवास का यह प्रारूप नकारात्मक या सकारात्मक किस प्रकार का प्रभाव छोड़ रहा है।

2. चूँकि ग्राम से नगर को प्रवास प्रायः नकारात्मक प्रभाव ज्यादा छोड़ रहा है अतः इन प्रभावों को न्यून करने के उपाय सुझाना।
3. साथ ही ग्रामों में आकर्षण पैदा करके इस समस्या की जड़ को ही खतम करना।
4. ग्राम चूँकि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है एवं देश की लगभग 68 प्रतिशत जनता गाँवों में रहती है, अतः गावों के स्थानीय संसाधनों का इस प्रकार का समावेशी, पर्यावरण मैत्री विकास करना ताकि गाँवों के परिवेश को ज्यादा खुशनुमा बनाया जा सके।

I. ग्राम से नगर को प्रवास नगर पर अनावश्यक दबाव डालता है–

गाँवों से नगरों की ओर होने वाले प्रवास एवं इससे नगरों की अवसंरचना, समाज पर दबाव का अवलोकन किया जाता है। इसे निम्नलिखित रूपों में देखा जा सकता है।

(i) आवास पर दबाव– नगरों की ओर गाँवों से लोगों के प्रवास से नगरों में आवासीय समस्यायें जैसे–भूमि मूल्य का आकाश छूना, स्लम का विकसित होना आदि उत्पन्न हो रही है।

(ii) बिजली, पानी, सड़क की समस्या– नगर में ग्रामीण क्षेत्रों में अन्धाधुन्ध प्रवास से शहर बिजली कटौती, कई घण्टों तक पानी सप्लाई बाधित रहना एवं सड़कों पर ट्रैफिक जाम होने जैसे समस्याओं से अक्सर जूझता है।

(iii) रोजगार की अपर्याप्तता–वैसे शहर में रोजगार के अवसरों की भरमार होती है, परन्तु जिस मात्रा में प्रवास धारा आ रही है, शहर उतना रोजगार देने में समर्थ नहीं है। इससे युवक चोरी, छिनैती आदि में शामिल हो रहे हैं।

लोगों द्वारा, अपेक्षाकृत ज्यादा समयावधि के लिये निवास स्थान में परिवर्तन 'प्रवास' कहलाता है प्रवास सदैव लिंग–आयु चयनात्मक होता है। प्रायः युवा ही प्रवास करता है जिससे गांवों में वृद्धों में एकाकीपन हावी हो रहा है। बच्चे क्योंकि तीसरी पीढ़ी के होते हैं जो वृद्धों की बातों को या तो समझ नहीं पाते या समझने की कोशिश नहीं करते, यह पीढ़ीगत अन्तराल वृद्धों के लिये कष्टप्रद है।

समाज पर दबाव–निम्न रूपों में दिख रहा है–

1. चूँकि गाँवों से आने वालों की पहचान उतनी आसान नहीं एवं शहर में इस प्रकार विभिन्न जातियों, वर्गों, समूहों, धर्मों के लोगों के होने से अनेक बार टकराहट तो कई बार चोरी, डकैती, छिनैती, बलात्कार, व्यभिचार जैसी कुप्रवृत्तियाँ घटित होती रहती हैं।
2. मेल–मिलाप में एक दीवार भी देखी जा रही है। जो शहर के मूल निवासी हैं, उनके साथ अप्रवासियों के मध्य एक विभाजन मिलता है, अप्रवासी हीनता से ग्रस्त देखे जाते हैं। वैवाहिक सम्बन्ध प्रायः मूल निवासियों के अप्रवासियों से नहीं के बराबर होना एक उदाहरण है।
3. चूँकि अप्रवासियों की आर्थिक स्थिति प्रायः उतनी सुदृढ़ नहीं होती जितनी कि शहर के मूल निवासियों की, अतएव शहर की मूलभूत सुविधाओं जैसे शिक्षण संस्थाओं (खासकर कान्वेन्ट), बड़े–बड़े मॉल, रेस्त्रां, होटल आदि का आनन्द अप्रवासी कम उठा पाते हैं।

उपर्युक्त प्रकार से ग्राम से नगर को प्रवास शहर पर दबाव डालता है।

II. ग्राम से नगर को प्रवास से गाँवों में कृषि विकास धीमा पड़ जाता है

ग्रामों से नगरों को होने वाला प्रवास गाँवों में कृषि के लिये नकारात्मक प्रभाव वाला है जिसे निम्नलिखित रूपों में व्यक्त किया जा सकता है–

1. नगर को आने वाले अप्रवासी चूँकि युवा एवं श्रमिक होते हैं, इनके गाँव छोड़ने से गाँव में श्रम शक्ति की कमी हो जाती है जिससे कृषि एक प्रकार से लावारिस हो जाती है, भगवान भरासे ही आगे बढ़ती है।
2. युवा सबसे महत्वपूर्ण मानव पूँजी है जिसके असीम संभावनायें होती है जिसे वे गाँवों को नहीं दे पाते अतः गाँवों में इसका असर फसली प्रारूपों पर भी देखा जाता है, परिवार के बच्चे, वृद्ध निर्वहनीय कृषि को तवज्जो देते हैं जैसे गेहूँ, चावल, दालें आदि। कृषि का वाणिज्यीकरण हतोत्साहित होता है।
3. कृषि का पूर्ण विभव प्राप्त न हो पाना–
   भारत गाँवों का देश है जिसकी अर्थव्यवस्था मूलतः कृषि पर आधारित है एवं प्रकृति ने भारत को इस क्षेत्र में असीमित विभव प्रदान किया है, परन्तु ग्राम से नगर की प्रवास की प्रवृत्ति से भी खेती का यह विभव यथोचित हासिल नहीं हो पा रहा है।
4. कहते हैं कि पहले खेती में श्रम तन मन से लगा था, हरी खादों आदि का भरपूर प्रयोग होता था। कृषि शस्य श्यामला थी, कृषि को देख किसान का हृदय अत्यन्त अभिभूत होता था, परन्तु अब वैसी बात नहीं रही। किसान को सम्मानित का दर्जा था। मैथिलीशरण गुप्त की रचना में कृषक को 'ग्रामदेवता' कहा गया है। इस प्रकार उपर्युक्त प्रवास प्रवृत्ति से गाँव की खेती उपेक्षित हो रही है।

III. ग्राम से नगर को प्रवास से गाँवों में वृद्धों में एकाकीपन की समस्या हो रही है– प्रवास सदैव लिंग–आयु चयनात्मक होता है। प्रायः युवा ही प्रवास करता है जिससे गाँवों में वृद्धों में एकाकीपन हावी हो रहा है। बच्चे क्योंकि तीसरी पीढ़ी के होते हैं जो वृद्धों की बातों को या तो समझ नहीं पाते या समझने की कोशिश नहीं करते, यह पीढ़ीगत अन्तराल वृद्धों के लिये कष्टप्रद है।

उक्त समस्या को स्पष्ट करने के लिये प्राथमिक एवं द्वितीयक आँकड़ा का प्रयोग किया है। प्राथमिक आँकड़ा में प्रश्नावली, पर्यवेक्षण, साक्षात्कार का प्रयोग किया है एवं द्वितीयक आँकड़ा के अन्तर्गत मैंने प्रकाशित एवं अप्रकाशित विभिन्न विभागों के आँकड़े, थीसिस, जर्नल, पत्र–पत्रिकाओं, समाचार पत्र, प्रतियोगी पुस्तकों का सहारा लिया है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

1. L.R. Singh (Slums of Allahabad : Socio-Economic Profile)
2. R.C. Chandna (Introduction of Population Geopgraphy)
3. एस0डी0 कौशिक– मानव भूगोल के सिद्धान्त
4. Triwartha (A Geography of Population : World Pattern)

रक्त रसायन शर्करा स्तर का अध्यापकों पर प्रभाव– एक अध्ययन

डॉ० अरूण कुमार मिश्र

सहायक प्रवक्ता
फोर्ट इंस्टीट्यूट ऑफ टैक्नोलॉजी
मवाना रोड, मेरठ

विद्यार्थी राष्ट्र की सम्पत्ति और उसके भावी कर्णधार होते हैं। उनके मानसिक, शारीरिक, बौद्धिक, नैतिक और आध्यात्मिक आदि सभी प्रकार के निर्माण एवं विकास का उत्तरदायित्व अध्यापक पर होता है। छात्र बगीचे के पौधे के समान है, अध्यापक माली है, जो उस पौधे को सींचते हैं, उनकी काट छांट करते हैं तथा अन्य सब प्रकार से उनकी देखभाल करते हैं और इस प्रकार उन्हें फलने योग्य बनाने में अपना योगदान देते हैं। अनेक व्यक्तियों का निर्माण करने वाला अध्यापक केवल एक व्यक्तिन होकर अपने आप में संस्था होता है।

शैल्डन ई0 डेविस शास्त्री ने कहा है कि ''किसी भी विद्यालय का महत्व अध्यापक पर निर्भर करता है।''

श्री नैल्सन एल0 बासिंग ने भी इसी प्रकार की बात कही कि ''शिक्षा की किसी भी योजना में अध्यापक का केन्द्रीय स्थान होता है। जिस अध्यापक के विद्यार्थी उसके अध्यापन कार्य अथवा शिक्षण से सन्तुष्ट हैं, उसने मानों सब कुछ पा लिया है। इसके लिए सबसे बड़ी आवश्यकता है कि अध्यापक को अपने विषय का पूर्ण ज्ञान हो, जिस विषय को वह पढ़ाता है, उस पर उसकी पकड़ हो। यह तभी सम्भव है, अब अध्यापक निरन्तर स्वस्थ रहे उसे किसी प्रकार का शारीरिक कष्ट न हो।

रायबर्न नामक शिक्षा शास्त्री ने लिखा है कि – ''अच्छा अध्यापक अपने ज्ञान में वृद्धि करने के लिए सदैव सचेष्ट रहता है, वह अपने ज्ञान को नया व आधुनिक रखने के लिए प्रयत्नशील रहता है।'' कोलम्बस के अनुसार ''अध्यापक एक ऐसा अद्वितीय मानव है, जिसने स्वयं एवं समाज के दूसरे व्यक्तियों को शिक्षित करने के कार्यों की सिद्धि के लिए अपना प्रयोग प्रभावोत्मक एवं कुशलतापूर्वक करना सीखा है।''

अध्यापक में नियमित अध्ययन की आदत होनी चाहिए। राष्ट्र निर्माण में अध्यापक का महत्वपूर्ण स्थान है। राष्ट्र की शैक्षिक, राजनैतिक, धार्मिक और सामाजिक प्रगति अध्यापक पर निर्भर है। अतः अध्यापकों की स्वास्थ्य दिनचर्या का प्रभाव छात्र एवं समाज पर पड़ता है।

प्राचीनकाल में शिक्षा सबके लिए न होकर वर्ग विशेष के लिए थी, उसका स्थान आज की तरह विद्यालय न होकर गुरूकुल थे। वहां गुरू (अध्यापक) अपने परिवार तथा विद्यार्थियों के साथ रहता था। उसका समाज से सीधा सम्बन्ध नहीं था। उसकी आवश्यकताएं सीमित थी। इसलिए उसे मानसिक स्वास्थ्य जैसी कोई समस्या नही थी। तनाव मुक्त वातावरण में रहने,

सादा भोजन करने से उसे उच्च रक्त चाप या रक्त की बीमारी नहीं थी। वह निश्चिन्त होकर शिक्षण कार्य करता था तथा गुरूकुल की देखभाल करता था।

वैदिक शिक्षा व्यवस्था के विपरीत स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरान्त भारत में सभी वर्गो के लिए शिक्षा के द्वार खुल गये। सभी को शिक्षित करने के लिए इतने गुरूकुल नहीं बनाये जा सकते। छात्र कुछ घण्टे विद्यालय में बिताकर वापस अपने घर आ जाता है। अध्यापक भी उन्हीं कुछ घण्टों के लिए विद्यालय जाते हैं। गुरूकुल में प्राथमिक से लेकर उच्च स्तर तक की शिक्षा एक ही गुरूकुल में दी जाती थी। जबकि बदले हुए स्वतंत्रोत्तर परिवेश में शिक्षा को तीन स्तरों (प्राथमिक, माध्यमिक एवं उच्च) में बदल दिया गया। प्राथमिक स्तर के बाद छात्र को माध्यमिक और माध्यमिक के बाद छात्र को उच्च शिक्षा हेतु महाविद्यालयों में प्रवेश लेना होता है। अध्यापक 6 घण्टे के अतिरिक्त सम्पूर्ण समय अपने घर तथा समाज में व्यतीत करता है।

अध्यापक एक ऐसा अद्वितीय मानव है, जिसने स्वयं एवं समाज के दूसरे व्यक्तियों को शिक्षित करने के कार्यों की सिद्धि के लिए अपना प्रयोग प्रभावोत्मक एवं कुशलतापूर्वक करना सीखा है। अच्छा अध्यापक अपने ज्ञान में वृद्धि करने के लिए सदैव सचेष्ट रहता है, वह अपने ज्ञान को नया व आधुनिक रखने के लिए प्रयत्नशील रहता है।

अध्यापक में नियमित अध्ययन की आदत होनी चाहिए। राष्ट्र निर्माण में अध्यापक का महत्वपूर्ण स्थान है। राष्ट्र की शैक्षिक, राजनैतिक, धार्मिक और सामाजिक प्रगति अध्यापक पर निर्भर है। अतः अध्यापकों की स्वास्थ्य दिनचर्या का प्रभाव छात्र एवं समाज पर पड़ता है।

स्वतन्त्रता प्राप्ति से 20वीं शताब्दी की समाप्ति तक भारत की अर्थव्यवस्था मुख्यतः कृषि उद्योग एवं लघु उद्योगों पर आधारित थी लेकिन 21वीं शताब्दी के कुछ वर्ष पूर्व से ही भारत में वैश्वीकरण का प्रारम्भ हो चुका है। देश के अधिकांश लोग संचार क्रान्ति से प्रभावित हुए विश्व अथवा देश के किसी कोने में घटित होने वाली घटना से लोग मिनटों में अवगत हो रहे हैं। लोगों का रहन–सहन खानपान रीति रिवाज सब पर दूरदर्शन का प्रभाव पड़ने लगा।

अध्यापक भी इस प्रभाव से अछूता न रहा। विद्यालयों में शिक्षा का स्तर गिरने लगा। माध्यमिक शिक्षा जिसे शिक्षा की रीढ़ कहा जाता है, की गुणवत्ता में कमी आने लगी। शोधार्थी ने शिक्षाशास्त्र का छात्र होने के नाते इसके कारणों को जानने का प्रयास किया। उसने अपने पीएच0डी0 शोध हेतु माध्यमिक शिक्षकों के समायोजन, मानसिक स्वास्थ्य तथा शिक्षण कौशल पर रक्त शर्करा स्तर के प्रभाव का अध्ययन करने का निश्चय किया। चूंकि भारत में मधुमेह बड़ी तेजी से बढ़ रहा है, 40 साल से ऊपर के अधिकांश लोग इससे प्रभावित हो रहे हैं तथा अध्यापक भी इससे अछूता नही है इसलिए उसने निम्नलिखित शोध प्रश्नों का उत्तर अपने अध्ययन के माध्यम से जानने का प्रयास किया?

कितने प्रतिशत माध्यमिक अध्यापक उच्च रक्त शर्करा से ग्रसित हैं?

अध्ययन के उद्देश्यः

माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत अध्यापकों का उनके रक्त में उपस्थित शर्करा के स्तर के आधार पर तीन समूहों उच्च, सामान्य तथा निम्न में वर्गीकरण करना।

शोध विधिः

शोध अध्ययन में शोध की सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया।

शोध जनसंख्याः

मेरठ शैक्षिक मण्डल में स्थित माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत समस्त अध्यापक अध्यापिका प्रस्तावित शोध अध्ययन की जनसंख्या रही।

शोध न्यादर्श का आकारः

शोध अध्ययन के न्यादर्श में शोध जनसंख्या की चार सौ (400) इकाइयों को सम्मिलित किया गया।

न्यादर्श चयन की विधिः

शोध जनसंख्या में से शोध इकाइयों के चयन सरल यादृच्छिक न्यादर्शन विधि का प्रयोग किया गया।

शोध उपकरणः

शोध आंकड़ों के एकत्रीकरण हेतु निम्नलिखित शोध उपकरण प्रयुक्त किये गये–

अध्यापकों के रक्त में शर्करा के मात्रा के मापन के लिए डिजिटल ऑटोमैटिक शर्करामापी उपकरण का प्रयोग किया गया।

माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत अध्यापकों का उनके रक्त में शर्करा स्तर के आधार पर तीन समूहों, उच्च, सामान्य तथा निम्न रक्त शर्करा समूहों में वर्गीकरण

सारणी संख्या 4.1

कुल संख्या	उच्च रक्त शर्करा समूह		सामान्य रक्त शर्करा समूह		निम्न रक्त शर्करा समूह	
	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
400	144	36	194	48.5	62	15.5

अर्थापनः सारणी संख्या 4.1 में माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत अध्यापकों के रक्त में उपस्थित शर्करा की मात्रा से सम्बन्धित आंकड़ों के आधार पर उनका उच्च, सामान्य तथा निम्न रक्त शर्करा समूह में वर्गीकरण करके प्रत्येक वर्ग में अध्यापकों की संख्या तथा प्रतिशत को भी प्रदर्शित किया गया है। प्रतिदर्श में 140उहध्कस से अधिक रक्त शर्करा वाले अध्यापकों को उच्च रक्त शर्करा समूह में प्रदर्शित किया गया है। इस समूह के माध्यमिक अध्यापकों की 400 के प्रतिदर्श में उच्च रक्त शर्करा वाले अध्यापकों की संख्या 144 है जो कुल अध्यापकों का 36 प्रतिशत है। इसका अर्थ यह हुआ कि माध्यमिक शिक्षा में 30 से 62 वर्ष की उम्र के अध्यापकों में 36 प्रतिशत अध्यापक मधुमेह के रोगी हैं। 194 अध्यापक जो सम्पूर्ण का 48.5 प्रतिशत हैं सामान्य रक्त शर्करा समूह निर्मित करते हैं। सरल शब्दों में कहा जाता है कि लगभग 50 प्रतिशत अध्यापक मधुमेह से मुक्त हैं। इसी प्रकार माध्यमिक अध्यापकों के प्रतिदर्श में 62 अध्यापक जो प्रतिदर्श की कुल संख्या का 15.5 प्रतिशत हैं का रक्त शर्करा स्तर 80 से कम है। इन अध्यापकों में या तो अधिक इन्सुलीन का निर्माण होता है या ये ऐसा भोजन करते हैं जिसमें

कम शर्करा पायी जाती है। इस आधार पर यह भी निष्कर्ष निकलता है कि प्रतिदर्श के 36 + 15.5 अर्थात 51.5 प्रतिशत अध्यापक या तो मधुमेह से हैं या निम्न रक्त शर्करा के रोगी है।

शोध निष्कर्षः

माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत अध्यापकों में 50 प्रतिशत से कम अध्यापक सामान्य रक्त शर्करा के पाये गये, जबकि 50 प्रतिशत से ज्यादा अध्यापक या तो उच्च शर्करा वाले या निम्न रक्त शर्करा के रोगी पाये गये।

शोध परिणामों का अनुप्रयोगः

शिक्षा स्वास्थ्य आज के समय में अनुसंधान की महत्वपूर्ण समस्या है। इस समस्या का प्रमुख कारण शिक्षकों पर तरह–तरह के आरोप हैं। जैसे शिक्षक अपना कार्य सही प्रकार से नहीं करते, अपने छात्रों को शैक्षिक संतुष्टि नहीं दे पाते, छात्रों में अनुशासनहीनता का बढ़ना, शिक्षा के प्रति अरूचि आदि हैं। इन सब समस्याओं को दूर करने के लिए एक स्वास्थ्य शिक्षक का होना बहुत जरूरी है जो अपने काम को रूचि के साथ करे और कार्य के प्रति निष्ठावान हो। यदि शिक्षक अपने कार्य के प्रति प्रतिबद्ध और संतुष्ट है तो वह अपना कार्य सही प्रकार से कर सकता है। वर्तमान अध्ययन में शोधकर्ता ने माध्यमिक विद्यालयों के अध्यापकों के रक्त में उपस्थित शर्करा (ब्लड शुगर) की मात्रा का उनकी शिक्षण कौशल, उनका मानसिक स्वास्थ्य तथा समायोजन पर प्रभाव को जाँचने का प्रयास किया है। प्रस्तुत शोध अध्ययन निम्न क्षेत्रों में बहुत उपयोगी होगी–

1. **शोधार्थियों के लिए अनुप्रयोगः** प्रस्तुत शोध परिणाम शिक्षाशास्त्र तथा चिकित्सा के शोधार्थियों के लिए उपयोगी हो सकते हैं। प्रस्तुत अध्ययन के परिणाम का प्रयोग अग्रिम अनुसंधान के लिए मूल आंकड़ों के रूप में किया जा सकता है। अध्ययन के परिणामों की सत्यता की जाँच के लिए अध्ययन किये जा सकते हैं। शोध का एक परिणाम बताता है कि रक्त शर्करा के स्तर का अध्यापकों के शिक्षण कौशल पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता जबकि अध्यापकों के मानसिक स्वास्थ्य तथा समायोजन पर रक्त शर्करा का प्रभाव पड़ता है। शिक्षा तथा चिकित्सा के शोधार्थी इनके कारणों को जाँचने का प्रयास कर सकते हैं।
2. **शिक्षकों के लिए अनुप्रयोगः** प्रस्तुत शोध के परिणाम अध्यापकों में यह भ्रान्तियां दूर करेगा कि रक्त में उपस्थित शर्करा की मात्रा उनके शिक्षण कौशल को प्रभावित करता है। यह परिणाम शिक्षकों में आत्मविश्वास बढ़ाने का कार्य करेगा। शोध का एक परिणाम बताता है कि रक्त रसायन स्तर का अध्यापकों के मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव पड़ता है तथा महिला अध्यापकों के समायोजन पर पड़ता है। शोध के इस परिणाम का ज्ञान अध्यापकों के लिए पृष्ठ पोषण का काम करेगा मधुमेह के रोगी अपने मानसिक स्वास्थ्य के प्रति सावधान रहेंगे तथा महिला अध्यापिकाएं अपने समायोजन में सावधानी बरत सकती हैं।
3. **प्राचार्यों एवं प्रबन्धकों के लिएः** शोध अध्ययन का परिणाम शिक्षण संस्थानों के प्राचार्यों एवं प्रबन्धकों के लिए उपयोगी हो सकता है। शोध अध्ययन के एक परिणाम के अनुसार ''रक्त शर्करा स्तर का प्रभाव अध्यापकों एवं अध्यापिकाओं के मानसिक स्वास्थ्य तथा समायोजन पर पड़ता है। प्रबन्धक एवं प्राचार्य अध्यापकों के कार्य वितरण में इसका ध्यान रख सकते

हैं। प्राचार्य एवं प्रबन्धक ऐसे अध्यापकों के मानसिक स्वास्थ्य तथा समायोजन हेतु कुछ उपाय भी कर सकते हैं।

4. **निर्देशन एवं परामर्शदाताओं के लिए अनुप्रयोगः** निर्देशन एवं परामर्शदाता शोध परिणामों का प्रयोग अन्य अध्यापकों के निर्देशन एवं परामर्श में कर सकता है। वह इस अध्ययन के आधार पर उन्हें सलाह दे सकता है कि शिक्षण कौशल पर रक्त शर्करा के स्तर का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। शोध परिणामों के आधार पर समायोजन सम्बन्धी समस्या पर अध्यापक–अध्यापिकाओं को उपयोगी परामर्श दे सकते हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

- अग्रवाल, वाई0पी0 (1988) स्टेटिस्टिकल मैथड्स, स्टर्लिग पब्लिशर्स प्रा0लि0, नई दिल्ली
- अग्रवाल, वाई0पी0 (1988) बैटर सैम्पनिंग कॉन्सेप्ट टैक्नीक एण्ड इवेल्यूएशन, स्टर्लिग पब्लिशर्स प्रा0लि0, नई दिल्ली
- अग्रवाल, जे0सी0 (1966) एजुकेशनल रिसर्च ऑन इन्ट्रोडक्शन, पी0के0 प्रिन्टर्स, नई दिल्ली। बैस्ट डब्लयू0 जॉन (1989) रिसर्च इन एजुकेशन, प्रिन्टिस हॉल ऑफ इण्डिया, नइ
- कौल, लोकेश (2005) मैथोडोलोजी ऑफ एजुकेशन रिसर्च, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा0लि0, नई दिल्ली।
- कुमार सतेन्द्र एण्ड थिरसन, टी0वी0 (1979) इफैक्ट ऑफ फीडबैक अपऑन दा टीचिंग लीवलीनैन एण्ड रिकोगनाइजिंग अटैण्डिंग बिहेवियर, इण्डियन एजुकेशनल रिव्यू।

दूरस्थ शिक्षा के बदलते परिप्रेक्ष में सूचना एवं संचार तकनीकी की भूमिका

साधना त्रिपाठी

प्रवक्ता शिक्षक–शिक्षा संकाय
नेहरू ग्राम भारती डीम्ड टू बी यूनिवर्सिटी,
इलाहाबाद

परिवर्तन प्रकृति का नियम है कि संसार प्रगतिशील है जबसे पृथ्वी पर जीवन की शुरूआत हुई है इसे लगातार व निरंतर प्रगति होती चली आ रही है। मनुष्य के जीवन के लगभग सभी पक्षों में अभूतपूर्व बदलाव देखने को मिलता है। इस बदलाव का श्रेय निश्चित रूप से सूचना एवं जनसंचार तकनीकी को दिया जाता है। जिसके कारण आज जीवन ही नहीं अपितु शिक्षाा का कोई भी क्षेत्र इस परिवर्तन से अछूता नहीं है। निरंतर ज्ञान के एवं जनसंचार तकनीकी ने शिक्षा को इस प्रकार से केन्द्रीकृत किया है कि जिसमें इसकी सहायता से शिक्षा का उचित एवं अत्यधिक प्रचार व प्रसार किया जा सके। इस नवीनतम वैज्ञानिक युग में समाज व शिक्षा के वैश्वीकरण हेतु शिक्षा व मानव जीवन में सूचना एवं जनसंचार (प्रोद्योगिकी) तकनीक का उदय हुआ। जिनकी सहायता से सभी विषयों में ज्ञान का संचार व ज्ञान का प्रचार–प्रसार करना सम्भव हुआ। यह माध्यम परम्परागत औपचारिक शिक्षण संस्थानों में प्रवेश न पा सकने वाले छात्र–छात्रों के लिये शिक्षा का एक वैकल्पिक आधार है। दूरस्थ शिक्षा वैधानिक दायित्वों शैक्षिक अवसरो की समानता के भारतीय समप्रेस्थ की पूर्ति बहुत ही सहायक है। देश की साक्षारता वृद्धि के साथ ही उच्च शिक्षा से लोगों को जोड़ने का कार्य दूरशिक्षा जन शक्ति के निर्माण में का महत्वपूर्ण भूमिका रही है। यह शिक्षा जगत में एक क्रांतिकारी कदम या कहे युग की शुरूआत है।

परिवर्तन संसार में सास्वत प्रकृति का नियम है। संसार प्रगतिशील है पृथ्वी पर जीवन की शुरूआत से लेकर आज तक लगातार व निरंतर प्रगति होती आ रही है। मनुष्य के लगभग जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अभूतपूर्व बदलाव आये है। इस बदलाव का सम्पूर्ण श्रेय सूचना एवं संचार तकनीक को दिया जा सकता है। इसी प्रकार से शिक्षा का क्षेत्र भी इस बदलाव से अछूता नही रहा है। अतः विज्ञान के उदय के कारण शिक्षा की भूमिका और भी महत्वपूर्ण हो गई है। अतः ज्ञान के क्षेत्र मे लगातार विस्तार को ध्यान में रखते हुए विज्ञान एव संचार तकनीकी ने शिक्षा को इस प्रकार से आत्मसात किया है कि जिससे शिक्षा का अधिक से अधिक और उचित प्रचार एवं प्रसार किया जा सके। अतः समाज व शिक्षा के वैश्वीकरण हेतु सूचना एवं जनसंचार प्रोद्योगिकी का उदय हुआ, जिसके कारण सम्पूर्ण क्षेत्र में ज्ञान का प्रसार व प्रचार सम्भव हो सका।

प्रस्तुत शोध पत्र में सूचना एवं जनसंचार प्रोद्योगिकी में जनसामान्य को जन चेतना को जागरूक बनाने हेतु शिक्षा का उपकरण एवं यन्त्र है। जो मानव जीवन को तरासने का कार्य करता है। जैसा कि यह पूर्व में विदित है कि शिक्षा जीवन में मूल्य स्थापित करने का कार्य करता है। यह संयोग की बात ही है कि कोई औनपचारिक और निरोपचारिक या नियमित, व्यक्तिगत और मुक्त या दूरस्थ शिक्षा, शिक्षा को ग्रहण करके अपने लक्ष्य की प्राप्ति करता है।

मनुष्य के जीवन के लगभग सभी पक्षों में अभूतपूर्व बदलाव देखने को मिलता है। इसका श्रेय निश्चित रूप से सूचना एवं जनसंचार तकनीकी को दिया जाता है। जिसके कारण आज जीवन ही नहीं अपितु शिक्षाा का कोई भी क्षेत्र इस परिवर्तन से अछूता नहीं है। निरंतर ज्ञान एवं जनसंचार तकनीकी ने शिक्षा को इस प्रकार से केन्द्रीकृत किया है कि जिसमें इसकी सहायता से शिक्षा का उचित एवं अत्यधिक प्रचार व प्रसार किया जा सके।

प्राचीन काल से ही शिक्षा मानव जीवन का केन्द्र बिन्दु बना रहा है। इसी लिए कहा भी जाता है कि शिक्षा मनुष्य को जन्म से लेकर उसकी मृत्यु तक अनवरत चलने वाली एक प्रक्रिया है। जिसके कारण सारे दुष्टांत उपलब्ध है। शिक्षा के क्षेत्र में कौटिल्य, मनु, प्लेटो, अरस्तु, गार्गी, मैत्रेयी, अपाला, घोषा व लोपामुद्रा इत्यादि विदूषी महिला एवं पुरूषो ने अपना अद्भूत योगदान दिया है।

सूचना एवं संचार तकनीकी दूरस्थ शिक्षा अध्ययन के अनेक प्रकारों में से एक है। जो कक्षा में अपने छात्रों के साथ उपस्थित अध्यापकों के निरन्त तात्कालिक निरिक्षणों से रहित है। जिनमें सभी शिक्षण विधिया समाहित रहती है। जिनमें मुद्रण यांत्रिकी अथवा इलेक्ट्रानिक तकनीकी के द्वारा शिक्षण कार्य किया जाता है। मानव जन्म से ही जीज्ञासू प्रवृति का होता है। वह प्रारम्भ से ही नीत नये ज्ञान की खोज में लगा रहता है। अतः शिक्षा व्यक्ति के जन्म से लेकर उसकी मृत्यु तक सम्पूर्ण जीवन काल तक अनवरत चलने वाली एक प्रक्रिया है। जो किसी भी राष्ट्र अथवा देश के विकास का मूल स्तम्भ है। किसी भी राष्ट्र का विकास शिक्षा व शिक्षित नागरिकों के अभाव में सम्भव नही है। चाहे उस राज्य में कितने ही प्रकृतिक संसाध नही मौजूद क्यों न हो। आज का यह समय निरंतर परिवर्तनशील है, अतः जिसने कदम कदम पर शिक्षा व्यवस्था को प्रभावित किया है। परिणाम स्वरूप जहां पर एक तरफ मानवीय सम्बन्ध में लगातार परिवर्तन परिलच्छित हो रहे है वही पर संचार प्रौद्योगिकी व वैज्ञानिकता के बढ़ते प्रभावों ने शिक्षा की दिशा दोनो में परिवर्तन लाया है। मानव ने विज्ञान एवं प्रोद्योगिकी की सहायता से अपने जीवन में अनेकानेक परिवर्तन लाए है और उसमें उन्नति के शिखर तक पहुचाया है वही पर दूसरी ओर सम्पूर्ण विश्व में ग्लोबलाइजेशन तथा वैश्विकरण व मुक्त अर्थ व्यवस्था का शोर व्याप्त है।

इस सभी परिवर्तनों के परिणाम स्वरूप सबसे बड़ा व अहम सवाल यह है कि चारो ओर सभी क्षेत्रों में लगातार परिवर्तन हो रहे है। इस व्यवस्था में व्यक्ति व मानव जाति का सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक व मानसिक विकास किस सीमा तक हुआ है और यदि सभी क्षेत्रों में सुधार कार्य हुआ है तो वह किस हद तक हुआ है। यदि नहीं हो पाया है तो उसमें सुधार हेतु क्या–2 उपाय किया जा सकता है। इन सभी तमाम उपचार शिक्षा ही दृष्टीगोचर प्रतीत होता है। जिसके माध्यम से प्रत्येक मानव जाति अथवा व्यक्ति के रहन–सहन

इत्यादि को ऊचाँ उठाया जा सकता है। अतः शिक्षा की व्यवसाि इस प्रकार होनी चाहिए कि समाज अथवा राष्ट्र का प्रत्येक छोटे से छोटा व्यक्ति भी उससे लाभान्वित हो सके और वैश्वीकरण की इस महा दौड़ में अपनी एक अलग पहचान बना सके। साथ ही साथ इसमें उसकी सहभागिता का अपनी सनिश्चित भूमिका रख सके।

आज इस युग में पठन–पाठन करने वाले तमाम छात्रों की इस नूतन पीढ़ी में अनेकों प्रकार के परिवर्तनों को देखा जा सकता है। वे स्कूल कालेज भी शिक्षा को तो बेहद आसानी से स्वीकार कर लेते है परन्तु इसके विपरित नियम व कानून से परे दी जाने वाली शिक्षा का आपमान भी कर रहे है या यू कहले कि इस प्रकार दी जाने वाली शिक्षा के बन्धनों की वे आराम से स्वीकार कर पाने में खुद को अक्षम या असहज है। अतः इस दौर में दूरस्थ शिक्षा के माध्यम से विकास की तमाम संभावनाओं की तलाश की जा रही है। अतः दूरस्थ शिक्षा को सफल बनाने में सूचना एवं संचार प्रोद्योगिकी की भूमिका का निहितार्थ भी तलाशा जा रहा है। इसका भरपूर उपयोग करके दूरस्थ शिक्षा की गुणवत्ता तथा उसकी उपयोगिता को स्थापित करने व उसको बनाए रखने जाने का प्रयत्न भी किया जा रहा है। इसके लिए आज शिक्षा के सैद्धान्तिक पाठ्यक्रमों के माया–जाल से बाहर निकल कर एक मजबूत व्यवहारिक तथा जीवन से सम्बन्धित आधार प्रदान करने की अत्यन्त ही आवश्यकता है।

बालक के सर्वागिण विकास अर्थात् उसके शरीरिक मानसिक तथा सामाजिक विकास की ओर ईशारा करती है जिसके लिए पहले से चली आ रही शिक्षा व्यवस्था में कुछ मूल चूल तथा आवश्यक परिवर्तन करनी पडेगी। क्योंकि आज के इस 21 वी शदी कम्प्यूटर विज्ञान तथा सूचना एवं संचार प्रोद्योगिकी के युग में छात्र पूरा ने ढर्रे पर चली आ रही शिक्षा व्यवस्था वैश्विकरण के लक्ष्य को प्राप्त कर पाने पूर्णतः असफल साबित होगा। अतः आज इस 21वी. शताब्दी के युग में प्रवेश करनके की इस परिपारी या अवधारणा को ध्यान में रखते हुए उसके शैक्षिणिक पाठ्यक्रम के शिक्षण विधियां उसके मूल्याकन शिक्षण व्यवस्था तथा उसको दी जाने वाले अनुभवों एवं ज्ञान की एक नया स्वरूप प्रदान करना अति आवश्यक है। जिससे भविष्य में आने वाली तमाम प्रकार की आर्थिक, सामाजिक तथा जीवन से सम्बन्धित समस्याओं का सामना वह सफलता पूर्वक कर सकने में समर्थ हो सके। उच्च शिक्षा में अनवरत विस्तार उत्कृष्ठता और उसमें समावेश सम्बन्धित लक्ष्यों इत्यादि की पूर्ति हेतु दूरस्थ शिक्षा तथा उससे सम्बन्धित शैक्षणिक संस्थानों का विकास अनिवार्य है। उच्च शिक्षा में दाखिला लेने वाले छात्रों से 1/6 से ज्यादा छात्र दूरस्थ शिक्षा से सम्बन्धित है। अतः राष्ट्रीय ज्ञान–आयोग यह सिफारिश करता है कि दूरस्थ शिक्षा के विषयों की तरफ अपना ध्यान केन्द्रित करना पड़ेगा। एक राष्ट्रीय आई सी0 टी0 आधारित तन्त्र संस्था का निर्माण करना तथा इनसे सम्बन्धित तमाम प्रकार की विनियामक संस्थाओं में सुधार कार्य करना, वेबआधारित मुक्त संस्थानों का विकास कार्य करना तथा क्रेडिट बैकों इत्यादि की स्थापना करना। इन सबके साथ ही साथ वैश्विक मुक्त शैक्षिक संस्थानों का लाभ उठाने की ओर एक व्यापक और सकरात्मक ध्यानाकर्षित करने की आवश्यकता है। इस के अर्न्तगत सभी प्रकार के पठन–पाठन सामग्रियों को मुत व अनिवार्य और सभी तक आसानी से प्राप्त है। इसे प्रोत्साहित करना चाहिए। अतः इस प्रकार दूरस्थ शिक्षा के विषय में तमाम अध्ययन करने के पश्चात् हम चाहते है कि भारत ही नही अपितु सम्पूर्ण सम्पूर्ण विश्व के तमाम

विकसित व विकासशील देश भी इस प्रकार के दूरस्थ शिक्षा व्यवस्था को महसूस भी करते है जिसमें फ्रांस, चीन रूस, अमेरिका जैसे विकसित व सुपरपावर देश अग्रणी भूमिका में सक्रिया है। आज 21वी. सदी का आगाज सूचना एवं संचार प्रोद्योगिकी के युग के समय से हुआ है। आज सूचना एवं संचार प्रोद्योगिकी नेताओं प्रशासन कर्त्ताओं व्यापारियों, वैज्ञानिकों डॉक्टर्स, तमाम शोधकत्ताओं तथा अनेकानेक प्रकार से मीडिया से सम्बन्ध रखने वाले व्यक्तियों कलाकारों मनोरंजन तथा नाटक, लेखन सभी क्षेत्रों से सम्बन्ध रखने वाले लोगो का सम्मान व लगाव बड़े ही तीव्र गति से बड़ा है। क्योंकि इससे राष्ट्रीय विकास विश्वविद्यालय वाणिज्य, कृषि तथा स्वास्थ्य शिक्षा राष्ट्रीय एकता अघेण्डता व राष्ट्रसेवा के साथ ही साथ सामाजिक व सांस्कृतिक कार्यों के प्रकार एवं प्रसार में आध्येता ही महत्वपूर्ण योगदान है। भारत एक कृषि प्रधान विशाल जनसंख्या वाला देश है। जहां पर विविधता कदम कदम पर व्यापत है। यह जनसंख्या के मामले में चीन के बाद दूसरा स्थान रखता है। अतः यहां जनसंख्या विस्फोट के साथ–2 ही यहा शिक्षा व्यवस्था के क्षेत्र में भी बहुत गहरा संकट है। सबसे ज्यादा समस्या यहां उच्चशिक्षा के क्षेत्र में व्यापत है। यहां पर 18 से 25 वर्ष आयु वर्ग के लोगो का अनुपात 7 है। वही जो रसिया का लगभग क्या लगभग 1/2 है। अतः यहां पर विश्वविद्यालय व महाविद्यालय की संख्या उसमें उपस्थित शैक्षणिक संस्थानों की दृष्टि से मौजूदा व्यवस्था हमारी जनसंख्या की शैक्षणिक आवश्यकताओं से कही बहुत कम है या अपर्याप्त है। वहीं इस क्षेत्रमें शैक्षणिक सुधार की महति आवश्यकता है। भारत जैसे विकासशील देश में प्रति–व्यक्ति आय अन्य देशों की अपेक्षा काफी कम है। इसके साथ ही साथ शिक्षा भाषा शैली और संस्कृति की बहुतयता है इस स्थिति में सूचना एवं संचार प्रोद्योगिकी एक प्रेरक और मार्गदर्शक की भूमिका निभा सकती है। अतः शिक्षा क्षेत्र में इसकी सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है। भारत जैसे देश में सूचना एवं संचार प्रोद्योगिकी का विस्तार लगातार बढ़ रहा है। मानव संसाधन विकास मंत्रालय (HRD Ministry) ने भी अपने चुनावी एजेण्डे में शिक्षा विस्तार गुणवत्ता को अपना मूल–मंत्र बताया है। इनका मानना है कि सम्पूर्ण दुनिया में अपने इस उदारीकरण एवं भूमंण्डलीय करने में आये बदलाओं को दृष्टिगत रखते हुए शिक्षा के लक्ष्यों तथा उसकी आवश्यकताओं में बदलाव या परिवर्तन आया है।

माननीय प्रधान मंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी की अनुयायी में तमाम प्रकार की ICT से सम्बन्धित योजनाओ को बढ़ावा दिया है और तमाम योजनाओं को सूचना एवं संचार प्रोद्योगिकी से जोड़ा। ताकि प्रत्येक व्यक्ति या छात्र को आनलाइन शिक्षा प्रदान की जा सके। इस बात पर जोर दिया जिसकी सहायता से सब पढ़े सब बड़े के नारे को चरितार्थ करते हुए देश का प्रत्येक बालक व बालिका जो कि कालेज को दहलिज पर अपने कदम रख पाने में असमर्थ है वे सभी घर बैठे ही इन्टरनेट की सहायता से इसके माध्यम से अपनी पढ़ाई पूरी कर सके और देश की प्रगति व इसके निर्माण में अपना स्थान सुनिश्चित कर सके। अतः भारतीय परिपेक्ष्य में शिक्षा को व्यापक स्तर पर लाले में दूरस्थ शिक्षा अग्रणीय भूमिका निभा सकता है। क्योंकि भारत में तमाम जनसंख्या आज भी शिक्षा दीक्षा से कोसे दूर है। अतः जन–जन तक शिक्षा ज्योति रूपी प्रकाश को फैलाने में संचार एवं सूचना प्रोद्योगिकी की महति भूमिका है। दूरस्थ शिक्षा के क्षेत्र में सूचना

सम्प्रेषण तकनीकी के अनेक माध्यम है जिससे सामान्य जन तक शिक्षा आसानी से पहुचाई जा सकती है। उदाहरण स्वरूप रेडियों, प्रसारण, श्रव्य–दृश्य, दूरदर्शन, टेपरिकार्डर, ई–मेल, इलेक्ट्रिक डेस्क, कम्प्यूटर नेटवार्किग, टेली कानफ्रेसिंग, प्रिरेड मुक्त एंव दूरस्थ विश्वविद्यालयों में सूचना एवं संचार तकनीकी की भूमिका मरडिपल्स स्वतः ही स्पष्ट हो जाती है। क्योंकि रेडियों एवं दूरदर्शन के माध्यम से प्रदान की जाती है। इसी कड़ी में इन्टरनेट का प्रारम्भ भारत में 1995 में में हुआ, जिसके माध्यम से छात्र, छात्राओं को शिक्षण सामग्री या शिक्षण कार्यक्रम आसानी से पहुचाया जा सकते है। जिसमें ज्ञानवाणी ज्ञानदर्शन, आदि जैसे नेशनल शैक्षणिक चैनजो का प्रसार किया जाता है। जिसके माध्यम से विषय विशेषज्ञ इससे सम्बन्धित समस्याओं का निवारण इसी के माध्यम से करवाते है। भारतीय उपग्रह In-Set की स्थापना की गई है। जिसके माध्यम से दूरस्थ शिक्षा के प्रसारण में टी0वी0 रेडियों का प्रयोग बेहद सरलता पूर्वक किया जाने लगा है। इसी कड़ी में एक सफलता मोबाइल फोन प्रोद्योगिकी के क्षेत्र में भी प्राप्त हुई है। सन! 2009 में जिसके माध्यम से भी शिक्षा कार्य वेहद आसान हो गया है।

अतः इनके माध्यम से भारत में जनसंख्या को शिक्षा प्रदान की जा सकती है। क्योंकि इसके माध्यम से व्यय–भार भी कम पड़ता है। अतः औपचारिक शिक्षा की अपेक्षा अनौपचारिक इस पर व्यय–भार भी बहुत कम है। अतः इससे हम यह कह सकते है कि निष्कर्ष रूप में कि शिक्षा क्षेत्र में व्याप्त तमाम प्रकार की चुनौतियों का सामना कर पाने में दूरस्थ शिक्षा अवश्य ही सफल हो जायेगी।

अतः दूरस्थ शिक्षा व संचार प्रोद्योगिकी को सफल बनाने के लिए शिक्षा के क्षेत्र में सुचना एवं संचार तकनीकी का व्यापक स्तर का प्रयोग किया जायेगा और के टी.वी., रेडियों, टेपरिकोर्डर, और टेली–कॉफासिग माध्यम से जनसंख्या के बहुत दबाव तथा छात्रों के शैक्षिक सम्पर्क को बढ़ने दिया जायेगा। अतः जहा एक और दूरस्थ शिक्षा की भी एक सीमा है परन्तु अपनी इस कतिपय सीमाओं के बावजूद भी दूरस्थ शिक्षा प्रणाली एक अत्यंत उपयोगी शैक्षणिक प्रणाली है। जो सतत् शिक्षा के क्षेत्र में अपना अभूतपूर्व योगदान प्रदान कर रही है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

1. एस.पी. गुप्ता और अल्का गुप्ता – भारतीय शिक्षा का इतिहास, विकास एवं समस्या।
2. मनीषा दूबे, डॉ0 विभा दूबे – भारत में शिक्षा पद्धति का इतिहास।
3. योजना – समसामयिक पत्रिका।
4. कुरुक्षेत्र – समसामयिक मासिक पत्रिका।
5. गूगल, नेट।
6. पाण्डेय राम शकल – भारत में शिक्षा व्यवस्था का विकास।
   वशिष्ठ के0द सी0।

शिक्षित ग्रामीण, शिक्षित समाज

श्वेता तिवारी

शोध छात्रा (शिक्षाशास्त्र)
शिक्षक–शिक्षा संकाय
नेहरू ग्राम भारती डीम्ड टू बी यूनिवर्सिटी,
इलाहाबाद।

भारत गांवों का देश है जहाँ की 70 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या गांवों में ही निवास करती है। यदि कहा जाए कि भारत की आत्मा गांवों में बसती है तो कोई अतिशयोक्ति नही होगी, निःसंदेह हमारी सभ्यता एवं संस्कृति का पूर्ण और स्वाभाविक विकास ग्रामीण अंचलों में ही हुआ है। भारत के सबसे प्राचीन ग्रंथ ऋग्वेद के अंतर्गत जिस सभ्यता का वर्णन प्राप्त होता है वह ग्रामीण सभ्यता ही थी। ग्रामीण भारत में निवास करने वाली जनसंख्या का मुख्य कार्य कृषि कर्म है। अधिकांश शहरी आवश्यकताओं की पूर्ति गांवों द्वारा ही की जाती है। प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष दोनों रूपों में गांव राष्ट्र के विकास एवं प्रगति में अपना महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करते है। सम्पूर्ण देश में सभी प्रकार के खाद्यान्नों की आपूर्ति गांव ही करते है, गांव में कुछ ऐसे पेड़–पौधे होते हैं जिनसे औषधियाँ तैयार की जाती है।

भारतीय अर्थव्यवस्था में गांवों की अति महत्वपूर्ण भागीदारी को देखते हुए ही "देश को राष्ट्रीय निधि" की संज्ञा प्रदान की गयी है। अतः हमें अपने देश की इस अमूल्य निधि के विकास हेतु प्रयास करने चाहिए।

जीवन के प्रत्येक परिवेश के लिए शिक्षा के लिए शिक्षा एक न्यूनतम सच्चाई है। किसी भी प्रकार के विकास एवं उन्नति के लिए शिक्षा एक महत्वपूर्ण साधन है क्योंकि शिक्षा के स्तर को सुधारने के लिए कई तरीकों से नियम बन रहे है, जैसे शिक्षा गारंटी योजना के अंतर्गत प्रत्येक 1 किमी के क्षेत्र में यदि विद्यालय नहीं है तो उसका निर्माण एवं संचालन सरकार की जिम्मेदारी है। राष्ट्रीय साक्षरता मिशन भी प्रयासरत है, जिसने संचार माध्यमों का उपयोग कर शिक्षा को महत्वपूर्ण बनाया है। अब ग्रामीण इलाकों में भी पढ़ने की लहर चल पड़ी है। बच्चे–बड़े सभी प्रौढ़–शिक्षा कार्यक्रमों से लाभान्वित हो रहे है। सरकार ने एक मजबूत कदम उठाते हुए ग्रामसैट की स्थापना की जिसके अन्तर्गत सुदूर क्षेत्रों में स्थित ग्रामों को भी शिक्षा के नए रूपों से परिचित कराया जा सकता है। प्राथमिक शिक्षा को सुधारने के लिए जो नियम कानून बनाये जाते है तो जहाँ एक ओर सार्थक होता है तो कहीं कुछ चीजें सिर्फ फाइलों में कैद रह जा रही है। शिक्षा के स्तर और विद्यालय की व्यवस्थाओं को अप–टू–डेट करने और शिक्षक एवं अभिभावकों में बेहतर समन्वय बनाने में गुरूजनों की इच्छा नही, ग्राम शिक्षा समिति की बैठक कागजों पर निपटाया जा रहा है ओर कई गांव में तो बैठक ही नही होती। सर्व शिक्षा अभियान के तहत प्रयास हो रहा है कि प्राथमिक व उच्च प्राथमिक शिक्षा को शिक्षकों और अभिभावकों के प्रयास से बेहतर बनाया जाये, इसलिए प्रत्येक विद्यालय में ग्राम शिक्षा समिति का

गठन किया गया था अपेक्षा की गई थी कि शिक्षा का स्तर सुधारने के साथ व्यवस्था को दुरूस्त बनायेंगे लेकिन सिर्फ औपचारिकता कर कर्तव्य पूरा कर लिया जाता है। फलस्वरूप ग्रामीण शिक्षा का अभाव समाज का अभाव बन जाता हे। ग्रामीणों को शिक्षित बनाने में सरकार को प्रयासरत होना होगा, क्योंकि शिक्षा एक व्यक्ति को नहीं बल्कि समाज को शिक्षित करती है, शिक्षित समाज ही शिक्षित देश की आधारशिला है क्योंकि शिक्षा जीवनपर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है जो बच्चा समाज से ही सीखता है इसलिए सामाजिक वातावरण सामंजस्य पूर्ण, व्यवहारिक और विकास उन्मूख होना चाहिए। ग्रामीण व्यक्ति साक्षर का मतलब केवल हस्ताक्षर नहीं है उन्हें यह समझना होगा उनमें जागरूकता लानी होगी। साक्षरता के स्तर में वृद्धि से उच्च उत्पादकता बढ़ती है तथा अवसरों के सृजन से स्वास्थय में सुधार, सामाजिक विकास को प्रोत्साहन मिलता है।

ग्रामीण भारत में निवास करने वाली जनसंख्या का मुख्य कार्य कृषि कर्म है। अधिकांश शहरी आवश्यकताओं की पूर्ति गांवों द्वारा ही की जाती है। प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष दोनों रूपों में गांव राष्ट्र के विकास एवं प्रगति में अपना महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करते है। सम्पूर्ण देश में सभी प्रकार के खाद्यान्नों की आपूर्ति गांव ही करते है। ग्रामीण इलाकों में भी पढ़ने की लहर चल पड़ी है। बच्चे–बड़े सभी प्रौढ़–शिक्षा कार्यक्रमों से लाभान्वित हो रहे है।

समाज या राज्य अपना अधिकतम विकास करने में तभी सक्षम होगा, जब समाज का प्रत्येक व्यक्ति अपनी क्षमता में वृद्धि कर पाएगा अपनी इस क्षमता को हासिल करने के लिए व्यक्ति को शिक्षित होना होगा। "बच्चों को मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा अधिनियम 2009" के द्वारा राज्य शासन और स्थानीय निकायों को यह सुनिश्चित करने हेतु आदेश दिया गया है कि 6–14 वर्ष के आयु का प्रत्येक बच्चा कम से कम प्राथिमिक शिक्षा पूरी करे और निष्पक्षता एवं समानता के साथ शिक्षा प्रदान करना इसका मुख्य उद्देश्य है। यह सभी सम्भव है जब समाज शिक्षित होगा, तो वह अपने परिवार को भी शिक्षित करेगा।

राज्य का लक्ष्य न केवल साक्षर राज्य के रूप में बल्कि स्कूली समाज से परे शिक्षा के प्रति जागरूक समाज के रूप में शिक्षित राज्य होना चाहिए।

कुंजी पटल– अतिशयोक्ति, अंचलों, ऋग्वेद, प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष, निधि, निष्पक्षता।

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

- योजना, सितंबर 2013
- योजना, मार्च 2017
- https://en.m.wikipedia.ong
- www.jagran.com
- पाण्डेय, के0पी0 (2005) उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद।
- www.drishtiias.com

Current Scenario of Fiscal Policy of India: Achievements, Limitations and Suggested Reforms

Dr Anupreeta

Assistant Professor
V. V. PG Degree College
Shamli UP

Abstract

Fiscal policy had always been effective tools in the hands of modern day government to influence the size and components of national income, employment level, prices etc. For the developing countries major aim of the fiscal policy is to achieve economic development together with reducing the inequalities of income and wealth. Fiscal policy in India since very beginning focussed on promotion of capital formation and mobilisation of financial resources. Fiscal policy refers to the policy of government regarding taxation, public expenditure and public borrowing for the achievement of specific objectives. This article gives the details of the achievements of the fiscal policy in context of India. The article also discussed the limitations of the fiscal policy together with the suggested reforms.

Key words: Fiscal policy, Economic development, Taxation, Public expenditure, Public borrowings

Current Scenario of Fiscal Policy of India: Achievements, Limitations and Suggested Reforms

Introduction

In today's time, Government owes accountability to govern the country in an effective and efficient way. In this process of governance, certain expenditures are likely to incur like defence, maintenance of law and order, infrastructure facilities and development programmes. To meet out these expenditures Government formulates public expenditure programme and adopts taxation system to generate revenue. A budget is prepared by Government every year to manage public expenditure and revenue of the economy. A policy comprising all these components is called Fiscal Policy.

Meaning

Fiscal policy is a method by which a government balances its spending level and tax rates to monitor and influences a nation's economy. It is a economic measures through which government control its Public Expenditure, Public Revenue and Public

Debts. It is the supplement strategy to Monetary Policy through which a Central bank influences a nation's money supply.

According to **Arthur Smithies,** "Fiscal Policy refers to a policy under which the government uses its expenditure and revenue programmes to produce desirable effects and avoid undesirable effects on the national income, production and employment."

Therefore Fiscal Policy refers to the entire budgetary policy of the government. It also includes Public Borrowing and Deficit Financing. .

Achievements of Fiscal Policy in India

The following are some of the important achievements of the fiscal policy in context to economy of India.

Formation of Capital: Fiscal policy had played a vital role in raising the rate of capital formation of the country. It is equally useful in both sector public as well as private. In simple words Gross Capital Formation is Investment.

Rate of Gross Capita Formation is arrived as: $\frac{\text{Investment}}{\text{GDP}} * 100$

The GCF as percentage of GDP in India had increased from 10.2% in 1950-51 to 24.8% in 1997-98. GCF as percentage of GDP in India was reported at 32.75 % in 2015.

Mobilisation of Resources: Mobilisation of resources means freeing up of locked resources of the country. It is vital for growth and development of the country. The Fiscal policy of the country has been helpful in mobilising substantial amount of resources through taxation, public debt etc. in financing various developmental projects. The extent of resource mobilisation which was 70% in 1965-66 had increased to 95% in 2010-11.

Encouragement to Private Sector: Fiscal policy of the country helps the private sector by providing necessary inducements in form of tax concession, tax exemptions, tax holidays and so on. These inducements are incorporated in budget to provide adequate incentives to the private sectors engaged in heavy industry, infrastructure and software. Private sectors units are also encouraged by giving subsidies to setup in backward areas and export oriented units. Therefore encouragement to private sectors helps in maintaining balance in regional development and promoting export of the country.

Induce Savings: Various incentives had been given in the fiscal policy to increase the rate of savings both in household and corporate sectors. Tax exemption and rebate are being provided in opting and saving funds through fixed deposits, life insurance schemes, Kisan Vikas Patra, National Saving Certificate in household. For

encouragement in saving by corporate sectors tax concession and tax benefit are also offered to business units.

Gross household savings according to annual report of RBI for Financial Year 2015-16 was 18.7% of GDP.

Gross Domestic Savings = Gross Domestic Production – Final Consumption-Expenditure

According to World Bank GDS as percentage of GDP in India was reported as 30.43% in 2015 while it was 31.1% in 2014. However personal saving in India increased to 26099.21 INR Billion in 2016 from 25429.60 INR Billion in 2015.

The fiscal policy is to achieve economic development together with reducing the inequalities of income and wealth. Fiscal policy in India since very beginning focussed on promotion of capital formation and mobilisation of financial resources. Fiscal policy refers to the policy of government regarding taxation, public expenditure and public borrowing for the achievement of specific objectives.

Poverty Alleviation and Employment Generation: One of the major objectives of fiscal policy is to provide full employment. In order to fulfil this objective substantial amount of fund had been allocated through fiscal policy to reduce poverty and unemployment. Various schemes and programmes had been launched in budget to eradicate poverty and generate employment. For e.g. Twenty Point Programme, Integrated Rural Development Programme, Jawahar Roojgar Yojana, Pradhan Mantri Roojgar Yojana, Employee Assurance Scheme, Swarna Jayanti Shahari Roojgar Yojana and above all Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Act.

According to World Bank report in 2015, India's poverty rate for the period 2011-12 stood at 12.4% of the total population, or about 172 million people, a reduction from 29.8% in 2009. Unemployment rate in India decreases to 4.90% in 2013 from 5.20% in 2012. Unemployment rate in India averaged 7.32% from 1983 until 2013 reaching an all time high of 9.40% in 2009 and record low of 4.90% in 2013.

Reduction in Equality of Income and Wealth: Constant efforts had been made in our fiscal policy to reduce inequality of distribution of income and wealth in the country. Progressive rate of tax on income and wealth, corporate tax, capital gain together with grants, rebate and subsidies are making joint efforts to mobilise the resources from rich to poor and thus reducing inequality.

Export Promotion: Export of the country are promoted through various measure of fiscal policy such as subsidies, tax concession, tax holidays, tax

exemption. The grow rate of export had increased from 4.6% in 1960-61 to 10.4% in 1996-97 and 19.8% in April 2017 (24.6 Billion USD).

Shortcomings of Fiscal Policy

Fiscal policy of India suffers with some drawbacks which had prevented it from achieving the desired goals. Such drawbacks or shortcomings could be discussed under following headings:

Defective Tax Structure: Taxation is main source of revenue in the country. but our tax structure had been proved to be unsuitable as it had failed to raise the productivity of direct tax. Our tax system is not that elastic as it should be. It leads to tax evasion. Instances of tax evasion are increasing in the country leading to accumulation of black money in the economy. The country has been relying more on indirect tax which ultimately increases the burden of the poor.

Inflation: The fiscal policy of the country had failed to control the inflationary rise in price level. Policy of spending funds on non-development heads and relying on deficit financing and public debt had resultant into demand-pull inflation. On the other hand different kind of indirect tax on same product had increased price resulting in cost-pull inflation.

Red Tapism: Approval and implementation of fiscal policy measures is dependent on government. Lots of time is taken in approving as well as implementing any fiscal decisions. This delay may mitigate the impact of policy measure taken.

Negative Returns of Public Sector: Government is making huge investment in public sector. Inspite of that return on this investment is very low. May 2016, only 47 out of approx 2000 public companies that have reported their March quarter earnings, have earn quarter-on–quarter profit growth in the past four quarters.

Inadequate Statistics: For the formation of effective fiscal policy adequate and reliable data is needed from all over the country. Because of non-availability of accurate and adequate data, the measure of fiscal policy can neither be implemented nor can be judged properly.

Growing Inequality: The fiscal policy of the country had been failed to control growing inequality in the distribution of income and wealth. Inability to control tax evasion and high rate of indirect tax had affected the poor adversely.

Fiscal Policy for Limited Sector Only: Fiscal policy only affects few sector of the economy that too for monetary sectors. No effective fiscal policy is formed for non monetised sector of economy of developing country like India.

Suggestion for Reforms

Following are some reforms which are suggested for improvement in fiscal policies for developing countries in context to India:

Progressive Tax: The tax structure of the country must be progressive in nature so that burden may be put more on rich and less on poor. Necessary amendment must be made in this regard in various tax laws like Income Tax, Wealth Tax, Property Tax, etc.

Agriculture Tax: The tax law of the country should be extended to include agriculture from rich agriculturists. Tax on agriculture from upper income group farmers will also bring balance in tax structure of the country. It will reduce heavy dependence of tax revenue on indirect tax.

Reduction in Non Development Expenses: The fiscal policy should aim to reduce public expenditure especially in non development sector. The unproductive expenditure of the government must be identified and reduction effort must be made. Such reduction will also reduce the inflationary impact of such expenditure.

To Check the Black Money: The fiscal policy of the country must endure to check and reduce the black money circulating in the economy. Tax evasion, smuggling and other illegal monetary transaction must be curtailed down.

In November 2016, the Prime Minister, Shri. Narendra Modi announced demonetisation of currency notes of Rs 500 and Rs 1000 from the economy. Black money worth Rs 14,697 crore has been unearthed in the period of April to February 2016-17 against Rs 11,226 crore during the entire financial period of 2015-16. Black money worth Rs 5,400 crore was detected during tax raids from November 9, 2016 to January 10, 2017.

Raising the Profitability of Public Sector Units: The government through suitable fiscal policy; should try to restructure the management of Public Sector Enterprises. The efforts must be made to increase the efficiency and rate of return of capital invested. PSUs must be managed with specialists rather than with generalist with least government inference. Selection, appointed and training of personnel must be made on commercial lines.

Disinvestment in Public Sector Unit: India is plagued with inefficient public sector. Barring a very few, most of PSUs incurs heavy losses as compared with investment on them. It creates huge burden on the pockets of tax payers. Conceding the demands of privatisation and with tough resistance from labour unions, Government of India is slowly divesting from PSUs. In the Financial Year 2015-16 revised target of disinvestment was set at Rs 25,000 which was increased to 46,000 for year 2016-17.

Reduction of Pubic Debt: The fiscal policy should aim at reducing the public debt, internal as well as external. India recorded decrease in public debt in year 2016. Public debt was equivalent to 69.40% of GDP while it was 69.50% in 2015.

Reforms in Indirect Taxation: Fiscal policy of India had always incorporated reforms for indirect taxation. MODVAT was introduced to replace Central Excise Duty on certain items. Gradually it was extended to all commodities through Central Value Added Tax (CENVAT). Sales Tax was replaced by Value Added Tax. Goods and Services tax was introduced on July, 1 2017 in lieu of all indirect taxes payable on sale of goods and services. GST is so far the biggest tax reform in the country.

Fiscal Policy Review of Financial Year 2015-16

In 2015-16 the macroeconomic policy of the Government was aimed at building up on the reforms initiated in last year. The policy thrust was aimed at promoting growth revival as well as to foster a stable macroeconomic environment.

The Government had revised its expenditure policy to consolidate and focus on core developmental schemes. Simultaneously, measures were also taken to enhance the tax and non-tax revenues. The impact of twin measures both on macroeconomic and fiscal fronts had shown positive results. This is reflected by the higher trends of economic growth and stability along with an improved performance on all fiscal parameters.

Increase in GDP: The Indian economy as a consequence of series of measure has emerged as the fastest growing one amongst the large economies of the world. According to the advanced estimates of the Central Statistics Office, the growth in the GDP at constant market prices in 2015-16 is estimated at 7.6 per cent.

Reduction in structural Imbalances: The Government has taken proactive measures to reduce the existing structural imbalances both on the expenditure and the revenue fronts. On the expenditure side, measures were taken to enhance capital investments and control the growth in non-plan consumptive expenditure. On the receipts side also, measures were taken to enhance both the tax and non-tax revenues so as to counter balance the reduced share in the divisible pool of taxes.

Revised Expenditure Policy: The expenditure policy of the Government in 2015-16 reflects a continuance of the process of expenditure rationalization carried out with substantial correction on the revenue-capital expenditure imbalance. In budget of 2015-16, the total expenditure was estimated at 12.6 per cent of GDP compared to 13.3 per cent of GDP in 2014-15. The actual total expenditure has however been estimated to 13.2 per cent of GDP in 2015-16. However the actual increase in total expenditure over the budgeted estimates is only Rs.7,914 crore in nominal terms and 0.06 per cent as a ratio of GDP.

Improvement in Taxation Policy: In FY 2014-15, the gross tax to GDP ratio registered at 9.9 per cent, while in 2015-16 it was estimated at 10.3 per cent. The tax policy of 2015-16 was based on a more realistic growth estimation keeping in view

the lower tax buoyancy in the previous years. As the result the gross tax to GDP ratio was estimated to increase further to 10.8 per cent of GDP at the end of 2015-16. A substantial increase on the indirect taxes through excise duty helped in not only compensating for the lower direct taxes collections, but also a marginal over achievement on gross tax revenues

Non Tax Revenues: Budget 2015-16 provided for an increase of 12.1 per cent in the non-tax revenues over the actual of 2014-15. It was aided with certain policy actions like enhancement of dividend rates to 30 per cent for all public sector enterprises and higher than estimated receipts under the Economic services. As the result the non-tax revenues are estimated to increase by 16.6 per cent over the budgeted estimates in 2015-16.

Total Receipts: Due to higher growths in both tax and non-tax receipts, total revenue receipts of the Centre has been revised upward in RE 2015-16 showing an increase of 5.7 per cent over BE 2015-16.

Disinvestment: Receipts from disinvestment (including strategic disinvestment) of Government stake in PSUs however continued to be lower than the budgeted estimates. It was budgeted at`69,500 crore in 2015-16. However, due to highly uncertain market conditions prevalent for most part of the year, this target has been revised downwards to 25,000 crore.

To summarize, the fiscal policy of the Government in 2015-16 has shown visible positive results. The capital expenditure of the Government as a percentage of total expenditure and the tax-GDP ratio is likely to be the highest since 2007-08. The non-tax revenues have also increased substantially over the budgeted estimates. This fiscal policy of the Government has contributed to support the macroeconomic objectives of promoting growth and stability in the economy.

REFERENCES

- Fernando A.C., (2013) "Fiscal Policy In India", page 33-48, Third Impression Business Environment
- Singh R.K.& Sinha S. (2015) "Fiscal policy", page 14.1-14.9, Revised Edition Business Environment
- Sinha V.C., (2015) " Fiscal Policy of India", page 320-353, Revised Edition Business Environment

Sources

Economic Survey of 2015-16

पुस्तक समीक्षा

पुस्तक का नाम– कला के आंगन में
लेखिका– जूही
प्रकाशन– पंकज प्रकाशन प्रयाग
संस्करण– प्रथम संस्करण 2003
पुस्तक में अध्याय– 33 अध्याय पृष्ठ 93
E&mail:shikhakhare2000@rediffmail-com

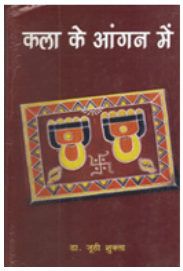

कला के आंगन में ३३. इस पुस्तक में शुरू से अंत तक नाना प्रकार की कलाओं एवं तत्संबंधित सम्वेदनाओं को डॉक्टर जूही ने बहुत ही सरल भाषा में परंतु गहराई से प्रस्तुत किया है। यह पुस्तक लेखकारों की संक्षिप्त जीवनी व उनके कला के प्रति प्रेम को दर्शाती है।

प्रस्तुत पुस्तक के प्रथम अध्याय में 'नीले आकाश में तैरते हिमखंड' में निकोलस रोरिक को शांति संवाहक के रूप में प्रस्तुत किया गया है तो द्वितीय अध्याय 'महादाणे और उनका रचना संसार' में शांताराम विनायक महादाणे जी को प्रकृति के सौंदर्य के पुजारी के रुप में प्रस्तुत कर, परिचय कराया गया है इन्हें बहुत अच्छे इंसान की संज्ञा भी दी गई। तृतीय अध्याय 'सूक्ष्म रूप में अभी भी जीवित है प्रोफेसर धीर' में प्रोफेसर रघुवीर सेन धीर को बंगाल शैली के वाश विधा में कार्य करने वाले प्रदेश की आखिरी पीढ़ी का कलाकार बताया गया है। अध्याय चार 'आकर्षण नहीं स्नेह में' जहां मकबूल फिदा हुसैन को 'स्टंट' करते हुए जानते थे यह जानकर स्तब्ध रह गए कि उनका जीवन कितना संघर्षमय था, शुरुआती जीवन में उन्होंने सिनेमा के पोस्टर तथा होर्डिंग बनाकर अपनी जीविका चलाई थी। अध्याय पांच 'लोक कला का जीवंत और सशक्त प्रेरणा स्रोत 'फ्लोर डेकोरेशन' में बताया गया कि किस तरह तमाम विवादों से बचने के लिए अल्पना व रंगोली का स्थान फ्लोर डेकोरेशन ने ले लिया है। छठे अध्याय 'चित्रकला एवं छायाचित्र में पोट्रेट' में लेखिका ने बताया कि किस प्रकार हाथ से पोट्रेट बनाने का स्थान डिजिटल कैमरे ने ले लिया। 'इसी प्रकार कविताओं की भाषा को आकार देती एक प्रदर्शनी' तथा 'इंस्टालेशन – ऐसा मंच जहां नाटक नहीं खेला जाना है' नामक नवें व दसवें अध्याय में लेखिका द्वारा यह बताने की कोशिश की गई कि किस प्रकार इंस्टालेशन विधि उपजी और 90 के दशक में 'त्रिनाले' कला प्रदर्शनी में मुख्य आकर्षण रही तथा आज भी कई घरों के कमरे की शोभा बढ़ा रही है।

'चित्र कला में ऑन द स्पॉट' नामक ग्यारहवें अध्याय में विभिन्न चित्रकारों में मतभेद को दर्शाया गया है।

बारहवें अध्याय 'चित्रकला प्रतियोगिता और प्रशासन' में लेखिका ने कला के प्रति रूखे प्रदर्शन को लोगों के लिए लज्जा का विषय बताया। इसी प्रकार 13 वां अध्याय 'चित्रकला में निरर्थकता की खोज' में जहां उन्होंने कला को न समझ पाने वालों पर दुख व्यक्त किया वही 14 वें अध्याय 'कला रसास्वादन कैसे संभव है?' में उन्होंने बताया कि कला को अनुभूति द्वारा महसूस किया जा सकता है 15वें अध्याय 'उत्तरोत्तर रेखा प्रधान होता रचना चक्र' में बताया गया कि श्री रविंद्र नाथ टैगोर, जे0 स्वामीनाथन, शमशेर बहादुर या जगदीश गुप्त आदि ने कैसे अपने अद्भुत रचनात्मक कौशल से असुंदर मानी जाने वाली कलाकृतियों को भी सम्मान दिलवाया। 'कापते सुरो का निष्कंप गायक' नामक 16 अध्याय में डॉक्टर भूपेन हजारिका के बारे में रेखांकित किया गया कि वह 10 वर्ष की आयु में ही गाना गाने वाले कलकत्ता के सबसे छोटे गायक थे जिन्हें आर्थिक तंगी दूर करने के लिए गाने गा कर पैसे कमाने पडते थे। 17 वें अध्याय 'कला दीर्घाओ का सच और कला लेखन' में लेखिका ने बताने की कोशिश की है कि किस तरह बगैर तथ्यों तक पहुंचे लोग कलाकारों पर टिप्पणी कर देते हैं। 'आर्टिस्ट कैंप प्रतियोगिताओं से बेहतर' नामक 18वें अध्याय में उन्होंने चित्रकला शिविर के महत्व पर प्रकाश डालने की कोशिश की। 19 वा अध्याय 'शीला– पैरों ने पकड़ी तूलिका, अध्याय पढ़ते ही जीवन जीने की प्रेरणा दे जाता है। शीला जो कि एक दुर्घटना में अपने दोनों हाथ खो चुकी थी फिर भी जीने की अदम्य शक्ति के कारण उसने अपने पैरों को ही अपना हाथ मान लिया। 'क्या है इटालियन फ्रेस्को म्यूरल' तथा 'जयपुर फ्रेस्को या भित्ति चित्रण की राजस्थानी विधि' नामक 20 वें तथा 21 वें अध्याय में बताया गया है किस प्रकार भित्तिचित्रों की प्राचीन विधि फ्रेस्को विधि से अलग है और यह फ्रेस्को किस प्रकार से बनाए जाते हैं।

'कतरनों में आकार लेती अनुभूतियां' नामक 22 वें अध्याय में 'स्पेनी चित्रकार पिकासो ने किस प्रकार द्वितीय विश्वयुद्ध की विभीषिका को चित्र के माध्यम से दिखाने में कामयाब हुई थी। 23 वें अध्याय 'छाया कला और सुरेश कुमार के चित्र' में डॉक्टर जूही ने यह दर्शाने की कोशिश की है कि किस प्रकार छाया चित्रों के सम्मोहन से कोई भी चित्रकार नहीं बच सका। 'संस्कृत बनाम संस्कृति' व 'बच्चों में संस्कार' नामक 24वें व 25वें अध्याय में इस बात पर प्रकाश डालने की कोशिश की गई है कि बच्चों को संस्कृत पढ़ाना हमारा कर्तव्य नहीं है वरन् उनमें संस्कार डालना भी हमारा कर्तव्य है। 26 वें अध्याय 'मोहल्ला संस्कृति से देशव्यापी होता हुआ हुड़दंग, में डॉक्टर जूही ने यह बताना चाहा है कि किस प्रकार होली के अवसर पर आयोजित होने वाला इलाहाबादी हास्य कवि सम्मेलन जिसे हुड़दंग के नाम से भी जाना जाता है वर्ष भर की दूरी को पलभर में समाप्त कर देता है। 'अमृता, अवसाद और उत्तर प्रदेश' नामक 27 वें अध्याय में यह बताने का प्रयास किया गया है कि जो कुछ भी चित्र, पेंटिंग के माध्यम से हम देखते हैं वह सही ही हो ऐसा नहीं है कई बार बाह्य और अंतर में जमीन आसमान का फर्क होता है, जो

अमृता शेरगिल के कलाओ व जीवनी से स्पष्ट होता है। 'चित्रकला में न्यूड' नामक 28वें अध्याय में डॉक्टर जूही ने यह बताने का प्रयत्न किया है कि किस प्रकार न्यूड चित्रकला प्राचीन काल से वर्तमान तक विद्यमान है बस बदले हैं तो विचार। 'खामोशी से खामोश हो गई' नामक 29वें अध्याय में कोलाज पेंटर सालेहा फातिमा काजमी की जिंदा दिली को सलाम किया गया वही 'नारी मन की चितेरी' नामक 30वें अध्याय में जानवी के आत्ममंथन व अध्यात्म से भरी कविताएं व चित्र भी आकर्षण रहे। 'टेंपरा– जलरंग चित्रण की भारतीय विधि, नामक 31वें अध्याय में लेखिका ने बताया कि किसलिए जलरंग विधाओं में टेंपरा को पसंद किया गया और यह आज भी पोस्टर कलर के नाम से बाजार में उपलब्ध है। 32वें अध्याय 'प्रयाग के गौरव दास शिल्पी' में जितेंद्र नाथ मजूमदार की भावुक कृतियों का भी अंकन किया गया है परंतु आखिरी अध्याय में 'चित्रकार उपेक्षित क्यों?' पढ़कर मन अचानक ही विचलित हो जाता है। डॉक्टर जूही ने सही ही कहा था कि बाह्य कलाकृतियों को देखने मात्र से कृतिकार के संपूर्ण व्यक्तित्व को नहीं आंका जा सकता है। अंतिम अध्याय में यही बताने का प्रयास किया गया कि किस प्रकार कोई भी कलाकार या रचनाकार संघर्ष के दौर से गुजर कर महान कलाकार या रचनाकार बनता है फिर भी वह उपेक्षित हो रहा है जो वास्तव में चिंता का विषय है।

कला के आंगन में ३३ उन कलाकारों को जिन्हें हम केवल अखबारों में पढ़ते हैं या पोस्टर, TV, आदि पर देखते हैं उन्हें करीब से जानने का अवसर प्रदान करता है साथ ही विभिन्न कलाओं जैसे फ्लोर डेकोरेशन, पोट्रेट, लोककला, इंस्टालेशन, ऑन द स्पॉट चित्रकला, इटालियन फ्रेस्को, भित्ति चित्रण, टेंपरा आदि से साधारण जनता को परिचित कराता है।

सारांश स्वरूप यदि कहा जाए तो, जहां लेखिका ने विभिन्न चित्रकारों के व्यक्तित्व, उनकी अभिलाषाओं, विचारों को समेटते हुए विभिन्न लोक संस्कृति व कलाओं से पाठकों को जोड़ा है वही चित्रकला के प्रतियोगिताओं एवं प्रशासन की जिम्मेदारी के प्रति अपना रोष भी प्रकट किया है। प्रस्तुत पुस्तक मे लेखिका ने सहज, सुबोध व प्रवाहमई भाषा का प्रयोग किया है जिससे एक आम व्यक्ति भी जो कलाकार नहीं है वह इस पुस्तक को पढ़ने के बाद कला के विभिन्न आयामों से बहुत हद तक परिचित हो जाता है अतः विभिन्न कलाओं के ज्ञान से साधारण जनता को अवगत कराने में यह पुस्तक सक्षम है इसके लिए वास्तव में डॉक्टर जूही शुक्ला बधाई की पात्र है।

पुस्तक समीक्षिका
शिखा खरे (समन्वयक गृह विज्ञान विभाग)
नेहरू ग्राम भारती डीम्ड टू बी यूनिवर्सिटी,
इलाहाबाद